समझता हूं और उसे इस सारी सम्पत्ति के अर्जन करने में सहायक समझ, यह बात उसकी शुद्ध वृत्तियों पर छोड़ता हूं कि वह अपनी मां एवं विधवा बहिन सदारानी के निर्वाह का प्रबन्ध करता रहे।"

रामकुमार को तथा गोपालकुमार का इस इच्छापत्र के असली होने पर किंचित्-मात्र भी विश्वास न था। गोपाल और राम दोनों ने राय की थी। गोपाल का तो स्पष्ट कथन था, "मैं इस इच्छापत्र के असली होने को चुनौती दूंगा।" इसपर भी उसने अपने वकील भाई को अपना सब रहस्य बताया नहीं। वकील भी इसको चुनौती तो देना चाहता था, मगर वह चाहता था कि परिवार के सब सदस्य मिलकर झगड़ा करें तो कदाचित् यह इच्छापत्र रद्द हो सके। अन्यथा इसपर वह अपने पिता के हस्ताक्षर देख आया था और उसको वह अपने पास पिता के एक लिखित पत्र के हस्ताक्षरों से मिलान कर चुका था। उसका ज्ञान यह कहता था कि इच्छापत्र स्वीकृत होगा। भले ही इसके लिए शिवकुमार को उच्च न्यायालय तक जाना पड़े। इससे वह परिवार के सब सम्भव उतराधिकारियों को इच्छापत्र के स्वीकार किए जाने में बाधक बनवाना चाहता था। इससे वह अधिक से अधिक अपने बड़े भाई से जितना ऐंठ सके, ऐंठ लेने की आशा करता था। वह न्यायालय में, सबकी वकालत बिना एक भी पैसा लिए, करने को तैयार था।

इसलिए वह महेश से मिला था। उसने तो स्पष्ट कह दिया, "मैंने इस सम्पत्ति के अर्जन में कुछ अधिक सहयोग नहीं दिया, इस कारण मैं उसमें एक पैसे का भी स्वामी नहीं हूं।"

"परन्तु तुम बाप के बेटे तो हो।"

"केवल माता-पिता की सन्तान होना इस बात का सूचक नहीं कि मैं पिता के गाढ़े पसीने की कमाई का भागीदार बन सकूं। मैं दस वर्ष की आयु में घर से भाग गया था और लाख प्रयत्न करने पर भी निर्वाह से अधिक उपलब्ध नहीं कर सका। बस, जीवन में मां ही एक ऐसी वस्तु मिली है जिसको मैं अपनी सम्पत्ति कह सकता हूं।"

राम ने समझा कि यह बुद्धिहीन व्यक्ति है और यही कारण है कि वह जीवन में उन्नति नहीं कर सका। उसे छोड़, वह पेशकार भाई गोपालकुमार से मिला। उसको मुकद्दमा लड़ने के हेतु तैयार, परन्तु बिना किसीकी सहायता के, देख प्रसन्न ता हुआ, परन्तु उसने न तो राम को अपना वकील बनाने का यत्न किया, न ही

उसने उसको बताया कि किस प्रकार वह उपस्थित इच्छापत्र को गलत सिद्ध कर सकेगा।

वह अब मां से मिलने आया था। मां को अपनी अवस्था से सन्तुष्ट देख,उसने उसके मन में भय उत्पन्न करने का यत्न किया। उसने क: दिया, "मां ! भूखी मर जाओगी।"

"बेटा," मां का निश्चित उत्तर था, "मेरी आयु अस्सी वर्ष की है। तुम्हारे पिता चले गए और मैं भी जाने को तैयार बैठी हूं। बीमार पड़कर मरने से भूखे रहकर मरना सुगम होगा। इस कारण मुझको इसका शोक नहीं होगा। बेटा, मैं मुकद्दमा नहीं करूंगी।"

"पर मां ! मेरे लिए ही कर दो।"

"मैंने शिवकुमार से कहा था। उसने यह कहा कि पहले तुम सब लोग पिता जी के लिखे पर फूल चढ़ाओ, उपरान्त मैं सबको कुछ न कुछ पिता जी की सम्पत्ति में से प्रसाद के रूप में दे दूंगा।"

वकील इस प्रकार की अनिश्चित बातों से संतोष अनुभव नहीं करता था। इस कारण वह अपनी बहन सदारानी के पास जा पहुंचा। सदारानी राम से दो वर्ष बड़ी थी। वह बालविधवा थी और जब से विधवा हुई थी, अपने पिता के ही घर में रहती थी। लाला सुलक्षणमल के गृह में दो कक्ष थे। एक में शिवकुमार रहता था। उसका अपना लड़का निरंजन तो पृथक् गृह में रहता था। शिवकुमार की दो लड़कियां थीं। एवं दोनों का विवाह हो चुका था और वे अपने-अपने पतियों के घर में रहती थीं। शिवकुमार गृह के इस कक्ष में अकेला अपनी पत्नी के साथ निवास करता था। गृह के दूसरे कक्ष में सुलक्षणमल स्वयं रहता था और उसके साथ उसकी विधवा लड़की सदारानी रहती थी। अब सुलक्षणमल के देहान्त पर गृह के इस कक्ष में मां एवं बेटी दो औरतें ही रह गई थीं। दोनों ने एक विधवा ब्राह्मणी को नौकरानी रख लिया था। वह उनका चौका-बासन कर देती थी, इनके कपड़े धो देती थी और कभी-कभी बाजार जाएं तो साथ चली जाया ती थी।

ही मेराम ने सदारानी से जाकर कहा, "बहिन! शिवकुमार की नीयत ठीक मालूम मेरा देती।"

है।" क्यों ? क्या किया है उसने ?"

"उसने यह इच्छापत्र जाली वना न्यायालय में उपस्थित कर दिया है। पिता जी तो तुमपर वहुत दयालु थे और इसमें तुम्हारा कुछ भी उल्लेख नहीं है,।"

"किया तो है। उन्होंने शिव दादा को आदेश दे दिया है कि मेरा ध्यान रखें। और मुझको क्या चाहिए!"

"मगर वहिन, यह इच्छापत्र झूठा है।"

"तो मुझको क्या! तुम भाई-भाई जानो और समझो। मैं तो, तुममें से कोई भी मालिक वने, अपने निर्वाह-हेतु पा लूंगी।"

निराश राम अपने घर लौट गया। जव से उसने वकालत का कार्य आरम्भ किया था, वह एक पृथक् गृह में निवास करता था। वह अपने घर गया तो उसकी पत्नी रोहिणी एवं पेशकार दादा की पत्नी रुक्मिणी वैठी वार्तालाप कर रही थीं।

"भाभी!" राम ने पेशकार की पत्नी को सम्वोधन कर कहा, "भैया ने तो सव गुड़ गोवर कर दिया है!"

"क्या गुड़ गोवर कर दिया है?" रुक्मिणी ने पूछ लिया।

"मैं वड़े दादा को इस झूठ और फरेव की शिक्षा देना चाहता था। मगर कोई सहयोग नहीं देता।"

"उनके सहयोग से कुछ वनने वाला है?"

"हां। वे सवजज साहव के न्यायालय में पेशकार हैं। यदि वे तनिक संकेत-मात्र कर दें तो दादा को नानी याद आ जाए। मैं वकील हूं। वे जज साहव की कुर्सी से कुर्सी लगाकर वैठने वाले। मैं मुकदमा लड़ता और वे जज साहव की ओर तनिक मुस्कराकर देख देते तो वस काम वन जाता।"

"परन्तु भैया, तुम करना क्या चाहते हो?"

"मैं शिव दादा वाला इच्छापत्र झूठा सिद्ध कर देना चाहता हूं।"

"कैसे?"

"हस्ताक्षर पहचानने वाले की साक्षी दिलवाकर।"

"तव क्या होगा?"

"हम चारों भाई वरावर-वरावर के भागीदार वन जाते।"

"यह आप कर नहीं सकते। यही तो तुम्हारे भैया कह रहे हैं। वे इसी वात को अपने ढंग से करने वाले हैं।"

"उनका क्या ढंग है ?"

"वे बता नहीं रहे। परन्तु मुझको उनपर विश्वास है, वे अवश्य सफल हो जाएंगे।"

"मगर उनके उपाय से मुझको भी कुछ मिलेगा क्या ?"

"यह तो वे ही बता सकते हैं।"

वकील राम को कुछ धैर्य हुआ। परन्तु उसका चित्त पूर्णरूप से शान्त नहीं हुआ। वह समझता था कि यदि गोपाल की योजना से उसको भी लाभ होना होता तो वह अवश्य ही उसको विश्वास में ले लेता।

इससे वह चुपचाप मुकदमे की तिथि की प्रतीक्षा करने लगा।

२

लाला सुलक्षणमल की एक लड़की थी गौरी। उसके घर वाले का नाम था गोवर्धनलाल। वह डिप्टी कमिश्नर के दफ्तर में एक साधारण क्लर्क था। युवावस्था में वह बहुत 'राशी' समझा जाता था। किसीका कार्य बिना घूस लिए नहीं करता था और घूस से कुछ भी कार्य सरलता से कर देता था। परन्तु ज्यों-ज्यों उसकी अवस्था बड़ी होती गई और उसके घर में कोई सन्तान उत्पन्न न हुई तो उसके मन में भय समाने लगा। वह दान-दक्षिणा तथा पूजा-पाठ करने लगा।

इसपर भी कुछ न बना तो उसने घूस लेना छोड़ दिया। फिर इससे भी एक पग आगे की ओर बढ़ा। वह अपने बस का कार्य बिना कुछ लिए-दिए करने लगा। अब एक अन्तिम पग उठाने का विचार कर रहा था। वह था—सब कुछ त्याग, संन्यास धारण कर, हरिद्वार में जाकर भगवद्भजन में लीन हो जाना। यदि इसमें कुछ बाधा थी तो वह गौरी थी। गौरी अपने पति के साथ जाना चाहती थी, परन्तु पत्नी के साथ संन्यास नहीं ग्रहण किया जा सकता था।

लाला सुलक्षणमल को मरने से पूर्व गोवर्धन की इस अवस्था का ज्ञान था। अतः देहावसान से एक दिन पूर्व उन्होंने गोवर्धन को बुलाया था एवं कक्ष को बन्द कर उससे कुछ बातें की थीं। उसने वह कही बात लाला जी के लड़कों को नहीं बताई थी। चारों भाई गोवर्धन को मूर्ख मानते थे और लाला जी के क्रिया-कर्म हो जाने पर उन्होंने उससे बात तक नहीं की थी।

अन्य सम्बन्धियों की भांति उसको भी नोटिस आया था कि शिवकुमार ने एक इच्छापत्र दाखिल किया है। यदि उसको उसमें कुछ आपत्ति हो तो अमुक तिथि को न्यायालय में आकर उपस्थित करे। उसने घर आकर अपनी पत्नी को बताया, "गौरी ! एक अदालती नोटिस आया है ।"

"क्या आया है ?"

"यही कि शिवकुमार ने लाला जी का इच्छापत्र दाखिल करा दिया है।"

"तो ठीक है।" गौरी ने आसक्ति का भाव प्रकट करते हुए कह दिया।

"परन्तु लाला जी ने कहा था कि उनको शिवकुमार पर विश्वास नहीं है। इसी कारण उन्होंने इच्छापत्र रजिस्टर्ड करा दिया है।"

"तो क्या यह इच्छापत्र रजिस्टर्ड नहीं है ?" गौरी ने पूछा।

"नोटिस में इस विषय पर कुछ लिखा नहीं।"

"तो आप उस इच्छापत्र की, जो दाखिल किया गया है, प्रतिलिपि नहीं ले सकते ?"

"ले सकता हूं। पर मैं सोचता हूं कि मैं क्यों इस झंझट में पड़ूं ? मुझको तो कुछ लेना-देना नहीं।"

"देखिए जी ! हमने ठाकुर जी के सम्मुख सौगन्ध ली हुई है कि हम यथा-सम्भव लोक-कल्याण के हेतु प्रयत्नशील रहेंगे। भगवान ने कहा है :

तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर।

परमात्मा के निमित्त हम कर्म करेंगे, तो हमारे लिए क्यों का तो कुछ प्रयोजन ही नहीं रह जाता।"

गोवर्धनलाल विचार करने लगा। उसने कहा, "पहले मैं यह विचार करता हूं कि शिवकुमार ने ठीक इच्छापत्र ही न्यायालय में दिया होगा। उसको तो विदित होगा कि कोई ऐसा इच्छापत्र है। इसपर भी यदि यह इच्छापत्र असली नहीं, तो इस इच्छापत्र में लाला जी ने अपने पुत्रों के साथ न्याय किया है अथवा किसी दूसरे में—यह कैसे जान सकता हूं। अपने लिए तो मेरे मन में यह विचार आया था कि मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं।"

"हमारा सम्बन्ध तो परमात्मा से है। लाला जी ने यदि आपको, सब परिवार-वालों से पृथक् बुलाकर, यह न कहा होता, तो शिव दादा पर सन्देह करने में कोई कारण नहीं था। मगर जब आप कहते हैं कि उन्होंने कहा था कि उनको

शिव पर विश्वास नहीं तो फिर अपने मन का संशय दूर कर लेना चाहिए।"

अगले दिन गोवर्धनलाल ने न्यायालय में उस इच्छापत्र की नकल के लिए प्रार्थना कर दी।

यद्यपि उस इच्छापत्र में पूर्ण सम्पत्ति पर शिवकुमार का अधिकार माना गया था और वह रजिस्टर्ड नहीं था तो भी गोवर्धनलाल को उसमें कोई अनौचित्य प्रतीत नहीं हुआ। वह जानता था कि शिवकुमार ही इस सम्पत्ति के निर्माण में पिता का सहायक रहा है। इससे उसके हृदय में अपने उस ज्ञान को प्रयोग करने के लिए उत्साह नहीं था, जो लाला जी के देहावसान से एक दिन पूर्व, पृथक् के वार्तालाप में प्राप्त हुआ था। वह सायंकाल घर आया तो उसने अपनी पत्नी गौरी को पूर्ण परिस्थिति से अवगत करा दिया। साथ ही उसने अपने मौन रहने का कारण भी बता दिया।

गौरी अपने पति के इस निर्णय से संतुष्ट नहीं थी। उसने कहा, "शिव ने यह झूठा लेख उपस्थित किया है। कोई झूठ व्यर्थ नहीं बोलता। इससे यह सिद्ध होता है कि उसने किसी दूसरे का अधिकार छीना है।"

"तो तुम समझती हो कि एक बूढ़ा आदमी कुछ लिख गया और वह किसी-के अधिकार का प्रमाण हो गया?"

"एक तो यह बात कि हम जानते नहीं कि किसका अधिकार शिव ने हरण किया है, वह शिव से अधिक उपयुक्त अधिकारी हो सकता है? दूसरे यह कि हम कौन हैं किसीके निर्णय को बदलने वाले। पिता जी अधिकारी थे एवं उनका लिखा मान्य होना चाहिए।"

"गौरी! इस बात में तो मुझको संशय हो गया है कि पिता जी कैसे अधिकारी थे। सम्पत्ति-निर्माण में तो शिव उनका सहायक रहा है। अतः शिव भी उस सम्पत्ति को वितरण करने का उतना ही अधिकारी है जितना लाला जी थे। साथ ही सम्पत्ति तो ईश्वर की देन है। यह किसीके एकाधिकार में मान लेना तो ठीक
आदा...

इतने दि... री हंस पड़ी। वह जानती थी कि युक्ति करने में उसके पति सदा दुर्बल रहे
"दे... समय था कि वे घूस लेने को उचित समझते थे और सदैव अपने इस
ही में आप... सिद्ध करने में युक्ति दिया करते थे। उनका कथन होता था—'इस
मेरा कहा मे... ने वाले ने भी तो बेईमानी से धन कमाया है। अतः बेईमानी की
है।" इतना क...

कमाई को वेईमानी से लेने में क्या हानि हो सकती है ? लाभ तो होता ही है।' गौरी ने वहुत यत्न से समझाया था कि पाप एवं पुण्य अपनी-अपनी करनी के फल होते हैं। किसी दूसरे का पाप अपने पाप के औचित्य को सिद्ध नहीं कर सकता। उपरान्त गोवर्धनलाल ने घूस लेना त्याग दिया। साथ ही लोगों के उचित कार्य करने भी त्याग दिए। इसमें वह युक्ति यह करता था कि वह इस कार्य के हेतु नियुक्त नहीं। इस समय भी गौरी ने उसकी युक्ति के मिथ्यात्व को समझाया था। गौरी का कथन था—"मानव-जन्म ही नेक एवं भले कार्य करने के हेतु हुआ है। जव हमको विश्वास हो जाए कि अमुक कार्य ठीक है तो उसको करना ही चाहिए। शासन से पूर्व परमात्मा ने हमको नेक कार्य करने के हेतु नियुक्त किया है।" वह इसमें प्रमाण भी दे देती थी। वह कहती थी :

सह यज्ञः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्ट कामधुक्॥[1]

यदि परमात्मा द्वारा नियुक्त कार्य को करते हुए यह मनुष्यकृत नौकरी चली जाए तो क्या हानि है ?"

इस प्रकार गौरी जानती थी कि उसका पति युक्ति ठीक नहीं कर सकता। अतः उसने पूर्ववत् उसको समझाना आरम्भ कर दिया। उसने कहा, "स्वामिन्, भगवान ने यह धन-सम्पदा पिता जी को दी थी। इससे यही प्रतीत होता है कि उसने उनको इसके वितरण का अधिकार भी दिया था। देखने की वात तो केवल यह है कि क्या पिता जी ने परमात्मा का आदेश कि उसके द्वारा दी गई सम्पत्ति को प्रथम यज्ञरूप में एवं उपरान्त अपने प्रयोग में लिया है अथवा नहीं। भगवान का आदेश तो यह है :

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्॥"[2]

"परन्तु देवी ! कैसे पता चले कि लाला जी का दूसरा इच्छापत्र पहले से

---

१. परमात्मा ने सृष्टि की रचना करते समय प्रजा एवं यज्ञ का साथ-साथ निर्माण किया था। परमात्मा का प्रजा के लिए आदेश था कि वे इस यज्ञ द्वारा ही वृद्धि को प्राप्त होवें एवं यज्ञ उनकी कामनाओं का पूर्ण करनेवाला हो।

२. जो व्यक्ति अपनी कमाई को यज्ञ-कार्य में व्यय कर देता है और यज्ञ-कार्य से बचे हुए को ही अपने प्रयोग में लाता है वह सब पापों से मुक्त होता है।

"इसका अर्थ यह नहीं निकलता। यह भी सम्भव है कि तुम्हारे वाला इच्छा-पत्र पूर्व का लिखा हो और रजिस्टर्ड पीछे वाला हो।"

"जी नहीं। यह रजिस्टर्ड पूर्व का है एवं यह तो उन्होंने देहावसान से एक सप्ताह पूर्व अपने रुग्णागार में बैठ लिखाया था। इसके साक्षी हैं। इसका लिखने वाला भी है।"

इस रहस्योद्घाटन से तो गोवर्धनलाल भौचक्का हो, मुख देखता रह गया। कुछ देर विचारकर उसने कहा, "तो ठीक है। शिवकुमार, तुम वे सब प्रमाण न्यायालय में उपस्थित करना। मुझको तुम्हारे यह सिद्ध करने पर कोई नाराजगी नहीं होगी।"

"मैं यह कहने आया हूं कि आप मेरे वकील के कहे अनुसार अपने बयान दे दें। आपका और गौरी का वह भाग, जो रजिस्टर्ड इच्छापत्र के अनुसार बनेगा, मैं दे दूंगा। नहीं तो यह मुकदमा चलेगा और कदाचित् कई वर्ष तक चलेगा।"

"देखो शिवकुमार! मैं इसमें से कुछ भी ग्रहण नहीं करना चाहता। मैं बयान तो वही दूंगा जो सत्य है। शेष रही बात मुकदमे की, मुझको कुछ भी अफसोस नहीं होगा यदि तुम जीत जाओगे। एक बात और बता दूं। यदि यह मन्दिर बनवाने की इच्छा लाला जी की न होती तो मैं तुम्हारी बात स्वीकार कर लेता।"

"कितना रुपया मन्दिर के हेतु चाहते हो?"

"जितना इच्छापत्र के अनुसार बनता है। मैं सम्पत्ति का मूल्य नहीं जानता। तुमको मुझसे अधिक ज्ञात होना चाहिए।"

"उसको छोड़ो। मैं एक लाख रुपया सत्यनारायण के मन्दिर के लिए दे दूंगा। मैं मुकदमे से बचना चाहता हूं।"

"इस तरह नहीं। तुम सम्पूर्ण सम्पत्ति की सूची एवं मूल्य लगाकर ले आओ। उसका चालीस प्रतिशत मन्दिर के लिए दे जाओ तो मैं लाला जी की सम्पत्ति का आदाता नहीं बनूंगा। अभी न्यायालय में उपस्थित होने को दस दिन शेष हैं। तुम इतने दिन मन में सोच लो। पांच-छः दिन में अपनी इच्छा को व्यक्त कर जाना।"

"देखो बहिन गौरी! भाई-बहिन में मुकदमेबाजी ठीक नहीं होगी। साथ में आपका दिवाला पिटवा दूंगा। मुझको तो कुछ पता भी नहीं चलेगा। यदि [illegible] कहा मानो तो तुम्हारा एवं जीजा जी महाराज का भाग घर बैठे मिल सकता [illegible]" इतना कह शिवकुमार चला गया। उसके चले जाने के उपरान्त गौरी ने

मुस्कराते हुए पूछा, "अब क्या करना चाहिए ?"

"देखो देवी ! बिना मुकदमे के एक लाख मन्दिर के लिए और दो प्रतिशत तुमको तथा चार प्रतिशत मुझको अर्थात् हम दोनों को सम्पूर्ण सम्पत्ति का छः प्रतिशत मिल जाएगा। मेरा अनुमान है कि दो-अढ़ाई लाख के लगभग हो जाएगा। यदि तुम कहो तो मैं शिवकुमार की बात मान जाता हूं और रुपया लेकर कल ही नौकरी छोड़, हरिद्वार चलकर अपने पापों के प्रायश्चित्त के हेतु जप-ध्यान करना आरम्भ कर दूं।"

गौरी समझ रही थी कि उसका पति पुनः अपने कर्तव्य से च्युत होने जा रहा है। उसने पुनः उससे युक्ति करनी आरम्भ कर दी। गौरी का कथन था, "मैं सोचती हूं कि सत्य क्या है, पहले इसका निश्चय होना चाहिए। यदि शिवकुमार के कहे अनुसार उस द्वारा उपस्थित इच्छापत्र ठीक है तो हमको मान जाना चाहिए।"

"देखो गौरी ! शिवकुमार झूठा है। वह कह गया है कि लाला जी ने यह इच्छापत्र देहावसान से एक सप्ताह पूर्व लिखा है, परन्तु मैं जानता हूं कि मरने से एक दिन पूर्व उन्होंने कहा था कि उनका इच्छापत्र रजिस्टर्ड हो चुका है। मुझको उन्होंने यह बात इस कारण बताई प्रतीत होती है कि मैं उस इच्छापत्र में आदाता नियुक्त किया गया था। मुझको विश्वास है कि वह दो-अढ़ाई लाख की सम्पत्ति मुझको और तुमको मुफ्त में नहीं दे रहा। अवश्य वह बेईमान है एवं पूर्ण सम्पत्ति हज़म करने के लिए हमको यह घूस दी जा रही है। परन्तु मैं तो यह कहता हूं कि हम शिवकुमार से मुकदमा लड़ सकेंगे क्या ?"

"हम एक बात कर सकते हैं। वह यह कि हमें घूस लेनी नहीं। यह हमने अपने देवता के समक्ष प्रण किया हुआ है। हमें अपनी बात न्यायालय में सत्य-सत्य कह देनी है। हमारे पास रुपया है नहीं, इस कारण हम व्यय करेंगे नहीं। स्वयं उपस्थित होकर अपनी बात कह देंगे। इसपर भी निर्णय यदि असत्य के पक्ष में होता है तो पाप हमारे सिर पर नहीं होगा।"

गोवर्धन हंस पड़ा। हंसते हुए उसने कहा, "मैं न्यायालय में प्रतिदिन सत्य को असत्य होते देखता हूं। किसका पाप किसको लगता है !"

"आज आप धन के लोभ में उल्टी युक्तियां करने लगे हैं। मैं समझती हूं कि कल पूजा के उपरान्त बात करेंगे।"

३

दो दिन तक शिवकुमार गोवर्धन के आने की प्रतीक्षा करता रहा। उसने सब नकद रुपया, और जितना बैंक से निकाला जा सकता था निकालकर, अपने नाम कर लिया था। अपने पिता के काल में भी वह अपने पिता के साथ बैंक के खातों का संयुक्त चालक (ओपरेटर) था। इस कारण रुपया निकालने में कठिनाई उत्पन्न नहीं हुई। इस प्रकार थोड़ा-सा रुपया जो सुलक्षणमल के निजी खाते में था वह नहीं निकाला जा सका, न ही वह स्थावर सम्पत्ति को परिवर्तित कर सका। शेष सब धन उसने इन दो दिनों में अपने नाम कर लिया। अभी वह इस प्रबन्ध में लीन ही था कि पुलिस उसकी सम्पत्ति मुहरबन्द करने आ गई। गोवर्धनलाल ने न्यायालय में यह प्रार्थना कर दी थी कि लाला सुलक्षणमल की सम्पत्ति का झगड़ा पड़ गया है। दो इच्छापत्र न्यायालय में दिए गए हैं। एक उसने दिया है जो संपत्ति का आदाता है एवं दूसरा वह है जो बैंक के खातों का चालक है। इससे वह सम्पत्ति का दुर्विनियोग (मिस-ऐप्रोप्रिएशन) कर सकता है। अतः निर्णय तक कि कौन-सा इच्छापत्र उचित है, पूर्ण सम्पत्ति एवं कारोबार को तुरन्त मुहरबन्द कर दिया जाए।

गोवर्धनलाल बिना वकील के स्वयं ही वहां उपस्थित हुआ था और उसने इसमें न्यायालय के पूर्व-निर्णय बताए तो आज्ञा जारी हो गई और वह पुलिस को लेकर मुहरबन्द कराने पहुंच गया। उसने न्यायालय की आज्ञा समाचार-पत्रों में छपवा दी, सब बैंकों को भिजवा दी एवं दुकान के बाहर लगवा दी।

एक दिन की देरी इस कारण लगी कि पुलिस बिना कुछ लिए-दिए जाना नहीं चाहती थी और गोवर्धनलाल ने स्पष्ट कह दिया था कि उसके पास देने को कुछ नहीं है। पुलिस उससे डरती भी थी, वह डिप्टी कमिश्नर के कार्यालय का क्लर्क था, और लोभ में भी फंसी हुई थी। उसको समझाते और तैयार करते हुए एक दिन लग ही गया। इस काल में गोवर्धनलाल ने समाचार-पत्रों में छपवा दिया और बैंक को नोटिस दिलवा दिया। इसमें सम्पत्ति को कुछ हानि तो हुई, परन्तु बिना एक भी पैसा व्यय किए काम बन गया। गोवर्धनलाल को घूस लेना छोड़े हुए दस वर्ष व्यतीत हो चुके थे। इसी कारण उसकी आर्थिक स्थिति मुकदमे पर एक पैसा भी व्यय करने की न था। समय भी वह अपने अधिकारियों की मिन्नत-खुशामद कर इसके लिए निकाल सका था।

जब पुलिस दुकान पर पहुंची तो शिवकुमार ने पल्ला झाड़कर दुकान छोड़ दी। वास्तव में वह इसी प्रकार की आशा कर रहा था।

उसी दिन रात के समय उसने अपने शेष भाइयों तथा बहिनों को बुला लिया था। इस गोष्ठी में उसने अपनी मां एवं सदारानी को भी बुला लिया। उसने सबके सामने गोवर्धनलाल की करतूत, कि उसने दुकान को ताला लगवा दिया है, बता दी और कहा, "मैं चाहता हूं कि उसको परिवार के सदस्य समझावें कि मुकदमा वापस ले ले, नहीं तो परिवार नष्ट हो जाएगा।"

सबको डबल नोटिस आया हुआ था एवं राम तथा गोपाल के अतिरिक्त कोई भी इस झगड़े में रुचि न रखने के कारण, दोनों इच्छापत्रों में अन्तर को नहीं समझता था। इस कारण दुकान के मुहरबन्द हो जाने की बात को राम और गोपाल के अतिरिक्त किसीने पसन्द नहीं किया।

मां कर्मदेवी ने कहा, "शिव ! गोवर्धन एवं गौरी को भी बुला लेते तो मैं उनको समझा देती। गौरी तो सदैव मेरा कहा मान लेती है।"

"मैंने उनको आने का सन्देश भेजा था और उनका उत्तर आया है कि अब तो न्यायालय में मिलेंगे।"

"ऐसा प्रतीत होता है कि उसकी पुरानी लेन-देन की प्रवृत्ति पुनः जागृत हो उठी है।"

राम और गोपाल अभी तक चुप एवं शान्त बैठे थे। वे शिव की बातें सुन, मुस्करा रहे थे। अब विष्णुदेवी, सबसे बड़ी बहिन, ने कहा, "कम से कम हम सबको उनसे बोलना-चालना बन्द कर देना चाहिए।"

राम बोल उठा, "बहिन, जानती हो गोवर्धन ने क्या दावा किया है ?"

"मैंने वह नोटिस, जो पीछे आया है, तुम्हारे जीजा जी से पढ़ाया था। उसमें तो यह लिखा है कि वह इच्छापत्र जो शिवकुमार ने दाखिल किया है, सत्य नहीं। वास्तविक इच्छापत्र वह है जो उसने दिया है।"

"और उन दोनों में क्या लिखा है अथवा उसमें से किस-किसको क्या प्राप्त होने वाला है, यह भी जाना है अथवा नहीं।"

"बात यह है कि हम लड़कियों को न तो कुछ लेने की लालसा है और न ही हमको कुछ आशा है। इससे प्रतिलिपि लेने में समय और धन व्यर्थ गंवाने की इच्छा नहीं। मैं तो यह विचार कर रही थी कि शिव भैया को अपना स्थानापन्न

पत्र (प्रौक्सी) दे दूं, जिससे मुझको वहां जाने से अवकाश मिल जाए।"

"वह तुम मुझको दे देना। मैं ले जाऊंगा। मैं तो प्रतिदिन न्यायालय में जाता ही हूं।" राम ने कह दिया।

"तुम लिख लाना, मैं हस्ताक्षर कर दूंगी।"

"और तुम क्या चाहती हो लक्ष्मी वहिन?" राम ने दूसरी वहिन से पूछ लिया।

लक्ष्मी ने उत्तर दिया, "तुम्हारे जीजा जी को मैंने नोटिस दिखाया था। उन्होंने कहा था कि एक दिन गोवर्धन जी से मिलकर पता करेंगे कि मामला क्या है! वे वे-मतलव वात तो करने वाले नहीं हैं।"

"तो वहिन! मैं मतलव समझा देता हूं। क्यों शिव भैया, कहो तो इन सबको समझा दूं।"

शिव ने राम की नीयत में गड़वड़ देखी तो कह दिया, "इच्छापत्र में कुछ भी लिखा हो। मैं एक वात पूछता हूं कि जव तक पिता जी जीवित थे, अपने सव परिवार को संतुष्ट रखते थे। वे सदैव मेरी इच्छानुसार ही सव लेते-देते थे। अगर मैं उनके पीछे कारोवार को सम्हालूंगा तो उनकी भांति ही मैं भी उस प्रकार लेता-देता रहूंगा। यह गोवर्धन स्वयं आदाता वनना चाहता है। भला यह पापकर्म कि पिता का श्राद्ध लड़की एवं दामाद करें, कहां तक उचित है?"

राम और गोपाल हंस पड़े। हंसकर वे चुप रहे। शिवकुमार ने राम को सम्वोधन कर कहा, "तुम क्या आशा करते हो गोवर्धन से?"

गोपाल ने कहा, "भैया, पिता की वात पिता के साथ गई। अव तो हम तुमसे पूछते हैं कि तुम क्या देने वाले हो हमको?"

"पिता जी ने एक वात मुझको लिखकर दे रखी है। उसमें उन्होंने लिखाया था कि प्रत्येक लड़के के लड़के तथा पोते के विवाह पर पांच-पांच हजार रुपया दुकान से दे दिया जाया करे तथा लड़की के विवाह पर दस हजार रुपया। इसी प्रकार प्रत्येक लड़की के लड़के के विवाह पर तीन-तीन हजार रुपया एवं उनकी लड़की के विवाह पर छः-छः हजार रुपया।"

"यह वात उन्होंने अपने इच्छापत्र में क्यों नहीं लिख दी?" राम ने पूछ लिया। "साथ ही यह तो वहुत कम है। मैं भी वैसे ही पिता का पुत्र हूं जैसे तुम हो। पिता जी मुझको कुछ भी नहीं दे गए। मेरे लड़कों एवं पोतों की चिन्ता तो उनको हो गई, पर मेरी क्यों नहीं हुई?"

"यह तो पिता जी से जाकर पूछ लेना कि वे क्यों क्या कर गए और क्यों क्या नहीं कर गए।"

"देखो दादा ! मैंने दोनों इच्छापत्र पढ़े हैं। उनमें कौन ठीक है और कौन गलत है, यह तो न्यायालय निर्णय करेगा। मगर तुम यदि हमको चौथा भाग देना चाहो तो बात करो, मैं अभी गौरी को बुलाकर, निर्णय घर पर करा सकता हूं।"

गोपाल ने कह दिया, "दादा ! हमको किसलिए बुलाया है ?"

"मैं यह चाहता हूं कि हम सब गौरी बहिन को समझावें और आप सब कुछ ले-देकर उसको घर में ही निर्णय करने पर राज़ी कर लें।"

"यह निर्णय हो सकता है। मैं अभी-अभी गोवर्धन जीजा से मिलकर आया हूं। उनसे उपस्थित इच्छापत्र आप स्वीकार कर लें तो बात बन सकती है।"

इसपर राम ने कह दिया, "मैं तो दोनों इच्छापत्रों को असत्य मानता हूं। दादा वाले इच्छापत्र में सब कुछ दादा को मिल गया और गोवर्धन जीजा जी वाले इच्छापत्र में सब कुछ ठाकुर जी के हेतु है।"

"ठाकुर जी ?" माता कर्मदेवी के कान खड़े हो गए, "कौन ठाकुर जी ?"

गोपाल ने बताया, "मां ! गोवर्धन जी वाले इच्छापत्र में लिखा है कि रुपये में छः आने के लगभग शिव दादा को मिले। छः आने एक सत्यनारायण के मन्दिर-निर्माण करवाने में व्यय हों और शेष चार आना उनके लड़कों एवं लड़कियों में विभक्त कर दिया जाए। और शिव दादा वाले इच्छापत्र में तो सब कुछ शिव दादा के लिए है। न मन्दिर, न मस्जिद, न दूसरे बहिन-भाई हैं।"

"शिव !" मां ने कह दिया, "बेटा, मान जाओ न ! किसी भले कार्य के लिए ही तो कह रहे हैं।"

इसपर राम ने कह दिया, "पर मां, हम तो उसकी सहायता करेंगे जो हमको पूरा-पूरा भाग देगा। मैं तो कहता हूं कि दोनों असत्य हैं। पिता जी ने किसी प्रकार का कोई इच्छापत्र नहीं लिख रखा।"

"देखो राम ! तुम्हारे पिता ने क्या कर रखा है और क्या नहीं कर रखा, इसको छोड़ो। मैं तो यह कहती हूं कि सबको कुछ न कुछ तो मिलेगा ही। क्यों महेश ! तुमको क्या मिलेगा ?"

"दादा तो मुझको दुकान पर नौकर रखने का आश्वासन दे रहे हैं और जीजा गोवर्धन जी मुझको लगभग डेढ़ लाख दिलवा रहे हैं।"

"महेश ! तुम क्या चाहते हो ?"

"मुझको तो पिता जी से कुछ भी आशा नहीं थी। वे मुझसे सदा रुष्ट रहते थे। यह नौकरी देकर भी मेरे बच्चों पर दया ही कर रहे थे, शिव दादा ने यही कुछ देने का आश्वासन दिया था। गोवर्धन दादा ने डेढ़ लाख का आश्वासन दिया है और राम ने मुझको सात लाख दिलवाने का वचन दिया है। जो कोई भी जीत जाए मुझको तो लेना ही लेना है। मैं मुकदमा करने की सामर्थ्य नहीं रखता।"

इसपर मां ने कह दिया, "न्यायालय का निर्णय हमारे हाथ में तो है नहीं। हां शिव, घर में फैसला कर लो। तुम मुझको गौरी के घर ले चलो; मैं निर्णय करवा दूंगी।"

राम ने पूछ लिया, "पर दादा और जीजा जी मान जाएंगे क्या ?"

"बताओ शिव ?"

"जो तुम सब लोग कहोगे मैं वह मान जाऊंगा।"

अब मां ने लड़कियों को सम्बोधन कर पूछ लिया, "क्यों विष्णो, लक्ष्मी और सदा, तुम क्या कहती हो ?"

"मां ! यदि तुम निर्णय कराती हो तो जो तुम कहोगी हमको वही स्वीकार है। हमने तो बताया है न ! न कुछ पाने की आशा थी, न ही लालसा।"

"तुम बताओ गोपाल !" मां ने पूछ लिया।

"देखो मां ! सत्य क्या है, मैं नहीं जानता। परन्तु मैं जानता हूं कि न्यायालय में क्या होने वाला है। गोवर्धन जीजा जीत जाएंगे। उसमें एक दुर्बलता है। वह उतना बड़ा वकील नहीं कर सकता जितना बड़ा शिव कर लेगा। मगर वह कल न्यायालय में आया था। उसने अपना मुकदमा स्वयं पेश किया है और जहां तक मुझको समझ आया है, वह जीत जाएगा। इसलिए मेरी तो यही राय है कि शिव दादा को उसकी बात मान जानी चाहिए।"

"मैं नहीं मानूंगा।" राम ने कह दिया।

"ठीक है। तुम झगड़ा कर लेना। तुम्हारी बात तो पहले ही दिन रद्द हो जाएगी।"

"राम, मान जाओ। देखो मैं भी तो अन्तकाल पर ही हूं। मैं अपने भाग की सम्पत्ति तुम्हारे नाम लिख दूंगी।"

राम तो ज़रा धमकाकर ही अधिक से अधिक प्राप्त करना चाहता था। इससे वह माना तो नहीं। इसपर भी घर में निर्णय के लिए वह भी कहने लगा। उसने कह दिया,

"मां ! तुम यत्न करो कि अधिक से अधिक इस गरीब पुत्र को दिलवा सको।"

"राम ! तुम मुझसे कल प्रातःकाल मिलना।" शिव ने कह दिया।

गोपाल हंसते हुए बोला, "राम ! तुम दादा के वकील बन जाओ। इनसे फीस निश्चय कर अग्रिम ले लो। मुकदमा तो शिव हारेगा। इससे जो कुछ गोवर्धन से तुमको मिलना है वह तो मिलेगा ही, साथ ही शिव का मुकदमा लड़ने की फीस भी मिल जाएगी।"

"क्यों दादा, हो तैयार ?"

"मेरे पास मुकदमा लड़ने के लिए कुछ भी नहीं है। इसलिए तुम जैसे थर्डरेट के वकील को मैं नहीं करूंगा।"

"तो फिर कल किसलिए मिलूं ?"

"गोवर्धन से बातचीत करने के लिए मैं कुछ मसाला दूंगा।"

"पर मां, मुझको साथ ले चलेगी तब न।"

"तुम चले चलना। मैं भी तो चलूंगा।"

४

गोवर्धनलाल को गोपाल बता आया था कि शिवकुमार ने पारिवारिक गोष्ठी का आयोजन किया है। जब शिव ने गोवर्धनलाल तथा अपनी बहिन गौरी को उस गोष्ठी में आमंत्रित नहीं किया तो वह समझ गया कि परिवार वालों को भड़काने के हेतु ही उसने यह यत्न किया है। अतः वह उस प्रयत्न की दिशा एवं परिणाम जानने के लिए माता कर्मदेवी के घर पहुंच गया। उस समय वह गोष्ठी में गई हुई थी। वह उसके लौटने की प्रतीक्षा में वहीं ठहर गया।

कर्मदेवी एवं सदारानी इकट्ठी लौटीं। कर्मदेवी वृद्धावस्था के कारण रात के समय चलने-फिरने में कठिनाई अनुभव करती थी और सदारानी उसको हाथ पकड़कर लाई थी। वहां गोवर्धनलाल को बैठा देख दोनों को प्रसन्नता हुई। मां ने कह दिया, "बेटा, तुम आ गए हो, बहुत अच्छा किया है। घर में झगड़ा शोभनीय नहीं है। यही मैं शिव को कह रही थी। यही तुमको कहती हूं।"

"माता जी !" गोवर्धनलाल ने मां तथा बहिन को बैठाते हुए और स्वयं बैठते हुए कहा, "मैं तो उसी दिन भेंट करने वाला था जिस दिन न्यायालय का प्रथम

नोटिस प्राप्त हुआ था, परन्तु मुझको कुछ बातें विदित थीं, जिनको समय से पूर्व मैं प्रकट नहीं करना चाहता था। उनके प्रकट हो जाने से अधिक गड़बड़ की जा सकती थी। यूं तो मुझे विश्वास है कि अभी भी पर्याप्त गड़बड़ की गई है। परन्तु दो-तीन दिन पूर्व इस वास्तविक इच्छापत्र के विषय में बात फैलने पर तो लाखों इधर से उधर कर दिए जाते। आज जब रुपया खुर्दबुर्द करने पर प्रतिबन्ध लग गया है, तब मैं आया हूं।"

"पर वह इच्छापत्र, जो तुमने उपस्थित किया है, सच्चा है?"

"हां मां! वह न्यायालय में 'रजिस्टर्ड' हो चुका है।"

"मगर शिव का कथन है कि उस वाला पीछे लिखा गया है।"

"माता जी, यह असत्य है। यदि उसको इसका निर्णय करना है तो न्यायालय में हो जाएगा और मां, जिस दिन यह फैसला हुआ कि वह इच्छापत्र शिवकुमार ने स्वयं ही लाला जी के देहावसान के उपरान्त लिखा है तो इस छलना के लिए, जो वह कर रहा है, उसको पांच वर्ष का कठोर दण्ड भी मिलेगा।"

"परन्तु बेटा, न्यायालय में क्या सत्य-सत्य निर्णय होता है?"

"परन्तु और किसी अन्य का निर्णय वह स्वीकार भी नहीं करेगा। जिसकी बात उसको मान्य हो, मैं उसके समक्ष यह सिद्ध कर दूंगा कि उस वाला इच्छापत्र नकली है।"

"वह मेरी बात मान जाएगा।"

"तो माता जी! गाय माता पर हाथ धरकर वह कह दे कि उसका इच्छा-पत्र लाला जी के जीवनकाल एवं उनके सज्ञान अवस्था में लिखा गया है, तो मैं मान जाऊंगा।"

मां चुप कर गई। उसका कथन था, "कल प्रातःकाल तुम और गौरी यहां आ जाना। मैं चाहती हूं कि निर्णय घर में हो जाए।"

"माता जी!" गोवर्धनलाल ने कह दिया, "जब यह बात निश्चय हो जाए कि लाला जी की वास्तविक इच्छा क्या थी तो उसमें हेर-फेर करना तो भारी पाप हो जाएगा और साथ ही जब वे न्याय-बुद्धि से कार्य ले रहे हैं। शिवकुमार को उसका उचित भाग दिया गया है। उन्होंने जितने दिन पिता जी के साथ काम किया है उन दिनों की गिनती कर सम्पत्ति में उसका भाग आंककर दिया है।

"केवल एक बात उन्होंने विलक्षण की है। वह यह कि लगभग दो लाख

रुपया मुझको दे दिया है। यह अपने अन्य दामादों को नहीं दिया। उन्होंने लिखा है कि यह मेरे आदाता बनने के प्रतिकार में है। मैं यह अपने परिश्रम से अधिक समझता हूं, अतः यदि इसको दे देने से कोई मानता हो तो मैं अपना भाग सहर्ष दे दूंगा, परन्तु माता जी, मैं किसी दूसरे के भाग में एक पाई का भी हेर-फेर स्वीकार नहीं करूंगा।"

"तुम प्रातः आ जाना। गौरी को भी लेते आना। मैं तुम्हारे घर पर आने वाली थी, परन्तु अब तुम आ गए हो तो मुझको लड़की के घर की यात्रा मत कराओ।"

अगले दिन गोवर्धन एवं गौरी सात बजे माता कर्मदेवी के घर आ गए। शिव और राम भी आ गए। महेश और लाला जी के अन्य लड़के-लड़कियों को भी वहां ही बुला लिया गया।

शिवकुमार राम को भड़काकर लड़ने के लिए तैयार कर लाया था। शिवकुमार ने राम को कहा था कि मुकदमा उसको करना चाहिए। वह न्यायालय में अपने पिता जी के हस्ताक्षर पहचान ले और कह दे कि वह इच्छापत्र उसके सुझाव से लिखा गया है। ऐसा कहने एवं करने पर वह उसको पांच प्रतिशत के बराबर भाग देगा।

राम अधिक पाने का इच्छुक था, परन्तु बात पांच प्रतिशत से पांच लाख पर निर्णय हुई।

राम ने इसको तब माना जब शिव ने उसको मुकदमे के व्यय के हेतु पांच हज़ार तुरन्त देने का वचन दिया। वे वहां आए और परिवार के अन्य लोग एकत्रित हो गए तो कर्मदेवी ने सबके सम्मुख कह दिया कि घर में झगड़ा करना ठीक नहीं। अब दोनों इच्छापत्रों के विषय में घर पर ही बातचीत कर लो। बताओ शिव क्या कहते हो?

"मां! जीजा जी वाला इच्छापत्र पुरातन है। मेरे वाला तो लाला जी ने मृत्यु के केवल एक सप्ताह पूर्व लिखा था। यह नियम है कि दूसरा इच्छापत्र लिखने पर पहला रद्द हो जाता है।"

"क्यों गोवर्धनलाल! तुम क्या कहते हो?"

"मेरा यह कहना है कि भैया शिव वाला इच्छापत्र जाली है। उसपर हस्ताक्षर लाला जी के नहीं हैं। वह उनकी मृत्यु के उपरान्त लिखा हुआ है।

" न्यायालय में तो मैं इसके जाली होने के प्रमाण उपस्थित कर दूंगा । यहां मैं वह सब कुछ नहीं करना चाहता । यहां तो मेरा यह कथन है कि मित्र दादा गो माता की सौगन्ध खाकर कह दें कि जो कुछ भी वे इच्छापत्र के विषय में आज कह रहे हैं वह सत्य है, तो मैं मुकदमा नहीं लड़ूंगा ।"

सब उपस्थित जन स्तब्ध बैठे रह गए। वे उत्सुकता से शिवकुमार के मुख पर देखने लगे । शिवकुमार की आंखें भूमि की ओर झुकी हुई थीं । जब शिवकुमार ने कुछ उत्तर नहीं दिया तो राम ने उसके स्थान पर उत्तर दे दिया । उसने कहा, "मां ! इतनी बड़ी सौगन्ध डालकर गोवर्धनलाल 'ब्लैक मेलिंग' करना चाहता है ।"

"वह क्या होता है, राम ?"

"ब्लैक मेलिंग का अर्थ है डरा-धमकाकर अपनी बात स्वीकार करवा लेना । मैं कहता हूं कि वह इच्छापत्र असली है एवं जीजा जी वाला रद्द किया हुआ है ।"

मां ने कहा, "राम, तुम्हारी भी बारी आएगी । प्रथम मुख्य व्यक्ति से बात हो जाए । देखो शिव, यदि जो कुछ तुम्हारा कथन है वह सत्य पर आधारित है तो इस सौगन्ध से तुम्हारे सिर पाप नहीं लगेगा, बल्कि तुम पुण्य के भागी होगे । बताओ तैयार हो इस सौगन्ध के लिए ?"

"नहीं मां !" शिव ने अभी भी आंखें नीचे किए हुए कह दिया, "मैं यह सौगन्ध नहीं खा सकता । मुझको जीजा जी वाला इच्छापत्र स्वीकार है ।"

"तो फिर न्यायालय में प्रार्थनापत्र दे दो कि तुमको इस रजिस्टर्ड प्रलेख का ज्ञान नहीं था और तुम्हारे वाला प्रलेख लाला जी के पत्रों में पड़ा प्राप्त हुआ था । तुम नहीं जानते थे कि वह रद्द किया हुआ लेख है ।" गोवर्धनलाल ने शिवकुमार को असत्य साक्ष्य देने से निकलने का मार्ग सुझा दिया ।

शिवकुमार ने कहा, "मैं यह नियत तिथि से पूर्व कर दूंगा ।"

"और सम्पत्ति का प्रबन्ध करने के लिए यद्यपि मैं नियुक्त हूं, परन्तु तुम चाहो तो मैं तुम एवं गोपाल से मिलकर काम करने के लिए स्वीकार करता हूं ।"

इसपर गोपाल ने कह दिया, "और जो कुछ इस कार्य के हेतु जीजा जी को मिलने वाला है वह तीनों में विभक्त किया जाएगा ।"

"मेरे कहने का यही अभिप्राय है ।"

इसपर राम बोल उठा, "तब तो मुझको भी सम्मिलित कर लो ।"

"चार व्यक्ति किसी समिति में उचित नहीं रहते । तब महेश को भी ले लो एवं पांचों की एक समिति आदाता के रूप में कार्य करे।"

महेश बोल उठा, "मुझे स्वीकार है।"

इसपर बात निश्चय हो गई। शिवकुमार गाय की सौगन्ध से इतना भयभीत हुआ था कि वह उस सब नकद रुपये के विषय में भी बक गया, जो उसने पिछले दो दिनों में, दुकान के खाते से निकालकर अपने नाम जमा करा लिया था।

मां के घर से लौटते हुए राम ने शिवकुमार को कहा, "दादा ! यह क्या कर दिया है तुमने ?"

"राम, गाय की सौगन्ध खाकर मैं झूठ बात नहीं कह सकता था।"

"तुम भी धर्म-भीरु हो ?"

"भीरुता धर्म के सम्मुख ही तो की है न ? मुझको इसमें लज्जा की बात प्रतीत नहीं होती।"

"तब तो दादा, मैं बच गया। तुम मुझको फंसाकर स्वयं भाग जाते।"

"राम ! मैं गौ-हत्या का पाप सिर पर नहीं ले सकता।"

"अरे दादा ! बिना हत्या किए भला कैसे हत्या का पाप लग जाता ?"

"असत्य बोलने से।"

"वह तो तुमने बोल दिया।"

"वह तो बिना सौगन्ध के बोला है न ?"

राम हंस पड़ा। हंसते हुए कहा, "मैंने कान को हाथ लगाया है कि आगे से शिव दादा का कभी विश्वास नहीं करूंगा। यह तो अपने साथियों को मंझधार में छोड़ जाने की बात हो गई है।"

"परन्तु राम ! जब शिव गाय की सौगन्ध से कुछ कहे तब तो तुम निश्चिन्त होकर मान जाओगे न ?"

रामकुमार ने बात बदल दी। उसने पूछ लिया, "दादा, यह जीजा जी वाला इच्छापत्र देखा है ?"

"हां !"

"उसके अनुसार मुझको क्या मिलने वाला है ?"

"कुछ नहीं।"

"और तुम्हारे वाले इच्छापत्र के अनुसार ?"

"कुछ नहीं।"

"तब तो दादा, तुमने मेरे साथ भारी अन्याय किया है।"

"क्यों?"

"तुमने मेरे साथ मिलकर संयुक्त मोर्चा बनाया था और अब मैं लड़ने के लिए लंगोटा ही कस रहा था कि तुम भाग खड़े हुए।"

"देखो राम, अब तुम आदाता समिति में हो। उसमें के भाग से चालीस हज़ार के लगभग तुमको मिल जाएगा।"

वास्तव में शिवकुमार डरता था कि कचहरी में असत्य बयान देने के अपराध में कहीं उसको दण्ड न मिल जाए। साथ ही वह गाय की सौगन्ध से डर गया था। उसके जीवन-भर के संस्कार उसको विवश करने लगे थे। नियत तिथि से पूर्व ही उसने एक दिन न्यायालय में एक प्रार्थना कर दी। उसमें उसने लिखा था, "यह इच्छापत्र को जो मैंने इस कोर्ट में अमुक तिथि को उपस्थित किया था, वह मुझको पिता जी की संदूकची में पड़ा मिला था। मैंने समझा कि यह उनका अंतिम इच्छा-पत्र है। मुझको अब विदित हुआ है कि उन्होंने एक इच्छापत्र रजिस्ट्रार बहादुर के पास रजिस्टरी कराया हुआ था। अतः वही प्रमाणित होना चाहिए। इस कारण मैं वह इच्छापत्र वापस लेता हूं एवं उसको स्वीकार करता हूं जो लाला गोवर्धन-लाल ने उपस्थित किया है।"

इस प्रार्थनापत्र के उपरान्त किसीने आपत्ति नहीं की और घर पर प्रबन्ध के अनुसार एक कर्ता-समिति बना दी गई एवं वह 'सम्पत्ति' का विभाजन तथा मन्दिर की योजना बनाने लगी।

पूर्ण परिवार में असन्तुष्ट रामकुमार था और उससे कुछ कम रुष्ट गोपाल-कुमार था।

इनको सबसे कम मिला था। रामकुमार की पत्नी रोहिणी भी एक [illegible] वकील की लड़की थी और रामकुमार का भी कामधन्धा चलता नहीं था। इससे बेचारा बेकार वकील होते हुए भी घर में मुकदमेबाज़ी आरम्भ नहीं करा सका।

जिस दिन शिवकुमार ने गाय की सौगन्ध से भयभीत हो, मुकदमा न लड़ने का निर्णय किया, उसी दिन घर पहुंच राम शोकग्रस्त हो, अपनी मुसीबत की कथा अपनी पत्नी को बताने लगा था। वह कह रहा था, "रोहिणी! मैं तो समझता

हूं कि पिता जी ने मुझको वकील बनाकर मुझसे भारी द्रोह किया है।"

"और मैं समझती हूं कि यदि आप मेरे विवाह से पूर्व वकील बन गए होते तो मेरे पिता जी मेरा विवाह आपसे कदापि न करते।"

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि जहां पिता जी ने मेरे साथ शत्रुता की वहां उन्होंने तुम्हारे साथ भी द्वेष किया है।"

"पर मैं पूछती हूं कि आपके घर में इतनी सम्पत्ति थी और आपका कारो-बार इतना चलता था कि चार-चार मुनीम दुकान पर बैठे वही लिखते रहते थे, तो आपको एम० ए० तथा वकालत पास करने की आवश्यकता क्यों पड़ी थी ?"

रामकुमार अपनी पत्नी का मुख देखता रह गया। इसपर रोहिणी ने अपना कथन जारी रखा। उसने कहा, "मैं तो कभी विचार करती हूं कि घर-बाहर को त्याग साधु हो जाऊं।"

"क्यों ? इससे क्या होगा ?" सतर्क हो राम ने पूछा।

"होगा यह कि अब पारो तीन वर्ष की हो गई है और नियम से आप प्रति तीन-चार वर्ष के पश्चात् एक नये बच्चे की नींव रख देते हैं। देखिए रूप इक्कीस वर्ष का हो गया है। कृपा सत्रह वर्ष की है, दया चौदह वर्ष की है एवं मध्य में एक गर्भपात हो गया था। छाया सात की है और पारो तीन की है। मेरे मन में तो नित्य यह भय समाया रहता है कि अब क्या होगा ?"

"बात तो अवश्य शोचनीय है, परन्तु इसका उपाय घर त्यागकर भाग जाना कैसे हो गया ? इतनी लम्बी-चौड़ी सृष्टि करने के पश्चात् इसको किस भाड़ में झोंककर जाओगी ?"

"तो कुछ उपाय करिए न ?"

"ज़रा तुम भी बुद्धि लड़ाओ। मैं तो जब भी विचार-मग्न होता हूं तो मेरा मन अपने पिता जी को जली-कटी सुनाने को करने लगता है। देखो न, एक पत्थर की मूर्ति को खड़ा करने के लिए तो बीस लाख के लगभग दे गए हैं और सात हाड़-चाम के प्राणियों के लिए एक पैसा भी नहीं।"

"कल मैं अपने पिता जी के पास गई थी। वे स्वयं चिन्तामग्न बैठे थे। भाई सुरेश घर से अपनी मां के सब भूषण चुराकर बम्बई भाग गया है।"

"अरे ! यह क्यों ?"

"एक पड़ोस की लड़की से मित्रता हो गई है। वह भी साथ ही है।"

"तो यह पता कैसे चला है ?"

"सुरेश जाते समय पिता जी के नाम एक पत्र छोड़ गया था और उनके साथ भागने वाली लड़की दमयन्ती भी अपनी मां को लिख गई है। दोनों ने एक ही बात लिखी है। वह यह कि 'मैं जा रहा हूं। यदि मेरी आवश्यकता घर में है तो क्रानिकल में विज्ञापन दे दीजिए कि मेरे व्यवहार को क्षमा कर मेरा विवाह, जहां मैं इच्छुक हूं, कर देंगे। तब मैं लौट आऊंगा।'—यही बात दमयन्ती ने लिखी है। इससे यही अनुमान है कि दोनों इकट्ठे भागे हैं।"

"तो फिर क्या करने का विचार है, पिता जी का ?"

"पिता जी का तो कथन है कि उनको सुरेश की आवश्यकता नहीं। परन्तु सुरेश की मां रो-रोकर व्याकुल हो रही है। और दमयन्ती के पिता ने तो पुलिस में रिपोर्ट लिखा दी है कि उनकी अल्पवयस्क लड़की का अपहरण किया गया है।"

"परन्तु यह तो 'कौगनिज़ेबल ऑफेंस' (संज्ञेय अपराध) है। पुलिस तो उनको पकड़ लेगी।"

"यही तो दमयन्ती के माता-पिता चाहते हैं। हमारे पिता जी दमयन्ती के पिता जी को समझा रहे थे कि यह तो बहुत बुरा किया है उन्होंने। परन्तु दमयन्ती के पिता तो कहते थे, 'लड़की का भले ही कुछ हो जाए, परन्तु अपहरण करने वाले पापी को तो दण्ड दिलवाकर छोड़ेंगे।' "

"बहुत दुष्ट है वह ?"

"सुना है नये-नये अमीर हुए हैं। इसलिए लड़के और लड़कियों को पहले पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है और पीछे झगड़ा करते हैं।"

"यह तो बहुत ही भयानक समाचार सुनाया है तुमने ?"

"क्या किया जाए ? यदि दमयन्ती के पिता पहले पूछ लेते तो बात बन जाती। अब सोचिए कि आप किस प्रकार सुरेश की मां की सहायता कर सकते हैं।"

"मैं आज सायंकाल जाऊंगा।"

"और इस समय कहां जा रहे हैं ?"

"कचहरी।"

"वहां क्या है ?"

"श्रीमती जी, दुकानदारी है। वहां जाकर देखूंगा, कोई भूला-भटका फंस गया तो दो-चार रुपये ऐंठ लाऊंगा।"

"कितने वर्ष हो गए हैं, आपको न्यायालय जाते हुए ?"

"रूप तीन वर्ष का था, जब मुझको वकालत का आज्ञापत्र मिला था, तब से नित्य ही जाता हूं। बीच में काम कुछ चुस्त हुआ था, परन्तु अब तो दस वर्ष हो गए हैं, कोई पूछता ही नहीं।"

"मेरी राय मानिए। न्यायालय जाना छोड़ दीजिए तथा कुछ और कार्य आरम्भ कर दीजिए।"

"रूप ने एम० ए० पास किया है। मगर भाग्य की बात देखो, छः मास से इधर-उधर घूम रहा है। अभी कोई नौकरी नहीं मिली।"

"मैं तो समझी थी कि वह कुछ करता है।"

"कैसे पता चला है ?"

"कई दिनों से उसकी जेब रुपयों से भरी रहती है।"

"कहां है वह ?"

"कुछ बता कर तो जाता नहीं, कपड़े पहने और चल दिए।"

"और भोजन ?"

"कभी दोपहर को आ जाता है तो घर पर कर लेता है, नहीं तो सायंकाल आता है और कह देता है : 'एक मित्र ने खिला दिया है।' "

"एक बात करो। उसकी जेब में से थोड़ी-सी राशि निकाल लो, पुनः देखें वह क्या कहता है।"

"मैं कई दिन से कर रही हूं। कभी पांच, कभी दस निकाल लेती हूं।"

"और वह इसको जान नहीं पाता ?"

"अभी तक तो पूछा नहीं। आज भी दस रुपये निकाल लिए हैं।"

"तो आज का खर्चा तो चल गया है।"

"हां। इसीलिए तो कहती हूं कि कचहरी छोड़, कोई अन्य काम करिए।"

"कितनी जमा-पूंजी है तुम्हारे पास। मान लो, कल से रूप जेब में लाने छोड़ दे तो कितने दिन तक काम चल सकेगा।"

"एक मास तो निकाल ही सकती हूं। तब तक आप सोचिए।"

५

रामकुमार को रहने के लिए मकान तो उसके पिता सुलक्षणमल ही दे गए थे। उन्होंने रामकुमार के अध्ययन का व्यय दिया और उपरान्त वकालत को कार्यान्वित करने के लिए दस हज़ार रुपया भी दिया था।

मानसिक विकारों में फंसे हुए व्यक्ति की स्मृति भ्रष्ट तो होती ही है, और यही बात रामकुमार के साथ हुई थी। उस काल की प्रथानुसार रामकुमार का विवाह, जब उसने पन्द्रहवें वर्ष में पदार्पण किया था, कर दिया गया था। दुर्भाग्य से उसको स्वसुर मिले लाला कंवरसेन मद्य-मांसभक्षी तथा क्लब जानेवाले वकील—आय कम, व्यय अधिक करनेवाले एवं क्लब में जुआ खेलते हुए सदा हारने वाले।

रोहिणी के विवाह में भी कंवरसेन की दिवालिया अवस्था ही कारण थी। रोहिणी अति सुन्दर थी और कंवरसेन ने नगर के चोटी के धनी का लड़का चुन लिया और विवाह के पश्चात् लड़की द्वारा सेठ सुलक्षण की सम्पत्ति को चूसना आरम्भ कर दिया। राम अपनी पत्नी के सम्मोहन में फंसा हुआ सदैव पत्नी की रक्षा करता रहता था।

सुलक्षणमल सतर्क हो गए और रोहिणी की चोरी को सीमा में रखने के लिए राम को दुकान से दूर करना आरम्भ कर दिया। जब राम ने बी० ए० की परीक्षा पास की तो उसके पिता ने कहा था, 'राम! काफी पढ़ गए हो, अब उस पढ़ने का कुछ उपयोग करो।'

'तो क्या नौकरी करूं?'

'नहीं। तुम दुकान पर हिसाब-किताब किया करो।'

'वह तो आपके पचीस रुपये के मुन्शी करते हैं। इतना पढ़-लिखकर पचीस रुपये के मुनीम का कार्य मुझसे नहीं हो सकेगा।'

'तो क्या करोगे?'

'अभी और पढ़ूंगा।'

'ठीक है, पढ़ो।'

राम ने एम० ए० किया। पुनः पिता ने वही प्रस्ताव किया। राम का अभी भी वही उत्तर था। 'पिता जी आपकी दुकान पर मेरे जितना पढ़ा-लिखा क्या काम करेगा?'

'तो कोई और काम विचार लो।'

'मैं वकालत पास करूंगा।'

इस समय राम के घर प्रथम सन्तान हो चुकी थी। नामकरण संस्कार किया गया। लड़का मां पर गया था। वह गौरवर्णीय एवं सुन्दर था। नाम रख दिया गया रूपकृष्ण। इसके साथ ही रोहिणी ने सास के साथ लड़ना आरम्भ कर दिया। विवश कर्मदेवी के कथन पर रोहिणी को, उसके पति के अध्ययनकाल में ही, पृथक् मकान में रख दिया गया। दो सौ रुपया मासिक निर्वाह के लिए मिलने लगा। इसमें से भी एक सौ रुपया लाला कंवरसेन के परिवार की ओर वहने लगा।

वकालत पास करने पर पिता ने काम जमाने के लिए दस हज़ार रुपया दिया तो लाला कंवरसेन ने उसको अपने साथ काम करने का निमंत्रण दे दिया। उस दस हज़ार में अधिकांश तो स्वसुर के खान-पान में काम आया और काम नहीं जमा।

वकालत पास करने पर भी सुलक्षणमल दो सौ रुपया प्रतिमास देते रहे। यह सहायता लाला जी के देहान्त तक मिलती रही। सुलक्षणमल ने राम को अपनी सम्पत्ति में से एक पैसा भी नहीं दिया। उसका विचार था कि राम को अन्य सब लड़के-लड़कियों से अधिक दिया जा चुका था।

राम यह सब भूल गया। उसे एक बात स्मरण रह गई और वह थी, उसके पिता जी का अन्तिम कार्य, जोकि उसको उन्होंने इच्छापत्र में स्मरण तक नहीं किया था। रोहिणी भी, वह सब चोरी किया धन, जोकि उसके पिता एवं भाई-बहिनों की जेबों में पहुंचा था, भूल गई थी। उसको भी अपने स्वसुर की कठोरता ही स्मरण थी कि वह उनके लिए कुछ नहीं छोड़ गया।

लाला सुलक्षणमल के देहान्त के दिनों में ही उसको अपने लड़के के रूप में एक विलक्षणता प्रतीत हुई थी। वह रात्रि का भोजन प्रायः बाजार में ही करके आने लगा था। जब मां ने पूछा, 'रूप भोजन नहीं करोगे?'

तो वह कह देता, 'एक मित्र ने खिला दिया है।''

मां पूछती, 'अपने घर में।'

'नहीं मां! होटल में।'

जब कई दिन यही क्रम चलता रहा तो उसको भी संदेह हुआ कि रूप भी तो

उनको खिलाता होगा। कहां से ? इस प्रश्न का समाधान करने के लिए उसने एक दिन, जब रूप स्नान करने गया हुआ था, उसके कोट की जेब देख ली। उसका 'पर्स' नोटों से भरा हुआ था। उसने स्वभाववश एक दस रुपये का नोट निकाल लिया। वह रूप के पिता की जेब में से निकालने की प्रवृत्ति रखती थी।

दिन-भर वह रूप के उन दस रुपयों के विषय में प्रतीक्षा करती रही। रूप ने कुछ नहीं पूछा। अगले दिन उसने पांच रुपये निकाले। तब भी कोई हो-हल्ला नहीं हुआ। इसपर तो वह नित्य ही कभी पांच, कभी दस रुपये निकलने लगी थी।

रूप को तो रुपये के निकालने का सन्देह पहले दिन ही हो गया था। उसको अपनी मां का स्वभाव ज्ञात था। उसने मां को पिता जी की जेब को हाथ लगाते अनेक बार देखा था। उसने एक दिन मां को उसकी जेब से रुपये निकालते देख भी लिया। इसपर भी उसने मां से झगड़ा नहीं किया। हां, वह जेब में रुपये गिन-कर रखने लगा था।

यह धन रूप की जुए की आय थी। वह प्रायः रात को एक जुए के अड्डे पर जाता था और वहां से प्रायः जीतकर आता था। वह यह जानता था कि जीतने का सौभाग्य उसको सदा मिलता नहीं रह सकता। इस कारण वह रुपया बैंक में जमा करता जाता था। जुएखाने में वह बीस रुपये से अधिक लेकर कभी गया नहीं था। प्रायः दो-तीन सौ जीतने के उपरान्त वह खेलना छोड़ देता। कभी हारता तो बीस हार वह वहां से चला आता था। जब भी जीतकर आता, जीता हुआ रुपया उसकी जेब में होता। मां उसमें से पांच-दस ही निकालती थी। उसको भय लगा रहता था कि अधिक निकालने से लड़के को सन्देह हो गया तो झगड़ा हो जाएगा और आगे से वह जेब में रुपये रखना छोड़ देगा। कभी जेब में नहीं भी होते अथवा बहुत कम होते थे। तब वह कुछ नहीं निकालती थी। जब से वह निकालने लगी थी, ऐसे अवसर बहुत कम आए थे।

लाला सुलक्षणमल के देहान्त को डेढ़ मास होने जा रहा था और लगभग इतना ही समय हो गया था, रोहिणी को पुत्र की जेब से रुपये निकालते हुए। उसने देखा कि रूप रुपये निकालने के विषय में या तो जान ही नहीं सका, अथवा जान गया है तो झगड़ा करना नहीं चाहता। अब उसने इस आशय पर पति को कह दिया कि वे कोई और काम ढूंढें। उसका वकालत की आय से तो पेट भी नहीं भरता।

राम को सन्देह हो गया था कि रूप जुआ खेलता होगा। वह अपने ससुर के इस स्वभाव को जानता था। वह स्वयं भी एक-दो बार क्लब में जा, दांव लगा चुका था, परन्तु भाग्य विपरीत होने से वह जीत नहीं सका। इससे उसने अपने विचार से इस पेशे (व्यवसाय) में हाथ नहीं डाला।

दो-चार दिन अपने श्वसुर से अपनी आर्थिक अवस्था बता, उसमें उसकी सहायता के लिए पूछता रहा। इसपर कंवरसेन ने कह दिया, "देखो राम! मैं तो दो ही व्यवसाय जानता हूं। एक वकालत और दूसरा गैंब्लिंग (जुआ)—मुझको इन दोनों में कुछ विशेष लाभ नहीं हो रहा। तीसरी बात मैं जानता नहीं। इससे मैं तुमको कुछ नहीं बता सकता।"

"मैंने इन दोनों में तरक्की करने का यत्न किया है तो बहुत बुरी तरह असफल रहा हूं।"

"तुम अपने भाई शिव से राय लो। वह कुछ ऐसा काम करता है जिसमें सफल हो रहा है।"

राम अपने भाई की दुकान पर जा पहुंचा। दुकान अब भी चल रही थी। अब भी उसमें चार मुनीम बैठे वही लिख रहे थे। अब भी माल खरीदा और बेचा जा रहा था। कभी टेलीफून पर और कभी ज़बानी व्यापार होता था।

शिवकुमार ने राम को देखा तो पूछ लिया, "आओ राम! किसलिए आए हो?"

"भैया! जीवन-भर इसी आशा पर बैठा रहा था कि पिता जी मरने पर कुछ दे ही जाएंगे। वे कुछ भी नहीं दे गए। इससे जीवन-आशा टूट गई है। एक क्षीण आशा तुम हो। बताओ, कुछ सहायता कर सकते हो?"

"हां, कर सकता हूं। मगर जैसा मैं कहूंगा वैसा ही करना होगा।"

"क्या करना होगा?"

"यह सूट उतारकर दुकानदारों के से कपड़े पहनने आरम्भ कर दो।"

रामकुमार हंस पड़ा। हंसकर पूछने लगा, "बस या कुछ और भी?"

"यह तो केवल आरम्भिक कृत्य है। इससे तुम दुकान पर आने योग्य हो जाओगे।"

"ओह! अच्छा और?"

"यहां प्रातः आठ बजे आ जाया करो। मध्याह्न के समय भोजन करने के

लिए एक घंटे का अवकाश मिलेगा और फिर दो बजे से सायं छः बजे तक यहां रहना होगा।"

"यह तो बहुत लम्बी ड्यूटी (नौकरी) है।"

"हां। हम सब करते हैं। मेरा लड़का निरंजन भी ऐसा ही करता है।"

"अच्छा यह भी कर लूंगा। काम क्या करना होगा?"

"जो निरंजन करता है। कुछ काम नहीं करता और सब कुछ कर लेता है। दुकान पर झाड़ू देने से लेकर बड़े-बड़े सेठ-साहूकारों से बातचीत करने तक, और घर की सब्जी-भाजी खरीदने से लेकर घर पर बीमारों की तीमारदारी करने तक। समय-समय पर मैं बताता रहता हूं और वह करता रहता है।"

"यह तो कुछ न हुआ। कोई ऐसा काम बताओ जिसको सीखकर मैं किसी दिन स्वतन्त्र रूप से कारोबार कर सकूं।"

"देखो राम! यह दुकान है, स्कूल नहीं। यहां कुछ भी सिखाया नहीं जाता, इसपर भी सीखने वाले सीखते हैं। देखो, मैं बताता हूं। हमारा एक मुंशी नन्द-किशोर बैठा-बैठा व्यापार करने लगा और अब हापुड़ में अपनी दुकान कर, दो-चार लाख का कारोबारी बन गया है। निरंजन की बात ही देख लो। वह भी यहां बैठा-बैठा सोने के व्यापार में हाथ चलाने लगा है। पिछले वर्ष में उसको चालीस हजार का लाभ हुआ है। उसने मुझसे कभी पूछा नहीं, न ही मैंने उसको कभी कुछ सिखाया है।"

"अच्छा बाबा। 'भूखा मरता क्या न करता।' वाली कहावत है। मुझको तुम्हारा कहा मानने से मिलेगा क्या?"

"जो दुकान से निरंजन को मिलता है। मैं उसको दो सौ रुपया प्रतिमास देता हूं। वही तुमको दे दिया करूंगा।"

"निरंजन का लड़का क्या करता है?"

"वह कालेज में पढ़ता है। सन्त को इस वर्ष इन्टर की परीक्षा देनी है और सूर्य ने मैट्रिक की।"

"और वे दुकान पर नहीं बैठेंगे?"

"यह निरंजन के विचार का विषय है। मैंने इस विषय में कभी विचार नहीं किया।"

"पर भैया शिव! तुम मेरे कालेज में पढ़ने के परिणाम देखकर भी उनको

मना नहीं करते।"

"देखो राम! सफलता-असफलता भाग्याधीन होती है। व्यवसाय तो अपने परिश्रम एवं बुद्धि का परिणाम है। जो भाग्य से सफल होने वाले होते हैं वे किसी भी व्यवसाय में चले जाएं, सफल हो जाते हैं। कालेजों, स्कूलों के पढ़े भी तो सफल हो रहे हैं। हमारे पड़ोसी सन्तोषीलाल के बच्चों की ही बात देख लो। वह स्वयं तो मुनीम का कार्य करता था, परन्तु एक लड़का बड़े लाट के दफ्तर में बड़े पद पर है। मोटर में कार्यालय को जाता है और मोटर में आता है। मकान नया बन गया है। दूसरा लड़का भी पढ़कर कहीं परदेस में गया है। सुना है अच्छा खाता-पीता है। जब भी मां-बाप से मिलने आता है तो उनके लिए और भाई-बहिनों के लिए बहुत बढ़िया वस्तुएं लाता है। यह तो सब भाग्य का खेल है।"

राम मुस्कराकर पूछने लगा, "तो यह भाग्य को कैसे बनाया जा सकता है? इसके लिए क्या करना चाहिए?"

"यह मुझको ज्ञात नहीं। गोवर्धन जी से पूछ लेना। वे कुछ कह गए हैं। अभी आए थे। कहते थे 'शिव भैया! पिछले जन्म की कमाई खा रहे हो। आगे के लिए भी कुछ जमा कर जाओ। नहीं तो राम की भांति मक्खियां उड़ाया करोगे।' यद्यपि मैंने उसको हंसी में उड़ा दिया है मगर अपने भाग्य की बात देख, उनके कथन में भी तो तत्त्व दिखाई देता है।"

"मैंने स्कूल-कालेज में नहीं पढ़ा। पापा के यहां लुंडी में हिसाब-किताब सीख दुकान पर बैठ गया था। अब जिस भी काम में हाथ लगाता हूं, वही धन उगलता प्रतीत होता है।"

"तो भैया! कब से आऊं?"

"कल से आ जाना। दो सौ रुपया प्रतिमास मिल जाएगा। धोती-कुर्ता नहीं, तो हमारे मुनीम की भांति पायजामा व बंद गले का कोट। यह कोट-पतलून, नेकटाई, कालर यहां नहीं चल सकेगा।"

रामकुमार को शिव की बातें समझ नहीं आई थीं। भला ये कोट-पतलून दुकान पर क्यों नहीं चल सकेंगे? साथ ही बिना काम के भला वह क्यों वेतन देगा? परिश्रम और बुद्धि से व्यवसाय होता है, परन्तु सफलता भाग्य से होती है। वह भाग्यशाली तो है, परन्तु भाग्यशाली कैसे बना है, नहीं जानता? इसमें

उससे जाकर ज्ञात करना चाहिए जो स्वयं भाग्यशाली नहीं है।

राम को शिव की बातों का कुछ भी अर्थ समझ में नहीं आया था। वह उनकी बातों का विश्लेषण अपने ढंग से करने लगा था और उसको कुछ भी सिर-पैर समझ नहीं आया था।

इसपर भी वह देख रहा था कि शिवकुमार के पास पैसा था और वह स्वयं निर्धन था। इस कारण वह मन में यह विचार कर कि अगले दिन से वह शिव की दुकान पर दो सौ रुपये की नौकरी करने आएगा, वहां से चल पड़ा। मार्ग में ही गोवर्धनलाल जी का मकान पड़ता था। गोवर्धनलाल घर पर नहीं था, बहिन गौरी घर पर थी।

गौरी ने राम को देखा तो बैठा, जल आदि पूछने लगी। राम ने कहा, "जीजा जी से मिलने आया था।"

"वे तो काम पर चले गए हैं। पिछले तीन दिन से अवकाश लिया हुआ था। आज अवकाश समाप्त हो गया है अतः वे चले गए हैं।"

"मैं यही पूछने आया था कि अब उस समिति का कार्य कब और कैसे चलेगा?"

"वे बता रहे थे कि प्रथम शिवकुमार न्यायालय में जाकर असली इच्छापत्र को स्वीकार करेंगे। पश्चात् परिवार के सब सदस्य भी ऐसा करेंगे, तब न्यायालय निर्णय देगा कि आपके जीजा सम्पत्ति के आदाता नियुक्त हुए हैं। तभी वे कार्यारम्भ कर सकेंगे।"

"बहिन ! मुझको विस्मय होता है कि जीजा जी तो पिता जी से कभी मिलने जाते नहीं थे। तुम भी तो पिता जी के घर में सबसे कम जाती थीं। फिर पिता जी ने मामूली उर्दू-फारसी पढ़े-लिखे व्यक्ति को तो बनाया कर्ता और मैं वकील परन्तु मुझको कुछ नहीं।"

"यह तो भैया, भाग्य की बात है। उनको दो लाख के लगभग मिल गया है और करने को काम मिल गया है। वे आज ही कह रहे थे कि अब वे नौकरी छोड़ देंगे।"

"अभी तो उनके रिटायर होने की आयु नहीं हुई। इस समय छोड़ेंगे तो पेंशन नहीं मिलेगी।"

"वे यह जानते हैं। परन्तु जब पिता जी के दिए दो लाख की वापिस आय

चौवीस हज़ार के लगभग मिलेगी तो फिर वीस रुपये की पेंशन के लिए दस वर्ष तक पाप कुण्ड में वैठे रहने की आवश्यकता क्या है ?"

"और तुमने इसपर आपत्ति नहीं की ?"

"आपत्ति क्यों करती। मुझको तो इसमें परमात्मा की अपने पर कृपा प्रतीत होती है कि वह उनको सद्‌वुद्धि दे रहा है।"

"पर वहिन, यह ईश्वर की कृपा है या भाग्य है ? भाग्य तो खोटा भी हो सकता है।"

"हां। परन्तु यह सौभाग्य है। इसीको हम ईश्वर की कृपा कहते हैं।"

"यह सौभाग्य कैसे वटोरा जा सकता है ?"

"देखो राम ! शास्त्रों में एक कथा आती है। लक्ष्मी, जो सौभाग्य की देवी है, दैत्यों की वेटी थी। परन्तु दैत्यों के पास वह तव तक रही जव तक वे दान देते थे, जव तक वे धर्म से धन-संग्रह कर, लोक-कल्याण के कार्यों में व्यय करते थे, अथवा जव तक वे 'सर्वं भूतेष्ववर्तन्त यथाऽऽत्मनि दयां प्रति'—सव प्राणियों को अपने ही समान समझकर उनपर दयादृष्टि रखते थे।...

" परन्तु उपरान्त वे परस्पर और परायों पर अत्याचार करने लगे। वे वड़ों एवं विद्वानों का आदर करना त्याग वैठे। वे 'उत्सूर्यशायिनश्चासन् सर्वे चासन् प्रगेनिशाः'—सूर्योदय होने तक सोने लगे। प्रातःकाल को भी रात समझने लगे। दैत्यगण 'कृतघ्ना, नास्तिकाः पापा, गुरुदाराभिमर्शिनः'—कृतघ्न, नास्तिक, पापी, गुरुभार्यागामी और अमर्यादित जीवन व्यतीत करने लगे।

" तव लक्ष्मी उनको त्यागकर देवताओं के पास आकर रहने लगी। "

"वहिन ! यह तो गपोड़े हैं। भला इनका क्या सम्वन्ध है भाग्य के साथ ?"

"राम, यह मैं नहीं कह रही; यह शास्त्र में लिखा है। वहस करनी है तो शास्त्र लिखने वालों से कर लेना। मैं तो यह कहने लगी थी कि तुम्हारे जीजा जी शास्त्र के इस कथन को मानते हैं और वे सौभाग्य प्राप्त कर रहे हैं।"

"क्या सौभाग्य पाया है उन्होंने ?"

" यह तुम उनसे पूछना। एक वात तो मुझको समझ में आ रही है। वड़े-वड़े अफसर अपने जीवन का मुख्य भाग दूसरों की सेवा में निकालते हैं। तव ही उनको पेट-भर खाने को प्राप्त होता है और वूढ़े होकर ही दूसरों की गुलामी से मुक्त हो पाते हैं। कभी-कभी तो एक नौकरी से छूटने पर भी उनके पापकर्म निःशेष

नहीं होते और उनको पुनः दूसरी नौकरी करनी पड़ती है। तुम्हारे जीजा ने तो पेंशन पाने की आयु से पूर्व ही पेंशन पा ली है।"

राम को समझ में आ रहा था कि उसकी बहिन ने ही अपने पति का मस्तिष्क खराब कर रखा है। इसपर भी वह विचार करता था कि गौरी का घर सामान से शून्य ही प्रतीत होता है। उसको बैठाने के लिए भी बहिन को चटाई ही बिछानी पड़ी थी। इसपर भी वह स्वस्थ एवं प्रसन्न दिखाई देती थी।

इसके विपरीत उसकी स्त्री चोर थी, इसपर भी कभी वह उसको मना करता था तो वह लड़ पड़ती थी। अब वह अपने लड़के की जेब में से रुपये चुराने लगी थी। अपने जीवन से असन्तुष्ट तो वह सदा ही रहती थी।

जब वकालत जमाने के लिए उसके पिता ने दस हज़ार रुपया दिया था तो रोहिणी के पिता ने उसको चकमा देकर आधे से अधिक रुपया ठग लिया था। एक दिन राम ने इस घटना पर दुःख प्रकट किया तो रोहिणी एक मास तक उससे बोली तक नहीं थी। कभी वह उसको बुलाता था तो जली-कटी गालियां सुनाने लगती थी।

६

राम घर पहुंचा तो रूपकृष्ण भोजन कर, अपने शयनागार में जा रहा था। इसपर राम ने पूछ लिया, "रूप ! तुमको कुछ काम नहीं, जो दिन के समय ही सोने जा रहे हो ?"

"भापा, छः महीनों से दफ्तरों की मिट्टी छान रहा हूं। काम न मिले तो क्या किया जाए ? सोना तो अपने बस की बात है। नौकरी नहीं।"

राम हंस पड़ा। हंसकर उसने पूछ लिया, "मैं तो समझा था कि तुम्हारी कहीं नौकरी लग गई है। तुम्हारी जेबों में रुपये दिखाई देने लगे हैं।"

रूप कुछ देर तक विस्मय में मुख देखता रहा। उपरान्त पूछने लगा, "तो क्या माता जी ने आपको बता दिया है ?"

"हां। वह नित्य तुमको रात घर से बाहर जाना जाते देख विस्मय करती थी और एक दिन यह जानने के लिए कि कितना कुछ तुम्हारे पास है, तुम्हारी जेब देखने लगी तो उसमें आशातीत धन देखा और अब नित्य उनमें देखने लगी है।"

"तो आप भी मां के रुपये चुराने की बात जानते हैं ?"

"वह तो उसका स्वभाव है।"

"पर भापा ! मेरा स्वभाव नहीं कि मैं जेब में रुपये बिना गिने रखूं। मुझको उनके रुपये निकालने का पता चल जाता रहा है। मैं चुप तो इस कारण हूं कि मैं समझता हूं, माता जी को व्यय के लिए लेने ही चाहिए। हां, कभी कुछ अधिक निकालेंगी तो बात बिगड़ जाएगी।"

"तो तुम जितना उचित समझते हो, स्वयं दे दिया करो।"

"जब एक महीने तक वे स्वयं नहीं निकालेंगी तो मैं देने लगूंगा।"

"तो रोज़ का खर्च कैसे चलेगा ?"

"आप जो लाते हैं वह कहां जाता है ?"

"मैंने आज से काम पर जाना छोड़ दिया है।"

"तो अब आप भी दिन के समय सोया करेंगे ?"

"नहीं। मैंने कल से नौकरी कर ली है। नौकरी का वेतन तो मास के पश्चात् ही मिलेगा।"

"कहां नौकरी कर ली है ?"

"तुम्हारे ताया शिवकुमार की दुकान पर।"

"ओह ! क्या देंगे वे ?"

"दो सौ रुपया मासिक।"

"बहुत बेईमान हैं वे। भला एक वकील को दो सौ रुपया मासिक ?"

"मार्केट में तो सप्लाई और डिमाण्ड (प्रदाय तथा मांग) का प्रश्न है। मुझको मेरी सेवाओं के लिए तो कोई इतना भी देने को तैयार नहीं होता था।"

"आप कितना पैदा कर लेते थे महीने में ?"

"कुछ न पूछो।"

"इसपर भी ताऊजी महाराज को तो आपकी विद्या का ठीक-ठीक मोल लगाना चाहिए था।"

"विवशता है रूप।"

अपनी बात में रामकुमार रूपकृष्ण की आय की बात भूल गया। रूपकृष्ण कमरे में जा सो गया।

अगले दिन से रामकुमार अपने भाई की दुकान पर जाने लगा। वह धोती-कुर्ता तो नहीं पहन सका परन्तु बन्द गले का कोट और दिल्ली वालों की टोपी पहनने लगा था।

शिवकुमार की दुकान पर ही गोवर्धनलाल और गोपाल से राम की भेंट हुई। गोवर्धन द्वारा नियुक्त ट्रस्ट लाला सुलक्षणमल की सम्पत्ति का प्रबन्ध करने के लिए तो तब बैठा जब लाला जी के इच्छापत्रानुसार गोवर्धनलाल को सम्पत्ति का आदाता नियुक्त कर दिया गया। इस नियुक्ति के पश्चात् गोवर्धनलाल ने एक पत्र चारों भाइयों को लिख दिया कि वह उनके पिता की सम्पत्ति का कर्ता नियुक्त हुआ है। उसको बहुत प्रसन्नता होगी, यदि वे उसके इस कार्य में सहयोग देंगे। वह उनको उनकी सेवाओं के लिए, अपने इस कार्य के लिए मिले धन में से, एलाउंस (भत्ता) देने को तैयार है। यह भत्ता परस्पर वार्तालाप से निश्चय हो सकता है।

पत्रों का उत्तर लिखित रूप में प्राप्त कर ही गोवर्धनलाल ने इस प्रबन्धकर्ता-समिति की सभा बुलाई। यह सभा बुलाई गई शिवकुमार की दुकान पर। गोवर्धनलाल आया तो राम को वहां एक पत्र टाइप करते देख, चकित रह गया। उसने पूछ लिया, "राम ! क्या कर रहे हो यहां पर ?"

"जीजा जी ! भैया की नौकरी कर ली है।"

"ओह ! और क्या काम करते हो ?"

"भैया का काम अब विदेशों से भी होने लगा है। उनसे पत्र-व्यवहार अंग्रेजी में और टाइप में होता है। यह काम मुझको करना पड़ता है।"

"यह तो बहुत अच्छा काम है।"

"पर भैया वेतन बहुत कम देते हैं।"

"क्या देते हैं ?"

"दो सौ रुपया महीना।"

"राम, छोड़ना नहीं। वेतन की बात गौण है। व्यापार में आना मुख्य है।"

राम विचार करता था कि जहां लाखों के वारे-न्यारे पल-पल में होते हैं वहां वेतन की बात भला गौण कैसे हो सकती है ! इसपर भी वह चुप था। शिवकुमार के स्वभाव को वह जानता था। दुकान पर इधर-उधर की बात वर्जित थी। कभी की जाए तो वह डांट देता था।

यद्यपि गोवर्धनलाल से वह बातचीत दुकान के पिछले कमरे में उसे बैठाकर

कर रहा था और शिवकुमार अभी वहां नहीं आया था, फिर भी वह किसी समय आ सकता था इस कारण उसने बात बदल दी। उसने पूछ लिया, "जीजा जी ! आपने पत्र में एलाउंस की बात लिखी है। वह तो विचार आपका ही था। आप ही बताइए कैसे होगा यह ?"

गोवर्धनलाल ने बता दिया, "पहले पूर्ण सम्पत्ति मेरे चार्ज में आ जानी चाहिए। मुझको विदित हो जाना चाहिए कि मेरे चार प्रतिशत में मुझको क्या मिलने वाला है। तब ही तो आपका भाग निश्चय कर सकता हूं।"

"भैया ने सम्पत्ति की एक सूची बनवाई है ?"

"वह लाला जी के इच्छापत्र में दी गई सूची के अनुसार होनी चाहिए। अन्यथा मुझको पुनः न्यायालय का द्वार खटखटाना पड़ेगा।"

शिवकुमार और गोपाल ने आते ही पूछ लिया, "आप झगड़े की बात घर में निश्चय करना चाहेंगे अथवा न्यायालय में ?"

"घर पर। परन्तु सब कुछ सत्य-सत्य निश्चय होनी चाहिए।"

"हां। सब कुछ सौगन्धपूर्वक होगा।"

सौगन्ध पर गोवर्धनलाल चुप कर गया। सौगन्ध का जादू वह पहले देख चुका था। उसने शिव की बात स्वीकार करते हुए कहा, "हां। तो वह सूची निकाल दो।"

राम उठकर गया और अपनी सन्दूकची में से एक सूची और उसके साथ प्रमाणपत्रों की फाइल उठा लाया। शिवकुमार ने स्थावर सम्पत्ति के साथ-साथ उन रुपयों की भी सूची दी जो उसने बैंक से निकाल, अपने खाते में जमा करा लिए थे।

गोवर्धनलाल ने सरकारी अधिकारपत्र को बैंक में दिखा, लाला जी के बैंकों में हिसाब की नकलें प्राप्त कर ली थीं। उसने उसके साथ शिवकुमार की सूचियों का मिलान किया। थोड़ा अन्तर निकला तो उसका स्पष्टीकरण लिखित मांग लिया। राम से उनके स्पष्टीकरण टाइप करवा, शिव के हस्ताक्षर करवा लिए।

इसपर गोवर्धनलाल ने यह निश्चय कर लिया 'इस समिति का प्रधान तथा मन्त्री का कार्य मैं स्वयं करूंगा। परन्तु अपनी सहायता के लिए एक मुन्शी नौकर रख लूंगा।'

राम ने सुझाव उपस्थित कर दिया, "इस कार्य के लिए रूप को रख लिया

जाए।"

"नहीं, राम ! इस काम के लिए वह ठीक नहीं।"

"क्यों ?"

"वह विश्वस्त व्यक्ति नहीं।

"क्या खराबी है उसमें ?"

"उसमें दो दोष हैं। एक तो वह जुआ खेलता है और दूसरा वह मद्य का सेवन करने लगा है। ये दोनों व्यसन बुद्धिभ्रष्ट कर देते हैं और इनसे नाश अवश्यम्भावी है।"

राम जुए की बात सुन, रूप की जेबों में रुपयों की बात समझ गया। इसपर भी मद्य सेवन की बात पर उसको विश्वास नहीं आया। उसने पूछ लिया :

"जीजा जी ! आपको यह कैसे ज्ञात है ?"

"देखो राम ! मैं डिप्टी कमिश्नर के कार्यालय में होने से बहुत बातों का ज्ञान रखता हूं। जो भी बात पुलिस के ज्ञान में आ जाती है वह न्यूनाधिक मात्रा में हमको ज्ञात होती रहती है। रूप का नाम मुझको पता न चलता, यदि उसने किसी पुलिस अधिकारी के सम्मुख यह न कह दिया होता कि मैं उसका सम्बन्धी हूं।"

राम मुख देखता रह गया। इसपर गोवर्धनलाल ने उसको कह दिया, "मेरी सम्मति उसको बता देना कि वह इस काम को छोड़ दे। कोई अन्य निर्दोष कार्य करने लगे। इसमें कभी भी, किसी समय भी वह कष्ट में पड़ सकता है।"

"परन्तु जब कोई ईमानदारी का काम न मिले तो क्या किया जाए ?"

"देखो राम ! यह भाग्य की विडम्बना है। इसके लिए सबसे पहले भाग्य को सुधारना चाहिए।"

"वह कैसे सुधरता है ?"

"तुम एक दिन अपनी बहिन से भी पूछ चुके हो। जो कुछ उसने बताया था, वही मैं जानता हूं। ईमानदारी के मापदंड दो हैं। एक तो समाज की स्वीकृति, दूसरे धर्म, शाश्वत धर्म की स्वीकृति।"

"परन्तु इन दोनों में तो परस्पर विरोध होता है।"

"हां। कभी-कभी ऐसा अस्थायी रूप में हो जाता है। यह तब और वहां होता है जब और जहां अशिक्षा, रूढ़ियों तथा अज्ञान के कारण, समाज की मति भ्रष्ट हो जाती है।

" उदाहरण तुम्हारे सामने है। जुएखाने में जानेवाले तो यही समझते हैं कि वे किसी व्यापार में लगे हुए हैं। वास्तव में यह व्यापार नहीं है। जुआरियों का समाज इसको अपने दूषित मन की अवस्था से व्यापार समझने लगता है।"

"और जीजा जी महाराज ! इस स्पैकुलेशन (सट्टे) को तुम क्या समझते हो ?"

"एक विचार से यह भी दोषयुक्त व्यवहार है। परन्तु इसमें एक गुण है। यह किसी कौमोडिटी (पण्य) के विषय में होने से उसमें व्यापार को प्रोत्साहन देता है। उदाहरण के रूप में किसी कम्पनी के हिस्से हैं। उस कम्पनी में रुपया लगाने में रुचि उत्पन्न करने में अथवा किसीमें रुपया लगाने में अरुचि उत्पन्न करने में यह सट्टा सहायक होता है। इस कारण इसमें कुछ तो गुण हैं। परन्तु जुए में तो यह गुण भी नहीं। वहां कोई 'पण्य' लक्ष्य नहीं होता। इससे वह तो सर्वथा ही पाप है।"

"प्रायः हिस्से खरीदने वाले तो उसको बेच देने के लिए ही खरीदते हैं। यह तो शुद्ध जुआ ही मानना चाहिए।"

"इसपर भी इस क्रय-विक्रय का प्रभाव पण्य पर होता है। इस क्रय-विक्रय को सीमा के अन्दर रखने के लिए कानून की आवश्यकता है। परन्तु मानव-बुद्धि अभी इतनी दोषपूर्ण है कि वह कोई ऐसा कानून विचार नहीं कर सकी जिससे सट्टे का दुरुपयोग रोका जा सके और इससे वह लाभ उठाया जा सके, जिसके लिए इसका आविष्कार हुआ है। यह सट्टेबाज़ी का दोष नहीं, अपितु यह मानव-बुद्धि का अधूरापन है, जिससे एक उपकारी कार्य में घुस गए दोषों को निकाला नहीं जा सका।"

राम युक्ति करने में गोवर्धनलाल को गौरी से भी तेज़ समझने लगा था। शिवकुमार ने बात पुनः समिति के विषय पर घुमा दी। उसने पूछा, "तो अब बताइए हम समिति के सदस्यों को क्या-क्या भत्ता मिला करेगा।"

"भत्ते के तीन ढंग हैं। एक तो जितना रुपया है। उसको भी पांच भागों में विभक्त कर लिया जाए। इसको मैं पसन्द नहीं करता। इससे धन का सम्बन्ध प्रबन्ध से नहीं रह जाएगा। दूसरा है, वेतन के रूप में। यह हम वार्षिक आय का अनुमान लगाकर उसमें से पांच सदस्य निकाल सकते हैं। एक तीसरा ढंग है, प्रति मीटिंग कुछ न कुछ निकाल लिया जाया करे।"

यह अन्तिम ढंग सबको पसन्द आया। शिवकुमार और गोपाल तो 'तुरन्त दान महाकल्याण' की कहावत को पसन्द करते थे। इसपर गोवर्धनलाल ने कह दिया, "एक सौ रुपया प्रति मीटिंग प्रति सदस्य। प्रधान को पचास और अधिक। एक क्लर्क का सौ रुपया मासिक वेतन। इसके अतिरिक्त अन्य कुछ व्यय प्रबन्ध के हेतु होंगे।"

"ठीक है।" सबसे पहले राम ने स्वीकार किया।

जितने निर्णय हुए थे, एक रजिस्टर पर लिख दिए गए थे। सभा विसर्जित हुई। गोवर्धनलाल ने सम्पत्ति का चार्ज ले लिया। शिवकुमार ने बैंकों से निकाला रुपया पुनः जमा करा दिया और कार्य होने लगा।

७

रूपकृष्ण से राम ने गोवर्धनलाल की बात बता दी। उसने अगले दिन रूप को सोए से उठाया। रूप अभी जागा नहीं था और राम को दुकान पर जाना था। रूप आंखें मलता हुआ पिता के समक्ष आ खड़ा हुआ। राम कपड़े पहन, दुकान पर जाने के लिए तैयार खड़ा था।

रूप ने पूछा, "भापा, क्या बात है?"

"पहले ज़रा खिड़की में से झांककर बताओ, सूर्य निकला है अथवा नहीं?"

"वह तो भापा, बिना झांके भी बता सकता हूं। सूर्य निकल आया है।"

"देखो रूप! तुम्हारी एक बूआ ने मुझको बताया है कि कोई कुछ भी काम करे, उसमें सफलता बिना भाग्य के प्राप्त नहीं होती। जुए में भी सफलता भाग्य से ही मिल सकती है। भाग्य एक समाप्त हो जाने वाली वस्तु है। यदि तुम इसका संचय किए बिना इसको व्यय करते जाओगे तो एक दिन यह समाप्त हो जाएगा और फिर असफलता आरम्भ हो जाएगी। तुम्हारी बूआ बताती थी कि भाग्य बटोरने के लिए सबसे प्रथम बात है कि सूर्योदय से पूर्व उठा करो, दूसरे यह कि अपनी कमाई से कुछ न कुछ दान-दक्षिणा दिया करो।"

"प्रातःकाल उठने की बात तो बहुत मुश्किल है, भापा। कभी-कभी तो रात को बहुत देरी हो जाती है। सवेरे जल्दी उठ सकता ही नहीं। हां, दान तो मैं करता हूं। जब मां मेरी जेब से नित्य निकालती हैं तो मैं इसको दान समझ लेता हूं।"

"यह घर में रहने और भोजन का मूल्य नहीं समझते क्या ?"

"ये सब अभी पिता जी देते हैं। उनमें और अपने में मैं अन्तर नहीं समझता।"

"ओह, परन्तु बेटा, तुम्हारे काम को मैं न तो अच्छा समझता हूं और न ही तुम्हारे फूफा लाला गोवर्धनलाल।"

"लाला गोवर्धनलाल ? भला वे क्या जानते हैं मेरे काम के विषय में ?"

"वे जानते हैं कि तुम प्रतिदिन जुआ खेलने जाते हो। तुम्हारे मद्य-सेवन के विषय में भी वे जानते हैं।"

'उनको किसने बताया ?"

"उनके कार्यालय में तुम्हारा नाम दर्ज है। जुआरियों और आदतन शराब पीने वालों का नाम उनके यहां लिखा जाता है। साथ ही तुमने किसी पुलिस अधिकारी के समक्ष कहा है कि तुम लाला गोवर्धनलाल के सम्बन्धी हो।"

रूपकृष्ण मुख देखता रह गया। उसे चुप देख राम ने कहा, "ये दोनों काम एक भाग्यशाली व्यक्ति कहता है कि गलत है।"

"मुझको उस कंगले की बात पर विश्वास नहीं। घर में भांग भुजती है परन्तु लोगों को उपदेश देते रहते हैं।"

"मैंने तो उनका उपदेश मानना आरम्भ कर दिया है।"

"क्या ?"

"यही कि जल्दी सो जाता हूं और सूर्योदय से पूर्व उठ पड़ता हूं। साथ ही दुकान जाते समय दो पैसे पहले दो मिलने वाले भिखारियों को दान कर जाता हूं।"

रूप खिलखिलाकर हंस पड़ा। जब पिता-पुत्र में वार्तालाप हो रहा था तब रोहिणी, रूप की मां, भी वहां उनकी बात सुनने आ गई थी। वह भी हंस पड़ी। रूप ने कह दिया, "भापा ! नौ मन चूहे खाके बिल्ली हज को चली है क्या ?"

"देखो राम, चहे तो मैंने खाए नहीं। वकालत का काम किया है। उसमें मुझको सफलता नहीं मिली। गोवर्धनलाल ने घूस लेना त्याग दिया था और सबका काम मुफ्त में दान-दक्षिणा समझ, करने लगा था और उसको सफलता मिलने लगी है। उसको चौबीस हज़ार रुपये की वार्षिक आय होने लगी है। उसमें भी उसने लगभग आधी हममें बांट देने का निर्णय कर लिया है। उसका कथन है कि उसको इससे और भी अधिक सफलता प्राप्त होगी।"

"भापा ! वह मूर्ख है। हाथ में आई वस्तु को जो नाली में फेंक देता है, उसकी बात मैं मान नहीं सकता।"

"तो मैं नाली हूं। वह तो मुझको एक सौ रुपया प्रति मीटिंग भत्ता देने को कह रहा है।"

"कैसी मीटिंग भापा ?"

"तुम्हारे बाबा ने इच्छापत्र में लिखा है कि उनकी सम्पत्ति का आदाता लाला गोवर्धनलाल हो और इस काम के लिए उसको लाला जी की सम्पूर्ण सम्पत्ति का चार प्रतिशत पारिश्रमिक मिले। वह लगभग सवा दो लाख बनता है। वह सवा दो लाख दस प्रतिशत ब्याज पर लगा हुआ है। उसकी आय लगभग तेरह हज़ार रुपये वार्षिक है। गोवर्धनलाल ने प्रबन्ध में अपनी सहायता के लिए एक समिति नियुक्त की है। उसमें अपने अतिरिक्त लाला जी के चारों पुत्र हैं। और सबके लिए उन्होंने उस समिति की सभा में उपस्थित होने का एक सौ रुपया प्रति मीटिंग देने का निर्णय किया है। मैं भी लाला जी का लड़का हूं। इस कारण कम से कम एक मीटिंग प्रति मास तो हुआ ही करेगी। अतः मुझको भी गोवर्धनलाल के भाग में से कुछ तो मिलेगा ही।"

"तो लाला गोवर्धनलाल ने मुझको उस मीटिंग में क्यों नहीं रखा ?"

राम ने हंसते हुए कहा, "समिति के सदस्य तो लाला जी के लड़के ही बनाए गए हैं। हां, मैंने उस समिति में तुमको नौकर रखने के हेतु कहा था, परन्तु तुमको जीजा जी ने स्वीकार नहीं किया। केवल इस कारण कि तुम मद्य-सेवन करते हो तथा जुआ खेलते हो।"

"समिति की नौकरी में क्या मिलता ?"

"एक सौ रुपया मासिक।"

"हा···हा···" ठहाका मारकर रूपकृष्ण हंस पड़ा। हंसकर उसने कहा, "भापा ! जानते हो पिछली रात मुझको क्या मिला है ?"

"क्या मिला है।"

"दस हज़ार से ऊपर।"

"दस हज़ार ? रूप, इसमें से कुछ दान-दक्षिणा कर दो, नहीं तो यह हराम की कमाई हज़म नहीं होगी।"

"भापा, सौ रुपये तो रात ही एक को दान कर दिए थे।"

"किसको।"

"एक है। बहुत सुन्दर है और मुझको बहुत प्रेम करती है।"

"ओह! तो तुम यह भी करते हो?"

"क्यों? इसमें क्या हानि है?"

"यह तो पाप है रूप!"

"मैं तो समझता हूं कि मैंने उसको सौ रुपया देकर भारी पुण्य किया है। वह एक अति निर्धन विधवा की लड़की है। अभी कुंवारी है। यदि एक-दो दिन और ऐसे ही लग जाएं तो मैं उससे विवाह कर लूंगा।"

राम का मस्तिष्क भन्ना उठा था। वह रूप की बात गले के नीचे उतार नहीं सका। राम के एक ही लड़का रूप था परन्तु घर में चार लड़कियां थीं। उनमें सबसे बड़ी लड़की कृपा विवाह के योग्य हो चुकी थी। तीन और भी थीं, जो घर में ही रहती थीं। एक दया चौदह वर्ष की थी। दूसरी छाया सात वर्ष की थी और सबसे छोटी पारो तीन वर्ष की थी। इन लड़कियों का विचारकर, राम ने अपनी पत्नी की ओर देखकर पूछ लिया, "क्यों देवी जी, क्या समझती हो तुम?"

"मैं इसमें क्या कह सकती हूं। वह आती है तो ले आएं। हां, इतना ध्यान रखना चाहिए कि मेरे घर में आकर यदि वह किसी अन्य से दान-दक्षिणा मांगने चल पड़ी तो मैं घर से धक्के देकर निकाल दूंगी।"

"पर मां! उसको इस घर में से निर्वाह-योग्य मिलता रहा तो फिर वह क्यों जाएगी।"

"वह इसलिए कि प्रायः लोग कमाई इसलिए नहीं करते कि उनके घर में खाने को नहीं होता। खाना-पीना तो बहुत कम से हो जाता है। देखो रूप, तुम्हारे पिता सौ-सवा सौ से अधिक कमाकर नहीं लाते थे और उसमें भी सात प्राणी भोजन पा लेते थे। इतना ही नहीं, उसमें से कुछ तुम्हारे मामा और मामा के लड़कों को भी मैं दे सकती थी। भोजन-वस्त्र के अतिरिक्त भी व्यय होते हैं और उनके लिए तो कुबेर का धन भी पर्याप्त नहीं हो सकता। प्रायः लोग परिश्रम और पाप-कर्म उन्हीं आवश्यकताओं के हेतु करते हैं। इसीसे कहती हूं कि उसको यहां लाओगे तो यहां रह सकेगी क्या?"

"मां? वह बहुत अच्छी है। कहो तो उसको पहले ट्रायल (परीक्षा) के तौर पर एक-दो दिन के लिए ले आऊं।"

"पहले उसको दिखा दो। तुम्हारी बहिनें हैं। दो विवाहने योग्य हो रही हैं उनके मन में कहीं कुछ विकार बन गया तो मुख पर कालिख पुत जाएगी।"

अपनी बहिन कृपा तथा दया की बात सुनकर रूप गम्भीर विचार में पड़ गया। उसने कुछ विचार कर कहा, "अच्छा मां! विचार करूंगा।"

रूप उस रात घर पर नहीं आया। अगले दिन रोहिणी ने अपने पति से कहा, "रात रूप घर पर नहीं आया।"

"उस विधवा की सुन्दर लड़की की संगत में रहा होगा।"

"मेरा मन डरता है। मैंने कल उसको लड़की को यहां लाने से मना तो नहीं किया था। इसपर भी भय का कारण तो है कि कहीं वह घर छोड़कर भाग न जाए। ले-देकर अपने पूर्ण जीवन की एक वही तो कमाई है।"

"तो आ जाएगा। कदाचित् वह उस लड़की को लेने गया होगा और उसने आने से ना कर दी होगी। ये वेश्याओं की लड़कियां भले घरों में आकर रह नहीं सकतीं।"

राम का दुकान पर जाने का समय हो गया तो वह चला गया। घर पर कोई नहीं जानता था कि रूप कहां गया होगा। इससे प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त कोई उपाय न था।

रूप मध्याह्न तक नहीं आया तो रोहिणी को चिन्ता लगने लगी। इसपर भी वह कुछ कर सकने में असमर्थ थी। तीसरे प्रहर रोहिणी का पिता कंवरसेन रूप को साथ लेकर आ गया। रोहिणी उनको देख भौचक्की खड़ी रह गई। कंवरसेन ने लड़की को सम्बोधित कर कहा "रोहिणी, इस अपने लाल को समेटो।"

"क्या हुआ है पिता जी?"

"इसकी जमानत दे छुड़ाकर लाया हूं।"

"रूप का हाल-बेहाल हो रहा था। उसके कपड़े गन्दे हो रहे थे। आंखें चढ़ रही थीं और ऐसा प्रतीत होता था कि वह कई दिनों का भूखा-प्यासा है।"

इसके पश्चात् कंवरसेन ने रूप से कहा, "देखो बरखुरदार! अगर तुमको इस बात का शौक है तो मेरे साथ आना। मैं तुमको क्लब का सदस्य बनवा दूंगा और वहां जुआ खेलने से कोई मना नहीं करता।"

"पर बाबूजी! यह क्यों?"

"यह कानून है। इसको समझने के लिए तुमको वकालत पढ़नी चाहिए थी।

अभी तो तुमको मेरी बात माननी चाहिए। उन लफंगों में मत खेलने जाया करो। देखो रूप, जहां तुम जाते थे, वहां जुआ नहीं, लूट होती है। वह पुलिस के लाभ के लिए खुला हुआ है। उसको जुआखाना कहते हैं। क्लब हम रईसों के लिए खुली है। एक व्यापारियों के लिए भी जुआ खाना खुला है। उसका नाम चेम्बर है।"

"चेम्बर के जुएखाने का नाम व्यापार है क्लब के जुएखाने का नाम मनोरंजन है और उस सदर बाज़ार वाले जुएवाले का नाम जुआखाना अर्थात् गुनाहों का घर है।

"अपने परिवार की मर्यादा का ध्यान करो तो अब वहां मत जाना।"

कंवरसेन गया तो मां ने पूछ लिया, "क्या हुआ है?"

"मां! रात किसीने पुलिस में रिपोर्ट कर दी थी, जब मैं जीत रहा था। पुलिस आई और हम सबको पकड़कर ले गई। हम तीस-चालीस थे। रात को हमको हवालात में रखा। सुबह मुझसे ज़मानत मांगी गई तो नाना जी का नाम याद आ गया। एक सिपाही को पांच रुपये दिए तो वह इनको न्यायालय से बुला लाया। ये मेरी ज़मानत देते नहीं थे। फिर पचास रुपये पर एक पेशेवर ज़ामिन ढूंढ़ लाए और तब छूटकर आया हूं।"

"तो अब?"

"अब स्नान आदि से मुक्त हो, बात करूंगा। हवालात तो बहुत ही गन्दा स्थान है। एक बड़ा-सा कमरा था। हम सब उस कमरे में बन्द कर दिए गए थे। रात-भर सब कमरे में ही पेशाब करते रहे। बहुत गंदा स्थान था। मुझको तो वहां रहते, पेशाब ही बंद हो गया था।"

रूप शौचादि के लिए चला गया। पकड़े जाने के उपरान्त भी रूप अपने जीत के रुपयों में से अधिकांश छिपाकर ले आया था। वह यह पुलिस-अधिकारियों को भारी घूस देकर ही बचा सका था।

८

रूप को समझ आ गई कि जहां वह जाता है वह बहुत बदनाम स्थान है। इसपर भी वह एक बार तो यह जानने के लिए कि उसकी प्रेमिका का क्या हुआ, वहां गया। सदर बाज़ार में दुकानों के पीछे माल के कई गोदाम थे। उनमें से एक

गोदाम में एक बनवारीलाल मनचले ने यह जुआ खेलने का प्रबन्ध कर रखा था। रूप के एक मित्र किशोरीलाल ने उसको वहां का पता बताया था और तब से वह वहां नित्य जाता था। उसे वहां जाते हुए तीन मास के लगभग हो चुके थे और इन तीन महीनों में वह तीन-चार दिन के अतिरिक्त जीत ही रहा था। हारने वाले दिनों में तो वह बीस रुपये हारकर खेलना बन्द कर देता था। उसके साथ खेलने वाले उसे प्रोनोट पर खेलने के लिए कहते भी थे, परन्तु वह कह देता, "न मैं उधार पर खेलता हूं, न ही किसी उधार लेकर खेलने वाले से खेलता हूं।" इससे बहुत लोग उससे नाराज़ हो जाते थे, परन्तु वह किसी का आई० ओ० यू० स्वीकार नहीं करता था। न ही स्वयं किसीको इस प्रकार का लिखकर देने को पसन्द करता था।

जुएखाने का मालिक उसके इस व्यवहार को पसन्द करता था। इससे दूसरे खेलनेवाले बहुत खार खाते रहते थे। जिस दिन पुलिस ने छापा मारा था उससे कई दिन पहले से रूप लगातार जीत रहा था। पिछले दिन तो उसने ग्यारह हज़ार के लगभग जीत लिया था। उसमें से एक हज़ार तो जुएखाने के मालिक का भाग बना था। उस दिन वह उसको कमीशन के रुपये देने गया तो बनवारीलाल ने कह दिया, "रूप जी ! आज तो आपने सबको भगा दिया है।"

"हां भापा, एक के बाद दूसरा मेरे साथ किस्मत आज़माई करने आता रहा और सब ऐसे जाते रहे थे जैसे मशीनगन के सामने निहत्थे खेत रह जाते हैं।"

"कितना है ?"

"तुम्हारा हिस्सा यह है। कमीशन तो प्रत्येक दांव के समय निकाल ली जाती थी, गिनाई तो वह एक हज़ार एक सौ रुपया से ऊपर निकली।" बनवारी ने कह दिया, "इसका मतलब है तुमको दस हज़ार मिला है।"

"हां।"

"आज किशनो से मिलने जाओगे ?"

"मैं किशनो को तो पसन्द नहीं करता। हां, उसकी लड़की सुमित्रा से बात-चीत किया करता हूं। किशनो मुझको टरका देती है। इसलिए मेरी रुचि नहीं रही।"

"भाई ! वह कुंवारी लड़की है। उसका तो विवाह होगा।"

"वह भी कर लूंगा।"

2731

"उसकी मां को क्या दोगे ?"

"वह क्या चाहती है ?"

"एक हज़ार नकद और लड़की के नाम कुछ जायदाद ।"

"जायदाद की बात तो यह है कि मैंने अभी अपने लिए भी कोई सम्पत्ति नहीं खरीदी । इस समय तक मेरे बैंक में पचास हज़ार के लगभग जमा हैं । वह लड़की का विवाह कर दे और फिर उसकी इच्छानुसार जैसी जायदाद वह कहेगी, खरीद दूंगा ।"

"मैं समझता हूं कि सौदा हो जाएगा ।"

"तो करा दो ।"

किशनो को बुलाया गया । रूपकृष्ण ने उसके लिए एक हज़ार रुपया तत्काल दे दिया और बनवारी के समक्ष वचनबद्ध हो गया कि दो-तीन दिन में विवाह कर लेगा । सुमित्रा को बुलाया गया तो उसने एक सौ रुपया उसे भी दे दिया । वह लेती नहीं थी । परन्तु बनवारी के कहने पर उसने पकड़ लिया ।

इसी बात के लिए अपने माता-पिता का मन तैयार करने के निमित्त रूपकृष्ण ने विवाह का संकेत कर दिया था । मां ने कुछ शर्तें रखीं तो वह उन शर्तों के विषय में सुमित्रा से बात करने के विचार से रात को वहां जा पहुंचा । सदा की भांति उस दिन भी वह जेब में बीस रुपये लेकर ही वहां पहुंचा था । सुमित्रा के विषय में वह उसकी मां से कुछ जेब में जीत का धन लेकर मिलने वाला था । उस दिन भी लाभ तो हुआ था, यद्यपि पिछले दिन की भांति तेज़ी से नहीं । उसकी जेब में पांच सौ रुपया हुआ तो उसने ताश के पत्ते मेज़ पर रख दिए । उसके साथियों ने कहा भी, "रूप ! हम तुमको इस प्रकार भागकर नहीं जाने देंगे ।"

"भाई ! मुझको तुम्हारी जेबें खाली होते देख दुःख होता है ।"

"हमको किशनो के दामाद को जीतते देख प्रसन्नता होती है ।"

"ओह ! मुझको उससे मिलने जाना है ।"

इतना कह वह बनवारीलाल की ओर जाने लगा कि उस गोदाम के दरवाज़ा खटखटाने का शब्द हुआ । किसीने भागकर दरवाज़ा खोल दिया । बनवारी ने आवाज़ भी दी । मत खोलो । उसको सन्देह हो गया था । वह स्वयं द्वार पर जा, कुछ ले-देकर उनको लौटा देता, परन्तु दरवाज़ा खुला तो फिर कुछ हो नहीं सका । वहां पर चालीस के लगभग लोग रंगे हाथ पकड़ लिए गए ।

रूपकृष्ण की जेब में पांच सौ के लगभग रुपये थे। वह उसने भीतर के सन्दूके की जेब में रखे और पुलिस के साथ चल पड़ा। बनवारीलाल भी उसके साथ ही था।

कोतवाली में पहुंच, सबको हवालात के एक कमरे में बन्द कर दिया गया। रूप ने बनवारीलाल से कहा, "भापा! अब क्या होगा?"

"तुम्हारी जेब में कितना रुपया है?"

"पांच सौ के लगभग है।"

"ठीक है, दिन निकलने दो। इतने से हम दोनों छूट सकेंगे।"

दिन निकलने पर बनवारीलाल ने रूप को कहा, "एक पांच रुपये निकालो।"

रूप ने पांच का एक नोट निकाल दिया। इसपर उसने पूछा, "कोई जामिन है?"

"एक लाला कंवरसेन एडवोकेट हैं।"

बनवारी ने एक सिपाही को, जो कारागृह के बाहर बन्दूक लेकर खड़ा था, पांच का नोट दे दिया और कंवरसेन एडवोकेट को बुलवाने के लिए कह दिया।

कंवरसेन आया और वृत्तान्त जान मजिस्ट्रेट के समक्ष उसको ले गया। उसने जमानत मांगी तो कंवरसेन एक पेशेवर जामिन को ले आया। जब जमानत हो गई तो कंवरसेन ने एक सौ रुपया रूप से मांग लिया। रूप ने वे रुपये दिए तो कंवरसेन ने पचास रुपये जामिन को दिए। दस रुपये मजिस्ट्रेट के अर्दली को दिए तथा शेष चालीस अपनी जेब में रख, रूपकृष्ण को उसके घर ले गया। बनवारी तो हवालात से ही अपने घर चला गया था। रूप जब घर पहुंचा तो मध्याह्नोत्तर दो बज चुके थे।

आज सायं पांच बजे रूप बनवारी के घर पहुंचा। घर को ताला लगा था। वहां से वह किशनो के मकान पर पहुंचा। वह जुएखाने और बनवारी के घर से कुछ अन्तर पर था। घर का दरवाजा खुला था परन्तु घर में कोई नहीं था। घर के नीचे एक ठेला खड़ा था और घर का सामान निकाल ठेले में लादा जा रहा था। रूप ने ठेले वालों से पूछा, "यह कहां लिए जा रहे हो?"

"प्रीमियर फरनिशिंग हौस में। यह सामान भाड़े पर था।"

"और इसके लोग?"

"हम नहीं जानते ।"

वहां से लौट, जुएखाने पर पहुंचा । वहां भी कोई नहीं था। हताश रूपकृष्ण वहां से लौट, घर पहुंचा । उस समय राम दुकान से लौट चुका था और रूप के साथ घटी घटना का वृत्तान्त, जैसा रोहिणी जानती थी, सुन चुका था ।"

"सुनाओ बरखुरदार ! आज कहां गए थे ?"

"जिस दुकान पर काम करता था, वह बन्द हो गई है।"

"तो अब कोई और दुकान करोगे ?"

"नानाजी बता गए हैं कि दो स्थान पर जुआ खेलना मान-प्रतिष्ठा का काम माना जाता है । एक क्लब में तथा दूसरे 'चेम्बर' में ।"

"हां, समाज ने वहां पर इसकी स्वीकृति दे रखी है। परन्तु रूप, बात वही काम की है जो गोवर्धन जी ने बताई थी । बिना भाग्य के कुछ नहीं बनता । किसी काम के अथवा उस काम के स्थान के अच्छा-बुरा होने के अतिरिक्त लाभ तो भाग्यशालियों को मिलता है ।"

"भापा, यह तो जाना, परन्तु जहां से लाभ हो और जिस काम से लाभ हो, वह काम ही तो अच्छा माना जाएगा ।"

रूपकृष्ण अपने पिता की भांति अच्छे-बुरे काम का मापदण्ड लाभ ही मानता था। राम इस बात पर आज ही गोवर्धनलाल से विचार करता हुआ आ रहा था।

गोवर्धनलाल दुकान पर आया था। शिवकुमार ने अपने एक सौदे की बात बताई । उसने बताया था : 'जीजा जी ! मैंने ईमानदारी से लाला जी का सब रुपया आपके पास लिखा दिया था। इस ईमानदारी से मुझे पांच लाख रुपये की हानि हुई थी। परन्तु भगवान की कृपा से आज ही एक सौदे में मैं अपनी हानि पूरी कर आया हूं । सरकार ने सेना के लिए पांच लाख टन भूसे का टेंडर मांगा था। वह टेंडर मैंने दो रुपये टन अन्य व्यापारियों से अधिक भरकर दिया हुआ था। मुझको स्वीकार होने की आशा नहीं थी । आज टेंडर खुले तो मेरा टेंडर स्वीकार हो गया । इसके लिए मुझे अफसरों का मुंह मीठा करना पड़ा है ।'

गोवर्धनलाल ने पूछ लिया, 'कितना खर्च करना पड़ा होगा ?'

'एक लाख रुपया—कुछ अग्रिम और कुछ वचन से देना पड़ा है ।'

'और माल ?'

'वह तो मेरे पास तैयार रखा है । कल से डिलीवरी आरम्भ हो जाएगी ।'

'ठीक है शिवकुमार ! तुम बेईमानी से मृत पिता को धोखा देना चाहते थे। वह तुम कर नहीं सके और अब बेईमानी से सरकार को धोखा दे आए हो। जहां तक तुम्हारा सम्बन्ध है, तुम वहीं के वहीं हो।'

'दोनों में भारी अन्तर है जीजा जी।'

'क्या अन्तर है?'

'एक तो वह व्यक्ति जिसको धोखा दिया जाना था, जानता नहीं था और इस सौदे में तो सब कुछ स्पष्ट है। सौदा स्वीकार करने वाले भी जानते थे कि मुझको दस लाख रुपये से ऊपर तो अनायास ही लाभ होने वाला है। इसके अतिरिक्त सामान्य लाभ तो है ही।'

'किसको विदित था?'

'सरकारी अफसरों को।'

'तो यह भूसा उस अफसर के घर बंधी गाय के लिए था?'

'नहीं। था तो सेना के जानवरों के लिए।'

'और क्या सेना उस अफसर के बाप की कमाई पर पलती है?'

'नहीं, सेना'''हां, सेना तो सरकार की है। परन्तु सरकार ने ब्रिगेडियर माईकल को इस काम के लिए नियुक्त जो किया हुआ है।'

'जैसे आपके पिता जी मुझको सम्पत्ति का प्रबन्ध करने के लिए नियुक्त कर गए हैं। यदि मैं भी आपसे कुछ ले-देकर वह पांच लाख छोड़ देता तो मैं भी ब्रिगेडियर माईकल बन जाता।'

'परन्तु जीजा जी ! आप वही कुछ करते जो ब्रिगेडियर साहब ने किया है, तो मैं कैसे दोषी हो जाता।'

'परन्तु आपने घूस जो दी है।'

'यह तो हम सब अधिकारियों को देते हैं। इस सौदे में कुछ अधिक देनी पड़ी है। दोष सरकार का है कि उसने ऐसे अफसर रखे हुए हैं।'

'सरकार की बात सरकार निपट लेगी। वह ऐसे अधिकारियों को नियुक्त कर अपनी जड़ों को खोखला कर रही है। मैं तो तुम्हारी बात कर रहा हूं। तुम यदि मुझको धोखा देकर या मुझको ले-देकर लाला जी का पांच लाख बचा लेते तो पाप के भागी तो तुम हो ही जाते। मेरे बेईमान बनने से अथवा कुछ बनने से तुम कैसे पाप से मुक्त माने जा सकते हो?'

'हमारे व्यापार का नियम है कि जव तक हम कानून (राजनियम) से वचे रहते हैं तव तक हम धर्मात्मा हैं। धर्म समाज का नियम है और जव समाज का नियम हमको छूता नहीं तो हम अधर्मी नहीं हो सकते।'

'नहीं शिव जी! यह ऐसा नहीं। धर्म एक शाश्वत वस्तु है। वह ध्रुव की तरह सत्य एवं अटल है। समाज तथा राज्य के नियम उस ध्रुव सत्य धर्म के विपरीत न होने चाहिए, न होते हैं। कभी धोखाधड़ी से अथवा घूस देने से समाज के नियम उस ध्रुव धर्म के विपरीत हो सकते हैं, अथवा उनको किया जा सकता है। परन्तु उस धर्म द्वारा विरोध होते ही पाप सम्पन्न हो जाता है। उसका फल मिलता है।'

'देखिए संत जी महाराज! हमारे लाला जी समाज एवं राजनियम का पालन करते हुए ही लाखोंपति वने हैं और मैं भी इसी प्रकार लाखों कमा रहा हूं। राज नियम से वचकर मेरा जीवन सुखमय हो जाएगा। उपरान्त जो होगा, तव विचार कर लूंगा।'

'अच्छा, एक वात वताओ। वह दुकान के वाहर, एक कुत्ता दस मिनट से मुख उठाए खड़ा है, क्यों?"

'उसको इस वक्त यहां से नित्य एक रोटी मिला करती है।'

'यह कोई अच्छी परिस्थिति है?'

'नहीं। आज रोटी वची नहीं। इस कारण इसके लिए है ही नहीं। और यह कुछ देरी तक और ठहरकर चला जाएगा।'

'तो यह दुःख, क्लेश और कष्ट पाएगा?'

'हां। यह तो है।'

'वताओ, इसने क्या किया है कि इसको यह परतन्त्रता का भोग करना पड़ रहा है और उसमें भी दुःख और कष्ट पृथक् हैं।'

'यह तो मैं वता नहीं सकता।'

'मैं वताता हूं। शास्त्र में लिखा है—

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसा वृताः।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥

'वह मनुष्य जो आत्मा का हनन करता है अर्थात् ईश्वरीय नियमों को, जिनको दूसरे शब्दों में शाश्वत धर्म कहा है, नहीं मानता, वह मृत्यु के उपरान्त असुर

योनियों में जाकर अन्धकार में विचरता है।

'इसका अर्थ यह है कि धर्म का पालन न करने वाले देहावसान के उपरान्त इन कुत्ते, बिल्ली इत्यादि की योनियों में विचरते हैं। इन योनियों में प्राणी अन्धकार में वास करते हैं। अर्थात् इनमें ज्ञान, विवेक नहीं होता। ये अपनी अवस्था को सुधारने के हेतु कोई उपाय विचार नहीं कर सकते। इनका जीवन आसुरी अर्थात् इन्द्रियों के विषयों के अधीन होता है। समय आने पर ये वासना-तृप्ति कर लेते हैं अथवा भूख-प्यास लगने पर उनकी तृप्ति करते हैं। शीत लगने पर धूप में जा खड़े होते हैं अथवा गर्मी लगने पर जल में नहा लेते हैं। परन्तु यदि उन विषयों की तृप्ति के साधन भी समक्ष उपलब्ध न हों तो ये नहीं विचार कर सकते कि वे साधन कहां से प्राप्त करें।

'इसलिए शिव जी ! मैं कहता हूं कि धर्म की अवहेलना अति भयानक वस्तु है।'

रूप ने जब यह कहा कि नेक काम वह है जिससे लाभ हो तो राम को उक्त पूर्ण वार्तालाप, जो शिवकुमार एवं गोवर्धनलाल के मध्य हुआ था, स्मरण आ गया। उस समय जब कुत्ते को जिह्वा बाहर निकाले, मुख उठाए, दुकान की ओर देखते खड़े पाया तो रामकुमार को रोमांच हो आया था। शिवकुमार भी बहुत बेचैन दिखाई देने लगा था। इसपर भी उसने गोवर्धनलाल से पूछ लिया, 'परन्तु यह कैसे प्रतीत हो कि धर्म यह है। राजनियम तो लिखे रहते हैं। कानून की पुस्तक सरकारी छापेखाने में बिकती है। क्या धर्म की कोई पुस्तक भी ईश्वर के किसी छापेखाने में बिकती है?'

गोवर्धनलाल हंस पड़ा था। उसने कहा था, 'हां धर्मशास्त्रों में लिखा है। लिखा है सदा सब आयुओं में और सब मनुष्यों के लिए धर्म है :

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

'अन्य सब धर्म इनके अनुकूल ही होने चाहिए। इनके विपरीत नहीं हो सकते।'

'शिवकुमार !' गोवर्धनलाल ने आगे कहा, 'तुमने अस्तेय धर्म का विरोध किया है।'

'तो तुम समझते हो कि मैं इस कुत्ते की योनि में पड़ूंगा?' शिवकुमार ने

पीतमुख हो पूछ लिया।

'यह मैं क्या जानूं, देखो शिव जी! एक चोर चोरी करता है उसको न्यायाधीश दो मास का दण्ड दे, मुक्त कर देता है। दूसरे को वैसे ही अपराध पर दो वर्ष की कैद का दण्ड देता है। वह न्यायाधीश इस भदेभाव में कुछ तो कारण रखता ही होगा। परन्तु हम कैसे कह सकते हैं कि न्याय करते समय न्यायाधीश क्या विचार कर कितना दण्ड दे देगा। हमको तो इतना ज्ञान होना पर्याप्त है कि जो कुछ कर रहे हैं वह दण्डनीय है।'

शिवकुमार ने मुनीम को कहा, 'मोहन भैया, इस कुत्ते को आज आधा सेर दूध पिला दो।'

मुनीम गया और सामने ही हलवाई की दुकान से दूध लाकर कुत्ते को पिलाने लगा।

राम ने सोचा कि शिव भैया का, गोवर्धनलाल जी की बात से, हृदय कांप उठा मालूम होता है। वह स्वयं भी उस समय से अपने जीवन का अवलोकन कर रहा था। वकालत के दिनों में अनेकों बार वह किसी सम्भावित ग्राहक के आने पर मुख उठा उसके कथन की प्रतीक्षा करता रहता था। प्रायः आने वाला कुछ इधर-उधर की बात कर चल देता था। कोई विरला ही ऐसा होता था जो उसकी आय की बात करता था। वह अपनी अवस्था की तुलना उस दुकान के बाहर खड़े कुत्ते की अवस्था से करता था। वह भी अपनी अवस्था सुधारने में कुछ नहीं कर सकता था। जो मनुष्य उससे गप्पें हांकने आते थे, वह उनको यह नहीं कह सकता था कि वे किसी मुकदमे की बात करें। यह ठीक कुत्ते को रोटी फेंकने अथवा न फेंकने के सदृश ही था।

राम ने अब पुनः रोमांच अनुभव करते हुए कहा, "रूप! मैं तो तुमको समझा नहीं सकता। मैं केवल इतना ही कह सकता हूं कि जुआ खेलना श्रेष्ठ कार्य नहीं है!"

रूप को भी हवालात में रात्रि के आठ घण्टे नरक तुल्य ही प्रतीत हुए थे। वह विचार करता था कि यदि पिछली रात वह हार में होता और अपने बीस रुपये हार चुका होता और तब पकड़ा जाता तो वह आज दिन-भर छूट न सकता। कदाचित् एक रात उसको और कारागार में वास करना पड़ता। इस बात को स्मरण कर उसको भी रोमांच हो आया। उसके पूर्ण शरीर में कंपकंपी उठी और

वह अपने पिता को बातचीत में ही छोड़, अपने कमरे में चला गया। राम उसके पीछे वहां जा पहुंचा। उसने वहां जा, उससे पूछा, "मैं एक बात जानने आया हूं कि क्या कंवरसेन जी को भी कुछ देना पड़ा है तुमको?"

"मैंने उनको एक सौ रुपया दिया था। उसमें से उन्होंने दस रुपये तो मजिस्ट्रेट के अर्दली को दिए थे। पचास रुपये पेशेवर ज़ामिन को दिए थे और शेष उन्होंने अपनी जेब में रख लिए थे।"

"ठीक है, तुम कंवरसेन जी के एहसान से मुक्त हो।"

"जी, रहना ही चाहिए। वह अच्छा आदमी नहीं।"

रूपकृष्ण विचार करता था कि वह सदर बाज़ार वाले जुएखाने में न तो अब जा सकता है, न ही जाने की उसकी इच्छा हो रही थी। सबसे अधिक निराशा का कारण किशनो की लड़की सुमित्रा थी। वह उसपर मुग्ध था और अब उसको मिलना ही कठिन हो रहा था।

९

पूर्ण सम्पत्ति का चार्ज लेने में तीन मास लग गए थे। कई मकान थे, कोठियां थीं और पोर्ट ट्रस्टों के तथा अन्य कम्पनियों के हिस्से थे। सबसे पहली बात जो गोवर्धनलाल ने की, वह रुपये को सुरक्षित करना था। उसने उन व्यवसायों में लगा रुपया, जिनको सुदृढ़ नहीं समझता था, नकद कर बैंकों में करा लिया। मकानों की देख-रेख के लिए उसने एक मुन्शी सौ रुपये मासिक पर रख लिया। वह मकानों एवं कोठियों की देख-रेख करता था तथा किराया वसूल करता था।

गोवर्धनलाल ने नौकरी छोड़ दी थी। अब वह भगवद्भजन एवं सुलक्षण ट्रस्ट के प्रबन्ध में समय व्यतीत करता था। अपनी सास कर्मदेवी और अपनी साली सदारानी के भाग के रुपये के प्रबन्ध का भी वही विचार करने लगा था।

गौरी को भी अपने पिता की सम्पत्ति में से एक लाख रुपये से अधिक प्राप्त हुआ था। अतः उसने इस पूर्ण धन को धर्मार्थ व्यय करने का निश्चय कर लिया था। वह इस धन को बैंक के पक्के खाते में रखे हुए थी और उसके ब्याज से वह निर्धनों के बच्चों को छात्रवृत्ति देने का विचार रखती थी।

इस प्रकार पति-पत्नी अपने मन में लोक-कल्याण के कार्यों में लीन, काम कर

रहे थे। इन दिनों एक विशेष बात होने लगी थी। रूपकृष्ण राम का लड़का अपनी बूआ गौरी से मेल-मुलाकात बनाने लगा था।

गोवर्धनलाल का नियम था कि वह प्रातःकाल ४ बजे सोकर उठता एवं शौचादि से निवृत्त होकर अपने पूजा-पाठ में लीन हो जाता था। सात बजे वह इस कार्य से निवृत्त होकर प्रातः का अल्पाहार लेता था। गौरी बनाती थी और पति-पत्नी दोनों खाते थे। यही समय होता था जब रूपकृष्ण इनसे मिलने आ जाया करता था। वह मकान के नीचे से आवाज़ देता, "फूफा जीऽऽ !"

और गोवर्धनलाल ऊपर बैठक में से झांककर उसे देखता तथा आवाज़ दे देता, "आओ रूप, आ जाओ।"

मकान का दरवाज़ा खुला रहता था। वह ऊपर चढ़ आता। अल्पाहार में प्रायः चाय, मक्खन-टोस्ट और बाज़ार की मिठाई होती थी। रूप को निमंत्रण मिल जाता तो वह फूफा एवं फूफी के लिए चाय तैयार करने बैठ जाता और टोस्टों में मक्खन लगा देता।

वह जानता था कि उसका फूफा एवं फूफी अब अच्छे-खासे धनी हो गए हैं। परन्तु उनके घर में सामान तथा उनके वस्त्रादिक बहुत ही साधारण रहते थे। उनके घर में फर्श पर बैठने के लिए चटाइयां रहती थीं। दो तख्तपोश थे और उनपर दरी तथा चादर-तकिया और ओढ़ने को दोहर ही होती थी। अति शीतकाल के लिए उन्होंने दो रज़ाइयां बनवाई हुई थीं।

घर में दो सन्दूक थे एवं बहुत संक्षेप में बर्तन—बस यही कुछ था। एक नौक-रानी रखी हुई थी जो घर की सफाई और बर्तन साफ कर जाती थी।

गोवर्धनलाल और गौरी विस्मय करने लगे थे कि रूप उनके घर में क्यों आने लगा है। रूप की चार बूआ थीं तथा तीन फूफा। एक बूआ तो विधवा थी। सदा-रानी भी धनवान हो गई थी। अन्य दोनों फूफियां तो पूर्व ही धनवान थीं। इस कारण यदि धनाकर्षण होता तो वह उनके यहां भी—विशेष रूप से सदारानी के यहां जाता। परन्तु उनको विदित था कि वह उनके मुहल्ले की ओर भी नहीं जाता था। यह तो स्पष्ट था कि उसको ला० सुलक्षणमल की सम्पत्ति में से भाग मिला है, तब से ही वह उनके घर में आने-जाने लगा था।

कभी पति-पत्नी इस विषय पर विचार भी करते थे। गोवर्धनलाल का विचार था कि वह चोरी करने आता है। गौरी का कथन था, "चोरी करने के विचार से

आता होता तो एक-दो दिन में ही उसको समझ जाना चाहिए था कि यहां चोरी करने के योग्य कुछ है नहीं। मैं भूषण तक तो पहनती नहीं, फिर चोरी किस बात की करेगा ?

" इसपर भी यह तो स्पष्ट ही है कि उसका यहां आना हमारे धन से सम्बन्ध अवश्य रखता है। जब हम सर्वथा अकिंचन थे, तब तो वह कभी आया नहीं था।"

गोवर्धनलाल घर में नकदी भी नहीं रखता था। उनके घर का व्यय अति अल्प था। उनका मुख्य व्यय था रोटी और नौकरानी। इन दोनों पर पचास रुपये मासिक से अधिक व्यय नहीं होता था। इतना भी वे मास में केवल दो बार बैंक से निकलवाते थे। अर्थात् उनकी जेब में कभी भी पचीस रुपये से अधिक नहीं होता था। विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति वे एक पाठशाला के मुख्याध्यापक के द्वारा देते थे और सबके लिए इकट्ठा चैक दे आते थे। वे इस दिशा में दान-दक्षिणा से प्रसन्न नहीं थे। इसके लिए वे विचार कर रहे थे कि कोई अधिक उपकारी कार्य करें।

इसपर भी वे रूप को न तो मना करते थे, न ही उससे किसी प्रकार का कठोर व्यवहार रखते थे। यूं अनेकानेक विषयों पर बातचीत होती रहती थी। किसी भी विषय पर वार्तालाप आरम्भ होता, उसका अंत सदैव परमात्मा, आत्मा एवं प्रकृति पर हो जाता। गौरी ने शास्त्राध्ययन किया था और वह अपनी बुद्धि से विचार कर इस परिणाम पर पहुंची थी कि संसार की सब समस्याएं इन तीन मूल पदार्थों के रहस्य को जानने से सुलझ जाती हैं।

प्रातः का अल्पाहार लेते हुए कभी रूपकृष्ण पूछ लेता, "बूआ, तुमने अपने घर में सुख-सुविधा का सामान भी नहीं रखा हुआ ?"

"मैं तो समझती हूं कि हमको सब प्रकार की सुविधा प्राप्त है। मकान अति साफ-सुथरा है। इसकी सफाई नित्य-प्रति होती है। वस्त्र हम धुले हुए पहनते हैं। साथ ही तन ढांपने और ऋतुओं के शीतोष्ण सहन करने योग्य भी पहन लेते हैं। भोजन जहां तक पेट भरने और शरीर को चालू रखने के लिए चाहिए वह हम लेते ही हैं। साथ ही उसको स्वादिष्ट बनाने के लिए हम सदा यत्नशील रहते हैं। तुम यदि कोई त्रुटि देखते हो तो बताओ।"

"एक-आध भूषण पहन लिया करती तो ठीक रहता।"

"जहां तक सुख-सुविधा का प्रश्न है, भूषण न होने से किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता।"

"क्या किसी वस्तु का अभाव भी समझ नहीं आ रहा ?"

"अभाव ?" गौरी गम्भीर हो गई। कुछ विचारोपरान्त पूछने लगी, "अभाव का अनुभव करना अपने मन की बात है अथवा दूसरों के मन की ?"

"दोनों के, संसार देख चर्चा करता है। इससे अपने मन में अनुभव होता है।"

"क्या चर्चा सुनी है तुमने ?"

"मेरी माता जी कहती हैं कि आप दोनों, फूफा-फूफी, अति कंजूस हैं। एक चूड़ी तक तो बनवाई नहीं। वे कहती हैं कि जब तो आपके पास धन नहीं था तब तो भला यह भूषणों का न होना समझ आता था, परन्तु अब तो ईश्वर की कृपा है और अभी भी आपने हाथ में चूड़ी नहीं पहिनी।"

"तुम्हारी माता जी को मेरे भूषण देखने की आवश्यकता क्यों हुई ? केवल एक व्यक्ति ही इस विषय में विचार करते हैं। एक वे हैं जो मुझको भूषित अर्थात् सुन्दर बना देखना चाहते हैं। मुझको ऐसा देखने का अधिकार इस संसार में केवल एक व्यक्ति को है। वे हैं तुम्हारे फूफा। इसमें ये कहते हैं कि कृत्रिम सजावट से मेरा स्वाभाविक सौन्दर्य अधिक आकर्षक है। एक बार इस विषय में इनसे बात हुई भी थी। तुम्हारे फूफा कहने लगे, 'गौरी, बिरादरी के लोग तुम्हारे हाथों को रीता देख बुरा मानते होंगे।'

"मेरा स्पष्ट उत्तर था, 'उनको अपने विषय में टीका-टिप्पणी करने का अधिकार मैंने कभी नहीं दिया। इसपर भी यदि कोई अपने मन में कुछ कहता है तो वह अनधिकार चेष्टा करता है।'

" 'परन्तु समाज ने यह रिवाज़ बना रखा है कि सधवा स्त्रियां कम से कम हाथ में चूड़ी अवश्य पहनती हैं।'

" 'समाज का यह अनधिकारपूर्ण निश्चय है। मैं इसको मानने के लिए तैयार नहीं। आज चूड़ी की बात मानूं। कल पर्दे की बात होगी। उपरान्त नित नये निकलने वाले फैशनों की बात होगी और न जाने क्या-क्या बन्धन यह समाज जारी करेगा और मुझको मानने पड़ेंगे। मैं समाज को अपनी सीमा के अन्दर रखना चाहती हूं।'

" 'इससे तो कोई स्त्री तुमको विधवा भी मान सकती है।'

" 'मैं यही पूछना चाहती हूं कि देखने वाली स्त्रियों को मेरे विवाहित तथा सधवा होने के विषय में जानने की लालसा क्यों है ? समाज को भी मेरे सधवा

होने की डुग्गी पीटने की आवश्यकता क्यों अनुभव हुई है? क्या समाज को मेरे सधवा होने का मुझपर टैक्स लगाना है? देखिए जी! यह सब व्यर्थ की बातें हैं। भूषण तो शरीर को अलंकृत करने के हेतु होते हैं। मुझको अपने को सजाने की आवश्यकता केवल आपके लिए है। आपको यदि मुझको सजाने की आवश्यकता अनुभव होती है तो जैसे भी मन करे सजा लीजिए। संसार में अन्य किसी व्यक्ति को इस विषय में न तो इच्छा करने का अधिकार है न ही मैं अधिकार किसीको देना चाहती हूं।'

" 'रूप, इस वार्तालाप के पश्चात तुम्हारे फूफा जी ने मुझको भूषण पहनाने का यत्न नहीं किया।"

"परन्तु अपने मन की संतुष्टि के लिए क्या इनको पहनने की आवश्यकता नहीं?"

"मन के विषय में जानते हो कि यह क्या और कब चाहता है?"

"नहीं।"

"तो सुनो। मन एक यंत्र है, जो हमारे आत्मा से संलग्न है। यह इच्छा करता है, यह इसका गुण है। परन्तु क्या इच्छा करे, यह इसपर पड़े संस्कारों के कारण है। इसमें प्रमाण यह है कि सब व्यक्तियों पर संस्कार एक समान नहीं होते, अतः सबकी इच्छाएं भी समान नहीं होतीं। कोई मद्य-सेवन की इच्छा करता है तो कोई मिष्टान्न खाने की। कोई खुली वायु में भ्रमण करने की इच्छा करता है तो कोई बन्द हाल में बैठ नाटक देखने की। किसीको दुःखान्त नाटक पसन्द है तो किसीको सुखान्त। अभिप्राय यह है कि मन उसी बात की इच्छा करने लगता है जिसके संस्कार मन पर पड़े होते हैं।

"मन की इच्छाएं उन संस्कारों को बदलने से बदल सकती हैं। मैंने अपने मन पर ऐसे संस्कार डाल रखे हैं कि मुझको तुष्टि होती है संसार में लोगों का कल्याण होते देखने में।

"कल्याण का अर्थ उनकी इच्छाएं पूर्ण करना नहीं। कल्याण का अर्थ है जिससे वे संसार के बंधनों में से मुक्त होने में सुविधा समझें। इस संसार में सबसे बड़ी हित की बात यह है कि उनमें, इस संसार के नैसर्गिक कष्टों को सहन करने एवं उन कष्टों से पृथक् होने की क्षमता उत्पन्न करना।"

"ये नैसर्गिक कष्ट क्या हैं?"

"एक तो हम इस पृथ्वी पर कैद हैं। इसको त्याग हम कहीं भी जा नहीं सकते। यह पंचभौतिक शरीर इस पृथ्वी पर ही वास करने योग्य है। हम इसको आत्महत्या कर त्याग सकते हैं। परन्तु विना कर्म-फल से मुक्त हुए इस शरीर के बंधन से, एतदर्थ इस पृथ्वी के बंधन से, मुक्त नहीं हो सकते। एक शरीर को त्यागकर तो कर्म-फल से बंधे हुए तुरन्त ही दूसरे शरीर में चले जाएंगे।

"इस पृथ्वी के अतिरिक्त हम देशों की सीमाओं में बंधे हैं। यह ठीक है कि देशों की सीमाएं मनुष्य-निर्मित हैं। परन्तु इस प्रकार के मूर्ख समाज में, और उसपर एक दुर्बल एवं पराधीन समाज में, जन्म लेना भी तो अपने कर्म-फल से बंधा होना है : अतः कर्म-फल से मुक्त होना और संसार के अधिक से अधिक प्राणियों को कर्म-फल से मुक्त करना परम कल्याण का कार्य है। यह करने से मेरे मन को तुष्टि होती है। मैं इस दिशा में कुछ सीमा तक यत्नशील रहती हूं।"

"परन्तु बूआ ! कर्म-फल से मुक्त कैसे हुआ जा सकता है ?"

"एक तो कुछ कर्म हैं जिनको करते हुए हमारे मन पर व्यर्थ की बातों के संस्कार नहीं पड़ते। उन विषयों में शास्त्र ने यह कहा है :

यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर॥

"रूप ! इसका अर्थ यह है कि यज्ञ के अतिरिक्त किए हुए कार्य मनुष्य को बांधते हैं। अर्थात् यज्ञ कार्य-बंधनकारी नहीं होता। इसलिए मनुष्य को यज्ञ कर्म-फल की इच्छा त्यागकर करने चाहिए।"

"यज्ञ का अर्थ क्या है ? हवन को ही यज्ञ कहते हैं न ?"

"नहीं, उसको अग्निहोत्र कहते हैं। यह तो केवल एक प्रकार का यज्ञ है। यज्ञ के अर्थ अग्निहोत्र से अति विशाल हैं। लोक-कल्याण के उन कार्यों को जिनमें अपना हित गौण हो, यज्ञ-कर्म कहते हैं। स्कूल खोलना, अस्पताल खोलना अथवा अन्य ऐसे कार्य जिनमें से सर्वसाधारण का हित हो, वे यज्ञ होंगे। यह भी लिखा है :

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः।
भुंजते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्॥

"इसका अर्थ यह है कि यज्ञ करने के उपरान्त जो कुछ बचे, उसे अपने प्रयोग में लाने वाला व्यक्ति सब पापों से मुक्त हो जाता है। वे लोग जो केवल अपने लिए

ही उपार्जन करते हैं वे पाप-भक्षण करते हैं।

"बूआ ! तो तुम लोग क्या यज्ञ-कर्म करते हो ?"

"देखो रूप, ठीक-ठीक तो तुम्हारे फूफा तुमको बताएंगे। मैं तो इतना ही जानती हूं कि मेरी कमाई लगभग छः हज़ार छः सौ रुपया वार्षिक है। इसका पांच हज़ार हम दान कर देते हैं। उसमें से कुछ तो विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां जाती हैं। कुछ अकस्मात् किसी कष्ट में फंसे व्यक्ति के सहायतार्थ सुरक्षित रखते हैं। एक पुस्तकालय तथा वाचनालय इस मुहल्ले में निर्माण किया जा रहा है। शेष लगभग डेढ़ हज़ार रुपया वार्षिक हम अपने खाने-पहनने तथा भ्रमण करने में व्यय करते हैं।

" मुझको अपने किए पर तुष्टि होती है। इसकी तुलना में भूषण पहनने से भला क्या तुष्टि हो सकती है।"

"बूआ, अन्य लोग, मेरा अभिप्राय है अन्य स्त्रियां, तो ऐसा नहीं समझतीं ?"

"हां। मैं जानती हूं। मैं उनके विचार पर आपत्ति नहीं करती। इतना ही कहना चाहती हूं कि उनकी भूषणादि-प्रसाधन की इच्छा उनके संस्कारों का फल है। जब तक उनके संस्कार ऐसे हैं, वे इन पदार्थों के लिए इच्छा करती हैं। उनके भूषणों से मेरा झगड़ा नहीं। मेरा झगड़ा तो उनके संस्कारों से है। जब संस्कार ठीक हो जाएंगे, तब वे अपने-आप ही इनको छोड़, किसी कल्याण-मार्ग की इच्छा करने लगेंगी।"

१०

रूपकृष्ण जिस दिन जुएखाने में पकड़ा जाकर एक रात के लिए हवालात में रखा गया था, उस दिन से ही वह अपने विषय में एक दूसरे ढंग से विचार करने लगा था। ला० कंवरसेन, जो उसकी ज़मानत का प्रबन्ध कर उसको छुड़ाकर लाया था उसको क्लब अथवा चेम्बर में जाकर जुआ खेलने की शिक्षा दे गया था। वह उसकी इस शिक्षा का अर्थ लगा रहा था कि जुआ खेलना बुरी बात नहीं। बुरी बात है जुआ खेलते पकड़ा जाना। यदि किसी ढंग से वह पकड़े जाने से बच सकता है तो जुआ खेल सकता है। वह कंवरसेन के कथन का यह अर्थ समझा था कि चेम्बर और क्लब उसकी रक्षा कर सकते हैं। इसपर भी वह ताश के पत्तों से जुआ

खेलने में तो कठिनाई अनुभव नहीं करता था। ताश के पत्तों को चलाना तो वह पांच मिनट में सीख गया था। परन्तु क्लब का सदस्य होने और फिर वहां के सदस्यों में प्रतिष्ठित होने का भास कराने में तो कई बातें करनी आवश्यक थीं। इसके लिए तो उसको पहली किसी जगह पर अपना काम जमाना आवश्यक था, या तो वह किसी अफसरी की नौकरी प्राप्त करे अथवा वकालत इत्यादि व्यवसाय में प्रवेश पाए। यह उसको अपने मान का प्रतीक नहीं लगता था; दूसरा सुझाव था चेम्बर में जाने का। वहां हिस्से इत्यादि बेचने तथा खरीदने का काम करना तो और भी दुस्तर था। इस विद्या को सीखने एवं समझने के लिए वह किसी व्यापारी की संगत में रहना चाहता था। वह शिवकुमार से इस विषय में बात करने गया था परन्तु शिवकुमार तो इस प्रकार का व्यापार करता नहीं था। वहां गोवर्धन को इस विषय में कुछ कहते सुन, वह उससे अधिक जानने एवं अनुभव प्राप्त करने के लिए उसके घर में जाने लगा। गोवर्धनलाल से तो इस विषय में कुछ विशेष सहायता मिली नहीं। हां, गौरी बूआ की बातों में उसको रुचि होने लगी।

गौरी बूआ का कथन था—अपनी आवश्यकताओं को न्यूनातिन्यून कर रखना चाहिए। रूप अपने कालेज के दिनों में पढ़ा था कि जीवन-स्तर ऊंचा करने से समाज में उन्नति होती है। जीवन-स्तर का अर्थ है जीवन की आवश्यकताएं। मतलब यह है कि जीवन की आवश्यकताएं बढ़ाना उन्नति का लक्षण है। उसने यह गौरी को बताया तो वह इसका अर्थ न समझती हुई अपने भतीजे का मुख देखने लगी। कुछ विचार करने पर वह इस भ्रमोत्पादक कथन में दोष-बिन्दु को जान गई। उसने पूछ लिया, "रूप, यह तुमको किस मूर्ख ने बताया है।"

"मूर्ख नहीं बूआ! दिल्ली के बहुत बड़े अर्थशास्त्री ने मुझको कालेज में पढ़ाया था।"

"तो कालेज में नौकरी पा जाने से वह मूर्ख नहीं रहा? देखो, मैं तुमको उसकी मूर्खता का भास कराती हूं। उन्नति के अर्थ वह नहीं समझा, उन्नति का अर्थ न समझने में कारण उसको मानव का अथवा मानव-समाज का मिथ्या ज्ञान है।

"रूप, आवश्यकताएं कई प्रकार की हैं। आत्मिक, मानसिक, बौद्धिक एवं शारीरिक। वास्तव में मानसिक, बौद्धिक और शारीरिक अवश्यकताएं तो एक ही श्रेणी की हैं। मन, बुद्धि और शरीर—तीनों एक प्रकृति के भिन्न-भिन्न रूप होने

से इनकी आवश्यकताएं भी एक ही श्रेणी में आ जाती हैं। इनको प्राकृतिक आवश्यकताएं कहते हैं। शरीर, बुद्धि एवं मन उन्नति का सोपान है। इनको उन्नत करना ही चाहिए। इनकी उन्नति का लक्ष्य आत्मोन्नति है।"

"परन्तु शरीर, बुद्धि एवं मन की आवश्यकताओं में उन्नति पूर्ण उन्नति का पर्याप्य कैसे हो गया ? प्रायः तो आवश्यकताओं में उन्नति इन तीनों में ह्रास के लक्षण होते हैं।

"इसीलिए मैं कहती हूं कि आवश्यकताओं को बढ़ाना उन्नति नहीं, प्रत्युत इसको कम करना उन्नति है।"

"बूआ ! मोटरगाड़ी हो तो उपकारी काम करने में तो सुविधा होती है।"

"मैंने मोटर बनाने में आपत्ति नहीं की। परन्तु मोटर के प्रयोग करने की आवश्यकता पर विचार व्यक्त किए हैं। अब मैं हूं। मुझे न तो किसी रोगी की चिकित्सा करने जाना है, न ही मेरा कारखाना है, जो उसका माल एक स्थान से दूसरे पर पहुंचाना है। इसलिए मुझको मोटर की आवश्यकता नहीं। इसी प्रकार तुम्हारे फूफा हैं। उनका काम दिल्ली में कुछ सम्पत्ति का प्रबन्ध करना है। उनके लिए मोटरगाड़ी को छोड़ घोड़ागाड़ी की भी आवश्यकता नहीं। इस कारण उनके लिए किसी प्रकार की सवारी का रखना उन्नति का लक्षण नहीं हो सकता।"

"इससे तो मोटर, हवाईजहाज और इसी प्रकार के सामान का आविष्कार ही न होता। इनके आविष्कार के लिए इनके बिकने का प्रबन्ध होना चाहिए। बिकने के प्रबन्ध के लिए इनका अधिक से अधिक प्रयोग होना आवश्यक है। इसलिए जनता में इनके प्रयोग का अभ्यास डालना ही उन्नति में सहायक होना है।"

गौरी हंस पड़ी। हंसते हुए वह कहने लगी, "क्या युक्ति करना सिखाया है तुम्हारे अध्यापकगण ने ! किसी विवाह के अवसर पर एक दावत में मिठाई की आवश्यकता है। इस कारण मिठाई बनाने की दुकान होनी चाहिए। दुकान को चलाने के हेतु मिठाई के खरीदार होने चाहिए। खरीदारों के बहुत संख्या में होने के लिए जनता में मिठाई खाने का अभ्यास होना चाहिए। इस अभ्यास को डालने को मिठाई खाने की उन्नति का लक्षण कहना चाहिए।

"रूप, इस युक्ति के लंगड़ेपन का लक्षण यह है कि मिठाई खाने से पेट खराब होता है। इसके खाने से शारीरिक अवनति होती है, उन्नति नहीं।"

रूप इस युक्ति से चकित रह गया। वह अर्थशास्त्र तो पढ़ा था परन्तु

'लॉजिक' नहीं पढ़ा था। उसको संदेह हुआ कि कदाचित् उसका अर्थशास्त्र पढ़ाने-वाला प्रोफेसर भी लॉजिक का ज्ञाता नहीं था। परन्तु, वह विचार करता था कि क्या उसकी बूआ लॉजिक पढ़ी है। एक बात अभी तक उसके मन में स्पष्ट नहीं हुई थी। इससे उसने पूछ लिया, "तो बूआ ! उन्नति किसको कहते हैं ?"

"देखो बेटा, प्राणी में तीन पदार्थों का संयोग है। शरीर, मन एवं आत्मा। यदि हम प्राणी की उन्नति चाहते हैं, तो उसमें इन तीनों पदार्थों की उन्नति आवश्यक है। शरीर पंचभौतिक है। मन सात्त्विक अहंकार एवं तेजस् अहंकार के संयोग से बनता है। जीवात्मा, जैसे मैंने ऊपर उपनिषद् के प्रमाण से बताया है, शरीर-रूपी वृक्ष पर पक्षी की तरह बैठा है जो वृक्ष का फल खाता है अर्थात् शरीर का भोग करता है। अब प्राणी के इन तीनों अंगों में उन्नति होनी चाहिए।

"शरीर में उन्नति का अर्थ यह है कि इसमें ज्ञानेन्द्रियां और कर्मेन्द्रियां सुदृढ़ होनी चाहिए। इसपर बाहरी दबाव, ऋतु, आयु और सुख-दुःख की विषमता सहन करने की शक्ति होनी चाहिए। इसमें विपरीत परिस्थितियों में कार्य करते रहने की क्षमता होनी चाहिए। जहां तक शारीरिक उन्नति का सम्बन्ध है यह मोटर पर सवारी करने से प्राप्त नहीं होती।

"मन में उन्नति का अर्थ है कि इसमें इन्द्रियों पर अधिकार करने की शक्ति होनी चाहिए। इन्द्रियां विषय-वासना की ओर जाती हैं। मन इनका अध्यक्ष है। यह मन का कार्य है कि इनपर नियंत्रण रखे।

"मन का एक आवश्यक अंग बुद्धि है। इस बुद्धि के द्वारा मन उचित एवं अनुचित में निर्णय करता है। बुद्धि के ठीक कार्य करने में जहां इसकी निर्मलता की आवश्यकता है, वहां इसकी प्रेरणा भी शुद्ध होनी चाहिए। प्रेरणा संस्कारों से मिलती है। अतः मन के संस्कार श्रेष्ठ होने चाहिए। श्रेष्ठ संस्कारों से संयुक्त मन-बुद्धि ठीक ढंग से कार्य करने में प्रेरक होते हैं। दोनों मिलकर शरीर की इन्द्रियों पर नियंत्रण रखते हैं।

"जीवात्मा मन तथा बुद्धि द्वारा, शरीर की इन्द्रियों पर ऐसे अधिकार रखता है जैसे रथ का स्वामी सारथी द्वारा घोड़ों पर। जीवात्मा की शक्ति का स्रोत है परमात्मा का सामीप्य। यह प्राप्त होता है सत्संग से। सत्संग भले मनुष्यों की संगत को अथवा श्रेष्ठ साहित्य के पढ़ने को कहते हैं।"

रूप, आज गौरी बूआ के घर से ऐसे लौटा जैसे हाथ में मशाल लिए हुए

चला आ रहा हो। परन्तु वह एक भूल कर बैठा। उसने मशाल अपनी आंखों के समक्ष कर रखी थी। इससे उसकी आंखें चुंधियां रही थीं और वह चलता-चलता मार्ग पर ठोकर खा गया।

वह अपनी बूआ के घर से अपने घर को जा रहा था। मार्ग में उसकी दृष्टि एक स्त्री पर पड़ी। वह उसको पहचान गया। उसने भी इसको पहचाना। यह किशनो थी। किशनो ने रूपकृष्ण को देखा तो मुख मोड़ लिया और उसकी दृष्टि से बचकर निकल जाने का यत्न करने लगी। रूप को सुमित्रा याद आ गई। वह किशनो के समक्ष जा खड़ा हुआ। किशनो ने माथे पर त्यौरी चढ़ाकर उसकी ओर देख पूछ लिया, "क्या है?"

"आप कहां रहती हैं?"

"किसलिए पूछते हो?"

"सुमित्रा से विवाह के लिए।"

"पुलिस के हवाले कर दूंगी। एक भली औरत को सरे बाज़ार तंग कर रहे हो?"

रूप डर गया। उसने मार्ग छोड़ दिया। किशनो निकल गई। जाते समय किशनो के मुख पर एक धीमी-सी मुस्कराहट दिखाई दी। रूप ने यह देखी तो उसके मन में संशय उत्पन्न हो गया। वह उस औरत के माथे पर त्यौरी देखकर भयभीत हो, एक ओर हट गया था। उसने समझा था कि भूल कर बैठा है। वह किशनो नहीं थी। वह भूल से किसी भली औरत का मार्ग रोक खड़ा हुआ था। परन्तु क्षीण-सी मुस्कराहट से उसको यह समझ आया कि वह किशनो ही थी और उसको डरा सकने पर वह मुस्कराई थी।

रूप वहीं खड़ा विचार करता रह गया। उसके मन में विचार आया कि अपने मन के संशय को दूर करना चाहिए। संशय को दूर करने के लिए यह पता करना चाहिए कि वह औरत कहां रहती है। शेष पीछे विचार किया जाएगा।

रूप साधारण जुआरियों की भांति प्रकृति नहीं रखता था। वह तो समझता था कि जुए की आय हराम की नहीं है। इस कारण उसको व्यर्थ में गंवाना नहीं चाहिए। इसपर भी उसने परिश्रम किया था। उस कमाई को करने के लिए उसने भारी खतरा मोल लिया था। अतः वह उस रुपये को, जो जुएखाने से कमा कर लाता था, अपने गाढ़े पसीने की कमाई से कम नहीं समझता था। अतएव

उसको उस सहस्र रुपये का दुःख था जो उसने किशनो को सुमित्रा के विवाह के लिए दिया था।

बुरे के घर तक पहुंचने के विचार से वह उस औरत के पीछे-पीछे चल पड़ा। वह एक मानोचित अंतर पर उसका पीछा करता गया। वह औरत सदर बाज़ार की ओर नहीं जा रही थी। इससे उसके द्वारा विस्मय नहीं हुआ। वह उससे सदर बाज़ार वाला मकान खाली किया जाता देख चुका था। वह औरत नई सड़क पर से होती हुई चावड़ी बाज़ार और फिर अजमेरी गेट में से होती हुई पहाड़गंज की ओर चल पड़ी।

वह औरत पहाड़गंज में बड़ी मस्जिद के समीप एक गली में घुसी तो उसकी दृष्टि रूपकृष्ण पर जा पड़ी। वह स्वभाववश अपने घर में जाने से पूर्व अपने पीछे देख रही थी। गली के बाहर रूपकृष्ण को खड़ा देख वह ठिठककर खड़ी रह गई। रूपकृष्ण को विस्मय में खड़ा देख उसे अपने सन्देह की पुष्टि मिली।

गली वीरान थी। उन दिनों पहाड़गंज नगर के भले लोगों की बस्ती नहीं थी। बहुत ही छोटी जाति एवं निम्न सामाजिक स्थिति के लोग वहां निवास करते थे। दिन के दस बजे का समय होने के कारण प्रायः लोग अपनी मेहनत-मज़दूरी करने गए हुए थे।

वह औरत किशनो ही थी। रूप का अनुमान यथार्थ था। उस औरत ने भी समझ लिया था कि वह रूप को धोखा नहीं दे सकी। इसपर उसने हाथ के संकेत से रूप को बुला लिया। रूप उसके सम्मुख जा खड़ा हुआ। औरत ने पूछ लिया, "किसलिए आए हो?"

"सुमित्रा को ले जाने के लिए।"

"विवाह करोगे?"

"हां।"

"तो मां को मुझसे मिला दो।"

"कहां।"

"इसी मकान में।" उसने उस मकान की ओर संकेत कर दिया, जिसके सामने खड़ी थी।

"तो तुम यहां रहती हो?"

"हां।"

"और सुमित्रा ?"

"वह भी मेरे साथ ही है।"

"परन्तु समाज में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति की वीवी इस मुहल्ले में मिलने नहीं आएगी। तुम मेरे साथ अभी चलो। मैं तुमको अपनी मां से मिला देता हूं।"

"इस समय मुझको फुरसत नहीं।"

"तो किस समय मेरे साथ चल सकोगी। वताओ यहां लेने आऊं या कहीं अन्य स्थान पर मिलोगी ?"

"यहीं मिलूंगी। कल प्रातःकाल छः वजे।"

"मैं सुमित्रा के लिए कुछ लाया हूं।"

"मुझको दे जाओ। मैं उसे दे दूंगी।"

"नहीं। यह तो उसके हाथ में ही दे सकता हूं।"

"तो वह नीचे नहीं आ सकती।"

"पर मैं तो ऊपर जा सकता हूं ?"

"नहीं, लाला जी घर पर नहीं हैं ?"

"कौन लाला ?"

"लाला वनवारीलाल।"

"वे यहां क्या करते हैं ?"

"अपनी कमाई का भोग करते हैं।"

"मैं उनसे मिलना चाहूंगा।"

"तो तुम वताओ। वे तुमको कहां मिलें ?"

"टाउन हाल के सामने मलिका विक्टोरिया के वुत के नीचे कल प्रातः छः वजे। वहां से हम दोनों मां के पास चले जाएंगे।"

"अच्छी वात है। अव तुम जाओ।"

रूप लौटा तो किशनो उस मकान में नहीं गई जिसके वाहर खड़ी थी। रूपकृष्ण गली के वाहर निकला और वाज़ार में पहुंच, घूम गया। एकाएक उसको विचार आया कि वह औरत उसको धोखा दे गई है। वह यहां नहीं रहती। इससे वह पुनः गली में झांककर देखने लगा। उसको किशनो गली के आगे जाती हुई दिखाई दी। किशनो की पीठ उसकी ओर थी। वह दीपक की ओर पतंगे की भांति आकर्षित हो, पुनः उसके पीछे चल पड़ा। कुछ दूर जाकर वह औरत पुनः

एक मकान के बाहर खड़ी हुई और फिर घूमकर पीछे को देखने लगी। उसने अब भी रूपकृष्ण को अपने पीछे आते देखा तो हंसने लगी। उसने पुनः रूपकृष्ण को समीप बुलाया और कहने लगी, "तो तुमको विश्वास नहीं आया न ?"

"नहीं। आधे घण्टे में तुम दो बार झूठ बोल चुकी हो। पहले तुम भली औरत बनीं। उपरान्त तुम इस पिछले मकान में रहने वाली बनी। लाला बनवारी-लाल घर पर नहीं और वे कल मुझसे टाउन हाल के बाहर मिलने आएंगे। यह भी झूठ ही हो सकता है।"

"तुम ठीक समझे हो कि मैंने झूठ बोला है परन्तु लाला जी तुमसे मिलने आते यह सत्य है।"

"कैसे मानूं। कुछ भी तो प्रमाण होता।"

"तो आओ भीतर आ जाओ। प्रमाण मिल जाएगा।"

एक क्षण के लिए तो रूप का हृदय कांपा। वह सोचता था कि भीतर जाकर कहीं भारी मुसीबत में न फंस जाए। अतः अब वह झिझक अनुभव करने लगा था। उसको भीतर आने में संकोच करते देख, किशनो ने मुस्कराते हुए कहा, "क्यों ? अब डर लगने लगा है ?"

"हां ! तुम जैसी झूठ बोलने वाली औरत से और हो ही क्या सकता है ? मैं अपना पिस्तौल घर से लाया नहीं।"

पिस्तौल की बात उसने झूठ कही थी। उसने क्या, उसके बाप-दादा ने भी पिस्तौल को छूकर नहीं देखा था। परन्तु पिस्तौल का प्रभाव उस औरत पर भिन्न हुआ। वह यह समझी कि वह सत्य ही कोई रईसज़ादा है। इसपर उसने कह दिया, "अच्छा ठहरो। मैं अभी आती हूं।"

यह कह, मकान के भीतर चली गई। रूपकृष्ण बाहर गली में मकान के भीतर की तुलना में अपने को सुरक्षित पाता था। उसने यह समझा कि कदाचित् वह सुमित्रा को लेकर बाहर आएगी और उससे भेंट प्राप्त करने का यत्न करेगी। उसकी जेब में भेंट के लिए कुछ था ही नहीं। यह उसने भी झूठ बोला था।

सुमित्रा नहीं आई। लाला बनवारीलाल तहमत और कुर्ता पहने निकला।

११

रूपकृष्ण बनवारीलाल को देख, निश्चिन्त हो, मकान में चला गया। वहां सुमित्रा से भी मिला। इसके उपरान्त बनवारीलाल तथा किशनो से अगले दिन विक्टोरिया के बुत के नीचे मिलने का समय निश्चित कर वह सन्तुष्ट मन, घर लौट आया।

वह ठोकर खा गया। बनवारी उससे मिला और फिर उसको वह अपनी मां से मिलाने ले गया। रूप के सौभाग्य से रामकुमार अभी दुकान पर जाने की तैयारी ही कर रहा था, जब ये वहां पहुंचे। मकान की बैठक में रूप बनवारी लाल को बैठा ही रहा था कि राम बैठक में रूप को किसीसे बातें करने का शब्द सुन, आ पहुंचा और वह बनवारीलाल को वहां देख, भौचक्का हो, खड़ा रह गया। एकाएक राम के मुख से निकल गया, "बनवारी ! अरे तुम यहां कैसे ?"

"राम ? तुम ! यह रूप तुम्हारा लड़का है क्या ?"

"क्यों ? इससे तुम्हारा क्या मतलब है ?"

बनवारीलाल उठ खड़ा हुआ और बोला, "भैया रूप, मैं गलत स्थान पर आ गया हूं।" परन्तु राम ने, जो दरवाज़े में खड़ा था, मार्ग नहीं छोड़ा। उसने कहा, "भाई ! बैठो न, चाय-पानी पीकर जाना। बहुत दिनों के बाद मुलाकात हुई है।"

"रूप !" राम ने लड़के को कहा, "जाओ ! मां को कहना कि एक अतिथि आए हैं। अल्पाहार उनके लिए भी बनेगा।"

रूप इसका अर्थ न समझते हुए टुकर-टुकर मुख देखता हुआ, बैठक-घर से निकला और ऊपर की मंज़िल पर मां को चाय की कहने चला गया।

बात बनवारीलाल ने आरम्भ की। उसने कहा, "सुमित्रा से तुम्हारे शाहज़ादे विवाह करेंगे।"

"सुमित्रा !"

"हां। अब वह सयान हो गई है।"

"ओह ! समझ गया। तो यह लड़का तुमसे जुएखाने में मिला है ?"

"वह जुआखाना मेरा ही था। अब पुलिस के हस्तक्षेप के कारण टूट गया है।"

"सुमित्रा कितने वर्ष की हो गई है अब ?"

"पन्द्रह से कुछ ही कम है।"

राम एक क्षण तक विचार करता हुआ मौन रहा। फिर बोला, "यह शादी

तव ही हो सकती है जव तुम श्रौर तुम्हारी किशनो दोनों, उससे न मिलने का वचन दें।"

वनवारीलाल ने अभी उत्तर नहीं दिया था कि रूप मां को चाय के लिए कह आया। उसे आया देख, वनवारीलाल ने अपने मन की वात कह दी, "देखो राम! यह विवाह मैं नहीं कर रहा। ये तुम्हारे साहवज़ादे उसकी मुहव्वत में फंस गए हैं। मेरे लिए तो यह व्यापार की वात है।"

"कितना रुपया तुमको लड़की के लिए चाहिए?"

"पचास हज़ार रुपया।"

"वह तो हमारे पास है नहीं।"

"तुम्हारे साहवज़ादे के पास है।"

"क्यों रूप?"

"है तो। परन्तु वह लाला जी के लिए नहीं। वह तो सुमित्रा के लिए है। मैं लाला जी से मुहव्वत नहीं करता। मैं तो सुमित्रा से मुहव्वत करता हूं।"

वनवारीलाल ने कह दिया, "एक ही वात है।"

"तव ठीक है। विवाह हो जाए और मैं इतने की सम्पत्ति उसके नाम खरीद दूंगा। वह उसकी आय खा सकेगी।"

रूप की वात दोनों वड़ों को विस्मय में डालने वाली सिद्ध हुई।

वनवारीलाल ने कह दिया, "तो रूप, तुम सुमित्रा से भी मुहव्वत नहीं करते। मुहव्वत अंधी होती है। तुम तो समझ-समझकर पग रख रहे हो?"

रूप ने केवल यही कहा, "मुहव्वत नहीं, यह काम है जो अंधा होता है।" रूप गौरी की युक्तियां प्रयोग करने लगा था। उसको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि अव उसकी आंखें मशाल के सामने न होने से चुंधिया नहीं रहीं। वह वनवारी और किशनो की वात से सतर्क हो गया था।

वनवारीलाल ने कह दिया, "तो मैं लड़की की मां से वात कर वता सकूंगा कि उसको रूप की वात स्वीकार है अथवा नहीं?"

"तो फिर कव तक पता देंगे?"

"एक सप्ताह के भीतर। मगर तुम हमारे मकान पर मत आना। वह इसको पसन्द नहीं करती।"

रूप चुप रहा तो राम ने कह दिया, "इस वार आओ तो किशनो और सुमित्रा

को लेते आना।"

"क्यों ?"

"मैं ज़रा उसकी रूपरेखा देखना चाहता हूं।"

"तो तुमको अभी भी सन्देह है ?"

"हां।"

बनवारीलाल गया तो राम ने रूप से पूछा, "आर यू हैड एण्ड टेल इन लव विद दिस गर्ल ?" (क्या तुम इस लड़की से बुरी तरह मुहब्बत में फंस गए हो ?)

"नहीं।" यह रूप का उत्तर था।

"तो सुनो ! यह बनवारीलाल मेरा मित्र था। किशनो सुमित्रा की मां हमारी सांझी रखेल थी। किशनो के गर्भ ठहरा तो वह हम दोनों के पास से भाग गई। अब मुझको सन्देह होता है कि बनवारीलाल ने उसको छिपा लिया होगा। एक बार बनवारीलाल ने मुझको कहा था कि किशनो के लड़की हुई है और उसका नाम सुमित्रा रखा गया है। मुझको सन्देह है कि लड़की मेरी है। अब बताओ, क्या विचार है ?"

रूप भौचक्का हो, मुख देखता रह गया। राम को दुकान पर जाना था। उसके जाने का समय हो रहा था। उसने ऊपर कपड़े पहनने के लिए जाते हुए कहा, "अब तुम विचार कर बात करना। मैं कल तुमसे इस विषय में बात करूंगा। देखो ! अपनी मां को मत बताना।"

रूप उस दिन अनेकानेक विचार में लीन, अपने कमरे में बैठा रहा। आज सायंकाल वह गोवर्धनलाल के घर जा पहुंचा। उस समय उसके फूफा घर पर आ जाया करते थे। परन्तु उस दिन वे नहीं आए। गौरी ने बताया, "आज लाला जी की सम्पत्ति की प्रबन्ध समिति की बैठक है। इस कारण उनको देरी हो गई है। तुम कैसे आए हो ?"

"एक बहुत आवश्यक विषय पर उनसे परामर्श करना था।"

"उनसे ही ?"

"नहीं। आप दोनों से।"

"क्या समस्या है ?"

"मैं यह पूछने आया था कि बहिन से विवाह क्यों नहीं किया जाता ?"

"कोई इसमें वैज्ञानिक कारण होगा।"

"तो आपको नहीं विदित ?"

"मैं यह जानती हूं कि शास्त्र में इसका खण्डन किया गया है।"

"तो सब बातों को, जो शास्त्र में लिखी हों, आंखें मूंदकर स्वीकार कर लेना चाहिए ?"

"नहीं। शास्त्र की किसी बात को जो झूठी सिद्ध हो जाए, नहीं मानना चाहिए।"

"और जो सत्य सिद्ध न हो जाए ?"

"सत्य तो वह है ही। जब शास्त्र में सौ में से अस्सी बातें सत्य दिखाई देती हैं तो शेष बीस भी सत्य ही होनी चाहिए। हां। यदि किसीके विषय में यह निर्णयात्मक प्रमाण प्राप्त हो जाए कि वह गलत है तो फिर उसको त्याग देना चाहिए।"

"हमारा तो सिद्धांत यह है बूआ ! 'टेक ऐवरी बॉडी टु बी ए स्काउंड्रल टिल ही प्रूवज़ हिम सेल्फ टु बी ए जेंन्टलमैंन।'"

"देखो ! मैं अंग्रेज़ी नहीं पढ़ी। इसका अर्थ समझाओ !"

"बूआ ! यह अंग्रेज़ी की उक्ति है। इसका अर्थ है कि जब तक कोई अपने को भला मनुष्य सिद्ध न कर दे, तब तक उसको बदमाश समझो। इसी प्रकार मैं कहता हूं कि जब तक कोई बात सत्य सिद्ध न हो जाए तब तक उसको असत्य समझो।"

"यह तुम्हारे शास्त्र की बात है। हमारे शास्त्र में तो यह लिखा है कि मनुष्य जन्म में भली आत्माएं ही आती हैं। जब तक कोई अपने आचरण से अपने को बदमाश सिद्ध न कर दे, तब तक उसको भला मनुष्य ही समझना चाहिए। मनुष्य भूतल पर प्राणी-सृष्टि में सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। इससे यह तो मानना ही पड़ेगा कि जो मनुष्य-योनि में आया है वह नैसर्गिक श्रेष्ठता रखता है। इसी प्रकार शास्त्र की बात है। शास्त्र जो सहस्रों वर्ष से प्रचलित है, वह अवश्य एक श्रेष्ठ पुस्तक है। इसलिए जब तक उसकी कोई बात असत्य सिद्ध नहीं हो जाती, तब तक उसको सत्य स्वीकार करना ही पड़ेगा।"

रूप देख रहा था कि जो कुछ भी वह कालेज अथवा अंग्रेज़ी-साहित्य में पढ़ा है। वह इस अशिक्षित नारी की युक्ति के समक्ष टिकता ही नहीं। वह सगे बहन-भाई के विवाह को समाज में अप्रचलित जान एवं शास्त्र में वर्जित लिखा

सुन चुप कर गया। इसपर गौरी ने चिन्ता व्यक्त करते हुए पूछ लिया, "क्यों, क्या बात है रूप ! किसलिए यह प्रश्न तुम्हारे मन में उत्पन्न हुआ है ?"

"बूआ ! पहले यह बताओ कि बहिन पिता की लड़की माननी चाहिए अथवा मां की ?"

गौरी ने कह दिया, "शास्त्र का मत यह है कि लड़की माता की सपिण्ड न हो अर्थात् माता की सात पीढ़ियों में न हो और जो पिता के गोत्र में न हो वे ही द्विजों के हेतु विवाह के योग्य है।"

इसी समय गोवर्धनलाल आ गए। वे भी रूप को उस समय वहां बैठा देख विस्मय में उसका मुख देखने लगे। गौरी ने पति को कहा, "आप रूप का संशय-निवारण करिए और मैं आपके लिए चाय तैयार करती हूं।" इतना कह, वह उठकर चली गई।

गोवर्धनलाल ने पूछा, "इस समय किस काम से आए हो रूप !"

" फूफा जी, मैंने बुआ से पूछा है कि बहिन और भाई का विवाह क्यों नहीं होना चाहिए ?

" बूआ ने उत्तर दिया है कि यह ठीक तो प्रतीत होता है, परन्तु उसमें प्रमाण नकारात्मक ही है।"

"मैं तो इस विषय में एक ही प्रमाण दे सकता हूं कि सगी मां और पिता की सन्तान तो प्रायः सब देशों में विवाह में वर्जित की गई है। हां, मुसलमानों में मां की दूसरे पिता से सन्तान कुछ अवस्थाओं में स्वीकार की गई है। संसार के सब देशों में इसका अस्वीकार होना ही सबसे बड़ा प्रमाण है कि ऐसा विवाह उचित नहीं। परन्तु तुमको इस विषय में जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता क्यों उत्पन्न हुई है ?"

"यदि आप किसीसे न कहने का वचन दें तो बता सकता हूं।"

"तुम्हारी स्वीकृति के बिना नहीं बताऊंगा।"

"बात यह है कि पिता जी की एक रखैल रही है। उसकी लड़की से मेरी मुहब्बत हो गई। पिता जी ने बताया है कि उनको सन्देह है वह लड़की उनकी है।"

"क्या प्रमाण दिया है उन्होंने ?"

"कोई प्रमाण तो दिया नहीं परन्तु एक बात मेरे मन में आती है। वह स्त्री पिता जी और उनके मित्र की सांझी पत्नी थी। जब गर्भ ठहर गया तो पिता जी

का उससे सम्पर्क छूट गया। उसके उपरान्त वह दूसरे मित्र के पास ही आज तक है। परन्तु उसकी पुनः कोई सन्तान नहीं हुई है।"

"यह एक पुष्ट प्रमाण तो है परन्तु निर्णयात्मक नहीं। इसपर भी क्या तुम उस लड़की के मोह में इतने फंस गए हो कि उसका विचार नहीं त्याग सकते?"

"उससे विवाह तथा बिना विवाह के भी सम्बन्ध का विचार तब ही छोड़ सकता हूं जब मैं उसको बहिन समझ लूं।"

"बहिन तो केवल कहने से भी हो जाती है। किसीको मुख से कह दिया 'बहिन' तो वह बहिन हो जाती है।"

"यही पूछ रहा हूं कि कहूं अथवा न कहूं?"

"इस संदिग्धावस्था में कह दो। यही कल्याण का मार्ग है। रूप, संसार में इतनी लड़कियां हैं कि किसी एक के लिए पागल होना तो महामूर्खता है। विवाह में *माता-पिता की स्वीकृति अथवा विवाह-योग्य होने पर लड़के-लड़की की अनुमति* अत्यावश्यक है। इसपर भी यदि बहिन-भाई का सम्बन्ध हो तो उक्त दोनों प्रकार की स्वीकृतियां भी निरर्थक हो जाती हैं।"

इसी समय गौरी चाय और नमकीन दालमोठ ले आई। वे तीनों लेने लगे तो गोवर्धनलाल ने अपनी पत्नी से कहा, "गौरी! रूप के लिए कोई लड़की ढूंढ़ दो न?"

रूप हंस पड़ा। हंसते हुए उसने कहा, "फूफा जी, मैं अपनी रुचि के विपरीत विवाह नहीं करूंगा।"

"तो लड़की तुमसे पसन्द करा लेंगे।"

"परन्तु मैं आपको सचेत कर देता हूं कि मेरा श्रेष्ठता का मापदण्ड बहुत ऊंचा है।"

"यह तो देख लिया जाएगा।"

१२

अगले दिन रूप ने अपने पिता को कह दिया, "पिता जी! मैं सुमित्रा से विवाह नहीं करूंगा।"

"ठीक है। तुम्हारी मां को कह देता हूं कि कोई और लड़की ढूंढ़े।"

"परन्तु पिता जी ! मुझ बेकार से कौन करेगा विवाह ?"

"तुम जो कहते हो कि तुम्हारे पास पचास हजार रुपया है ?"

"वह जुए की आय का है।"

"उसको पूंजी में बदल दो।"

"यह मैं जानता नहीं। यह विद्या मुझको किसीने पढ़ाई नहीं।"

"पढ़ाई तो होगी। तुम अर्थशास्त्र में ग्रेजुएट हो, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उसके क्रियात्मक रूप को किसीने बताया नहीं। देखो रूप, मैं तुमको एक प्रयोगशाला बताता हूं तुम नित्य शिव ताया की दुकान पर आ जाया करो। वहां आंखें खोलकर बैठा करो। अवश्य तुमको कोई न कोई ढंग सूझ जाएगा, जिससे तुम फलो और फूलोगे।"

इसपर रूपकृष्ण शिवकुमार की दुकान पर जाने लगा। पहले दिन तो उसको वहां बैठा देख, सबको विस्मय हुआ, परन्तु जब वह नित्य ही वहां पहुंचने लगा तो एक दिन शिव ने पूछ लिया, "रूप ! तुमको कोई काम नहीं, यहां आकर क्या सिद्ध करना चाहते हो ?"

"जो सिद्ध करना चाहता हूं, वह अभी हुआ नहीं।"

"क्या ? कुछ चोरी करना चाहते हो ?"

"हां। ताया जी ! आपके व्यापार की प्रतिभा की चोरी करना चाहता हूं।"

"तो मिली ?"

"नहीं, अभी वह दिखाई नहीं दी। जिस दिन उसे देख पाऊंगा, चुरा लूंगा।"

"अच्छी बात है। यत्न करो, कदाचित् तुमको दिखाई दे जाए। केवल देखने से ही उसको ग्रहण नहीं कर सकोगे। उसको ग्रहण करने के लिए साहस भी होना चाहिए।"

"ताया जी ! साहस तो मेरे पास है।"

"साहस के साथ सामर्थ्य भी तो चाहिए।"

"वह भी कुछ बटोर ली है।"

"कितनी ?"

"मेरे पास बैंक में पचास हजार हैं।"

"हां ! कुछ तो हैं। तो बैठो जो कुछ समझ में न आए पूछ लेना।"

बनवारीलाल पुनः रूपकृष्ण से मिलने नहीं आया, न ही रूपकृष्ण सुमित्रा के

पीछे गया। उसने उसे मन से निकाल दिया था। गौरी के दिए ज्ञान से वह एक मशालची की भांति अन्धा हो, नाली में गिरता-गिरता बचा था। वह यह समझता हुआ कि वह बहुत योग्य हो गया है। वह सुमित्रा के मोह में फंसता-फंसत पुनः गोवर्धन एवं गौरी के हाथ पकड़, बचता गया था।

उसको शिवकुमार की दुकान पर जाते हुए एक मास से ऊपर हो गया था। जैसे चलती गाड़ी को बहुत कम प्रयत्न से ही चलाया जा सकता है, वैसे ही शिवकुमार की दुकान चल रही थी। शिवकुमार का थोड़ा-सा प्रयत्न भी रूपकृष्ण को इस काल में दिखाई नहीं दिया। माल बेचने वाले लाला सुलक्षणमल के नाम से आकृष्ट हो आते थे। बिना रसीद-पर्चे के माल दे जाते थे। शिवकुमार ही अपनी वही में लिखता था और इसको प्रमाण माना जाता था। लोग खरीदने वाले भी आते थे अथवा उनके एजेण्ट आते थे। दुकान की आढ़त इन सौदों में बहुत कम—दो पैसे से एक आना रुपया तक ही होती थी। हां, जब माल बिकने के पूर्व रुपया अग्रिम दिया जाता तो उसपर आठ आने सैकड़ा सूद काटा जाता था। प्रायः माल दुकान खरीद लेती थी और जब माल खरीदती थी तो फिर जब तक माल बेचने वाला रुपया नहीं ले जाता था, आठ आना सैकड़ा के हिसाब ब्याज दिया जाता था। कभी दुकान से माल क्रय करने वाला भी उधार खरीदता था अथवा हुंडी पर माल ले जाता था तब उस हुंडी पर साढ़े आठ आने का ब्याज ले लिया जाता था। इस प्रकार बहुत सस्ते में व्यापार चलता था। इसपर भी दुकान की आय चार-पांच लाख रुपये वार्षिक हो जाती थी। यह सब रहस्य राम अपने पुत्र रूप को बताया करता था।

"इसमें रहस्य क्या है ?" रूप का प्रश्न था।

" रहस्य है विश्वास। किसान लोग लाला सुलक्षणमल की दुकान का विश्वास करते हैं। उनके मन में यह बात अंकित हो चुकी है कि यहां माल जमा करा जाने पर, एक छटांक की हेरा-फेरी नहीं होगी। वे यहां रखा माल अपने घर में रखने से अधिक सुरक्षित मानते हैं। शिव माल पर पचहत्तर प्रतिशत तक अग्रिम दे देता है। उसपर तब तक ही ब्याज लेता है जब तक ग्राहक का माल बिक नहीं जाता अथवा वह स्वयं खरीद नहीं लेता। ईमानदारी से उसी दिन अग्रिम दिए गए रुपये से सूद लेना बन्द कर माल के बकाया मूल्य पर ग्राहक को ब्याज मिलना आरम्भ हो जाता है।

" मुझको पांच मास कार्य करते हो गए हैं। इस काल में एक भी मनुष्य ऐसा नहीं आया जिसको दुकान की वही पर सन्देह हुआ हो और एक भी अक्षर वही पर ऐसा नहीं लिखा गया जो यथार्थ के अतिरिक्त हो।"

"पिता जी ! यह विश्वास किस प्रकार बैठता है ?"

" यह सुनने में आया है कि जब तुम्हारे बाबा ने यह दुकान खोली थी और दुकान का मुहूर्त हुआ था तो घर के पुरोहित ने पूजा कराई थी। पूजा में वहियां भी ठाकुर जी के समक्ष रखी गई थीं। पूजा पर यह कहा गया था कि जो कुछ उन वहियों पर लिखा जाएगा वह सत्य होगा एवं जो कुछ सत्य होगा वही उनपर लिखा जाएगा और इस बात के साक्षी-रूप में तब की वही के प्रथम पृष्ठ पर पण्डित जी ने गणेश का चित्र केसर से चित्रित किया था एवं उसका भी पूजन किया गया था।

" एक दिन शिवकुमार ने तब की वही मुझको दिखाई थी ; और प्रतिवर्ष नई वही लगाते समय वह साठ वर्ष पुरानी वही को निकाल नमस्कार करता है और तब नई वही पर लिखना आरम्भ करता है।"

"तो पिता जी ! आप इस बात को सत्य मानते हैं ?"

"सत्य का क्या अर्थ ? किस बात को सत्य मानता हूं ?"

"यही कि वही का पूजन करने से दुकान का विश्वास बैठ गया है।"

"तुम भी कुछ मूर्ख हो रूप ! मैंने यह नहीं कहा। मेरे कथन का भावार्थ यह है कि उन वहियों पर सदैव सत्य लिखने से उसमें कभी भूल-चूक से गलत बात लिख देने पर भी वह सत्य ही मानी जाती है। भले ही वह दुकान के हितों के विपरीत जाती हो। मुनीम लिखने वाले हैं। वे कभी भूल भी कर जाते हैं। परन्तु ग्राहकों और दुकान के मालिक के मन में वही की सत्यता पर इतना विश्वास है कि सब उसपर लिखे को प्रमाण मानते हैं।

" शिवकुमार प्रतिवर्ष पुरानी वही को निकालकर अपने मन के संकल्प को हरा-भरा करता रहता है, जिससे वह वही के विश्वास को बनाए रखे।

" एक बात और भी बताता हूं। मैं अभी नया-नया ही दुकान पर काम करने लगा था कि जीजा गोवर्धनलाल जी को शिवकुमार के किसी सेना विभाग के माल में धोखा-धड़ी का ज्ञान हो गया। माल का बाज़ार-भाव अढ़ाई रुपये मन था। और उसने टेंडर भर दिया था चार रुपये मन। इससे आठ आने मन की घूस देकर एक

रुपया मन बचा लिया। बीस हज़ार टन का सौदा था। इस प्रकार पांच लाख से ऊपर की नकद आय थी।

"गोवर्धनलाल ने पूछ लिया, 'ईमानदारी से कितना लाभ होना चाहिए ?'

" 'जितना खरीदने एवं बेचने वाले में निश्चय हो जाए।'

" 'परन्तु यहां तो निश्चय करने वाला खरीदने वाला नहीं और उसने इस भाव का निश्चय अपने घूस के बल पर कराया है। शिव, यह बताओ, दूसरे टेंडर किस भाव के थे ?'

" 'मुझसे नीचे वाला टेंडर ही अढ़ाई रुपये का था।'

" 'मेरी राय मानो। तुम सब माल सप्लाई कर दो और बिल बनाते समय इसका भाव इतना लगाओ जिससे तुमको सब ले-देकर मुनासिब ही बचत हो।'

" 'मुनासिब क्या है ?'

" 'जितना लाभ तुम साधारण खरीददार से लेते हो।'

" 'वह तो दो आना प्रतिमन लेता हूं।'

" 'ठीक है, गिनती कर लो। व्यय में अफसरों को दिया धन भी डाल दो और फिर देरी से मिलने वाले धन का व्याज भी लगा लो। तब बिल बनाकर रुपया वसूल कर लो। कारण यह लिखो कि अपनी दुकान की परम्परा के अनुसार तुम माल पर अधिक मूल्य नहीं ले रहे, इसलिए बिल टेंडर के भाव से कम का बनाया है।'

" 'रूप ! शिवकुमार कुछ देर सोचता रहा और उपरान्त गोवर्धन जीजा का जादू चल गया और परसों अन्तिम हिसाब का चिट्ठा मैंने ही तैयार किया है और उसपर वही बात लिखी गई है जो जीजा जी ने कही थी। इस प्रकार सरकार से, बनने वाले बिल में से, दो लाख अस्सी हज़ार रुपये कम मांगे गए हैं।' "

रूप टुकर-टुकर मुख देखता रह गया। राम ने कहा, "भला कौन इस दुकान का विश्वास नहीं करेगा।"

रूप विचार कर रहा था कि गौरी एवं गोवर्धनलाल में कौन बात है कि उनकी बात मानने के लिए शिवकुमार तैयार हो जाता है। वह स्वयं अपने पर भी विस्मय कर रहा था कि वह भी तो अपने जीवन पर उनके कथन का प्रभाव देख रहा था। इसपर भी वह सोचता था कि यदि अढ़ाई लाख रुपये की हानि की बात होती तो कदाचित् वह न मानता।

सुमित्रा के विषय में बहिन के साथ विवाह न करने का संस्कार उसके मन में पहले ही विद्यमान था; गौरी ने तो उसके संस्कारों का समर्थन-मात्र किया था। इसपर भी उसकी समझ में आया कि कदाचित् शिवकुमार के मन में भी अपनी वही की सचाई एवं अपनी दुकान की प्रतिष्ठा के संस्कार पहले से ही उपस्थित थे और गोवर्धनलाल ने उन संस्कारों का समर्थन-मात्र ही किया था। यही कारण है कि उसकी बात सरलता से मान ली गई है।

तो संस्कार प्रबल हैं अथवा गोवर्धनलाल की शिक्षा ?—इन दोनों में वह निर्णय नहीं कर सका।

एक दिन शिवकुमार की लड़की राधा का लड़का कृपाराम आया और अपने नाना से कहने लगा, "लाला जी ! आपको कुछ रुपया चाहिए ?"

"किसलिए पूछ रहे हो ?"

"मेरे पास पचास हज़ार है। वह मैं कहीं रखना चाहता हूं।"

"तो बैंक में रखो।"

"और यदि बैंक टूट गया तो ?"

"टूटेगा क्यों ?"

"सुना है बैंक वाले भी व्यापार करने लगे हैं।"

"व्यापार तो मैं भी करता हूं।"

"परन्तु उनके व्यापार और आपके व्यापार में अन्तर है। बैंक के मैनेजर कम्पनियों के हिस्सों में सिट्टा करते हैं। आप चेम्बर का मुख नहीं देखते।"

"तो वह काम पाप का है क्या ?"

"पाप-पुण्य की बात तो मैं देखता नहीं। मैं तो यह देखता हूं कि उसमें धोखा-धड़ी होती है।"

"क्या धोखा-धड़ी होती है ?"

"मैंने कराची ट्रस्ट के पांच सौ हिस्से खरीदे थे। मैंने खरीदे थे नब्बे रुपये में। पिछले पांच-छ: दिन से एक आदमी मोटरकार में चेम्बर में आता है और सेक्रेटरी को, कराची ट्रस्ट के सब हिस्से, जो भी मिल सकें, खरीदने के लिए कह जाता है। सेक्रेटरी मेरा मित्र है। उसने मुझको संकेत किया था कि हिस्सों के मूल्य बढ़ जाएंगे। मैं दिन में चार चक्कर लगाने लगा। हिस्सों की खरीद आरम्भ हुई

तो दाम बढ़ने लगे। आज दाम एक सौ पन्द्रह हो गया। मैंने हिस्से बेच दिए हैं। एक सौ चौदह रुपये पर। इस प्रकार मुझको बारह हज़ार रुपया लाभ का मिल गया है। पैंतालीस हज़ार लागत की असली रकम वसूल कर मैंने निकाली है और लाभ की राशि से मैंने टाटा कम्पनी के हिस्से खरीद लिए हैं। वह पैंतालीस हज़ार मैं बंगाल बैंक में जमा कराने चला तो मुझे किसीने बताया है कि यह खरीद करने वाला बैंक का 'लोकल डायरेक्टर' है। कदाचित् यह बैंक के लिए ही हिस्से खरीद रहा है। मुझको डर लग गया है कि हिस्सों में हानि भी हो सकती है। हानि हुई तो बैंक टूट भी सकता है। बैंक के टूटने पर जमा रुपये में हानि भी हो सकती है। इसीलिए मैं बैंक में रुपया जमा कराने से डरता हूं।"

शिवकुमार हंस पड़ा। हंसकर बोला, "मुझको रुपये की आवश्यकता नहीं है।"

"तो फिर बिना ब्याज के ही रख छोड़िए।"

"मैं भी तो बैंक में ही रखूंगा। पहले ही हमारा तीन बैंकों में हिसाब-किताब चलता है। बंगाल बैंक, ग्रिडले बैंक और सेंट्रल बैंक में। यदि एक बैंक टूटा तो सम्भवतः दूसरे बैंकों को भी हानि पहुंचे, तब मेरा पहले ही वहां जमा रुपया डूबने लगेगा। अब तुम्हारा बेकार में लेकर रखूंगा तो वह भी डूबेगा। नहीं कृपाराम, मैं नहीं रखूंगा।"

"तो क्या करूं?"

"कुछ व्यापार करो।"

"क्या करूं?"

"यदि मेरे बताए काम में हानि हो गई तो क्या करोगे?"

"आपके बताए काम में हानि क्यों होगी?"

"तुम मूर्ख हो। इसलिए।"

कृपाराम मुख देखता रह गया। वह समझ नहीं सका कि वह मूर्ख क्यों है। कृपाराम को प्रश्न-भरी दृष्टि से अपनी ओर देखते देखकर शिवकुमार ने कह दिया, "तुम यह नहीं जानते क्या कि व्यापार में रुपया डूब जाने का भय सदा बना रहता है। व्यापार एवं व्यवसाय हानि उठाने का भय मोल लिए बिना किए नहीं जा सकते। जो यह भय सिर लेने का साहस नहीं रखते वे इससे लाभ भी नहीं उठा सकते।"

"परन्तु आपके व्यवसाय में तो हानि होती ही नहीं।"

"उसमें कारण दूसरा है। इसपर भी मैं हानि उठाने के लिए सदा तत्पर रहता हूं।"

"ऐसा करिए कि कुछ सुझाव दीजिए।"

"मेरे पास कोई सुझाव नहीं है। केवल इतना कह सकता हूं कि आंखें खोल-कर चलो। कोई न कोई काम मिल जाएगा।"

कृपाराम निराश चला गया। रूपकृष्ण समीप बैठा सुना रहा था। वह आंखें खोलकर चलने की बात सुनकर विस्मित था कि कृपाराम क्या आंखें मूंदकर विचर रहा है।

जब कृपाराम दुकान से बाहर निकल गया तो शिवकुमार हंस पड़ा। उसे हंसता देख, रूप ने पूछ लिया, "ताया जी! इसमें हंसने की बात क्या हुई है?"

यह अभी बहुत ही अनुभवहीन लड़का है। मैंने इसको व्यापार ढूंढ़ने का गुर बताया है। यह समझा है कि मैंने इससे हंसी की है।

"क्या गुर बताया है?"

"रूप, आंखों के साथ कान खोलकर बैठा करो।" आंखें एवं कान खोलने की बात पर वह मनन करने लगा।

शिवकुमार ने कह दिया, "परमात्मा ने हमको दो ही इन्द्रियां ऐसी दी हैं जो दूर की बात का बोध कराती हैं। परन्तु जब मैं कहता हूं कि इनको खोलकर बैठो तो मेरा तात्पर्य है कि इनके द्वारा देखी-सुनी बातों पर मनन करो। मनन करो व्यापारिक दृष्टिकोण से। बस, बात समझ आने लगेगी।"

"व्यापारिक दृष्टिकोण क्या है?"

"व्यापारिक दृष्टिकोण यह है कि जो वस्तु तुम खरीदते हो अथवा बनवाते हो, देखो उसकी बाजार में मांग है अथवा नहीं। मांग कितनी अधिक है? क्या मांग का मूल्य खरीद के मूल्य से अधिक है अथवा नहीं? बस यही व्यापार है। यही व्यवसाय है। लाभ समझ में आए तो व्यापार करो, न आए तो मत करो।"

"परन्तु समझ गलत भी तो हो सकती है।"

"बात को ठीक समझने के लिए उसी वस्तु में अनुभव प्राप्त करो।"

रूप ने समझा कि ये बातें तो संकेत-मात्र हैं। इनकी व्याख्या तो किसी भी कार्य में घुस जाने से ही होती है। किस कार्य में लीन हो जाए, यह शिवकुमार

नहीं बता सकता। इसका अपना काम तो अन्न-अनाज, भूसा-खली आदि को खरीदकर बेचने का है। रूप ने देखा कि इस काम में वह शिव की तुलना में दुकान नहीं कर सकेगा तो कोई ऐसा काम ढूंढ़ा जाए जिसमें सुलक्षणमल की दुकान से मुकाबला न करना पड़े।

आज वह शीघ्र ही दुकान से उठकर चला आया। वह विचार कर रहा था कि गोवर्धनलाल से बात कहे तो कदाचित् वह कुछ सुझाव दे सके। वह उसके घर की ओर चल पड़ा।

वह अभी हौज़काज़ी में ही पहुंचा तो वहां एक तबेले के बाहर डुग्गी पिटती देखी। दस-बारह बच्चे वहां एकत्रित हो रहे थे। कोई प्रौढ़ावस्था का व्यक्ति वहां पर नहीं था। डुग्गी पीटने वाले के समीप एक बाबू मेज़-कुर्सी लगाए बैठा था। समीप ही एक स्टूल पर पुलिस का सिपाही बैठा था। रूप ने एक लड़के से पूछ लिया, "यहां क्या हो रहा है?"

"यह तबेला नीलाम हो रहा है।"

"पुलिस क्यों बैठी है यहां?"

"नीलाम करने वाला सरकारी आदमी है, इसलिए।"

"इस समय डुग्गी पीटने वाले ने आवाज़ दे दी। एक हज़ार पांच सौ रुपया, इस तबेले के लिए।"

कुछ लोग तबेले के भीतर आ-जा रहे थे। वे इसकी लम्बाई-चौड़ाई देख रहे थे। वह भी उसमें अन्दर चला गया। अच्छी लम्बी-चौड़ी जगह थी। एकाएक उसके मन में आया कि यह जगह बिक रही है। क्या इसकी मांग है। और मांग इस दाम से अधिक दाम की है क्या? वह शिवकुमार का गुर जो अभी-अभी सुनकर आया था, प्रयोग करने लगा था। उसको समझ आया कि तबेला तो यहां रह नहीं सकता। बाज़ार में तो दुकानें बनेंगी। दुकानों पर मकान बनेगा। मकान में रहने वाले आएंगे···

इस विचार के आते ही वह बाहर आया और मेज़-कुर्सी लगाए बैठे बाबू से पूछने लगा, "यह बोली किसकी है?"

"यह बताने की आज्ञा नहीं है।"

"तो मैं एक हज़ार छः सौ की बोली देता हूं।"

"मुंशी ने रजिस्टर खोल दिया और बोली का मूल्य, बोली देने वाले का नाम

तथा पता लिख हस्ताक्षर करवा लिए और कह दिया बोली इससे न बढ़ी तो दस प्रतिशत जमा करना पड़ेगा।"

"करा दूंगा।"

अब डुग्गी पीटने वाले ने घोषणा करनी आरम्भ कर दी, "एक हज़ार छ: सौ रुपया।" रूप कुछ दूर हटकर खड़ा हो गया। वह देखना चाहता था कि क्या कोई बढ़ता है उससे ? और वह कौन है जो बढ़ता है।

वह अभी खड़ा ही था कि रूपरेखा से पहलवान दिखाई देने वाला एक व्यक्ति उसके समक्ष आकर खड़ा हो गया। रूप ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया तो उसने पूछ लिया, "बाबू ! किसके नाम की बोली दे रहे हो ?"

"किसलिए पूछ रहे हो ?"

"इसलिए कि पहली एक हज़ार पांच सौ की बोली मेरी थी।"

"और तुम कौन हो ?"

"यह भूमि मेरी गिरी है।"

"मैंने यह नहीं पूछा। जब तुम यह पूछते हो किसके नाम की बोली दी है तो मैंने भी यही पूछा है किसके नाम से तुम बोली दे रहे हो ?"

"बनवारीलाल के नाम से।"

"वही जो पहले सदर बाज़ार में रहते थे और अब पहाड़गंज में रहते हैं ?"

"हां।"

"वे तो बहुत बड़े आदमी हैं।"

"हां।"

"और मैं सुलक्षणमल की दुकान के लिए खरीद रहा हूं।"

"तो उन लाला जी से जाकर कहो कि अगर यह ज़मीन उन्होंने ले ली तो उन्हें यमलोक का द्वार दिखा दूंगा।"

"पहलवान ! यह बात तुम उसको दुकान पर जाकर कह आओ।"

रूपकृष्ण को समझ में आया कि शिवकुमार ने साहस की बात कही थी। इस पहलवान की धमकी में साहस से काम लेना चाहिए।

पहलवान ने उद्दण्डता से कहा, "तो तुम्हारी टांगें टूट गई हैं क्या ?"

"नहीं जी। टांगें तो हैं। केवल एक बात है। मैं कहूंगा तो उनको विश्वास नहीं आएगा और मकान वे ले लेंगे।"

"क्यों लेंगे ?"

"एक लड़की सुमित्रा है। वे इस ज़मीन पर मकान बनाकर उसको नज़र में देना चाहते हैं।"

पहलवान भौंचक्का हो, मुख देखने लगा। फिर कुछ विचारकर, पूछने लगा, "सुमित्रा उनकी कौन है ?"

"यह मैं क्या जानूं। इतना मालूम है कि एक किशनो-किशनो विधवा है। वह लाला जी के पास आती-जाती है।"

"यह तुम कैसे कहते हो कि भूमि और मकान उसके लिए है ?"

"भाई, मैं तो अपना अनुमान ही बता रहा हूं। कल किशनो आई थी और उसके जाने के पश्चात् ही मुझको आज्ञा मिली थी कि मैं इस मकान को खरीद लूं।"

"और तुम्हारा क्या नाम है ?"

"मेरा नाम रामकुमार है। मैं लाला जी के पास नौकरी करता हूं।"

पहलवान रूप को वहीं छोड़, अजमेरी गेट से बाहर की ओर चला गया।

रूपकृष्ण भी वहां से टल गया। वह चलता हुआ विचार करने लगा कि किस प्रकार वह इस मकान को ले सकता है। वह मन में कल्पना कर रहा था कि पहलवान बनवारीलाल को बताने के लिए पहाड़गंज को गया है। इससे उसके मन में गुदगुदी उत्पन्न होने लगी। वह मन ही मन बनवारीलाल और किशनो के मन की कल्पना करने लगा था। *वे समझेंगे कि राम अपनी लड़की को देने के लिए मकान खरीद रहा है।*···

उस समय दोपहर के दो बज चुके थे। नीलामी सायं चार बजे तक चलने वाली थी। इससे वह साढ़े तीन बजे यहां पुनः लौट आया। उसने देखा कि अब बनवारी और उसका एजेण्ट पहलवान दोनों खड़े थे। बोली अभी भी एक हज़ार छः सौ ही चल रही थी। इससे उसको यह समझ आया कि वे यह बोली उसके नाम में समाप्त करने की बात विचार रहे हैं। कदाचित् उनको विश्वास हो गया है कि सत्य ही मकान उनकी लड़की को मिलने वाला है।

रूप को आया देख, बनवारीलाल उसकी ओर बढ़ आया। वह उसके समीप पहुंच कहने लगा, "रूप, यह मकान कौन खरीद रहा है ?"

"मैं खरीद रहा हूं।"

"परन्तु तुमने झूठ क्यों बोला है कि सुलक्षणमल की दुकान खरीद रही है।"

"मैं पहलवान को यहां से टरकाना चाहता था।"

"तुम किसके लिए मकान खरीद रहे हो ? तुम्हारे पास तो अपना मकान है।"

"यह मेरा रहस्य है।"

"देखो रूप ! मैं यह मकान किशनो के लिए खरीद रहा हूं। यदि तुम उसकी लड़की के लिए खरीद रहे हो तो मैं बोली नहीं बढ़ाऊंगा।"

"मैं यह खरीद रहा हूं अपनी पत्नी के रहने के लिए। वह पत्नी कौन होगी, कैसे कह सकता हूं। आप तो जवाब देने नहीं आए ?"

"तो तुमको तुम्हारे पिता ने नहीं बताया कि सुमित्रा उनकी लड़की है ?"

"उन्होंने बताया है परन्तु मुझको विश्वास नहीं आया। मुझको वह आपकी लड़की प्रतीत होती है। इसीलिए उसके लिए पृथक् मकान बनवा रहा हूं, जहां पिता जी का हस्तक्षेप न हो।"

"अच्छी बात है, मैं बोली नहीं बढ़ाऊंगा।"

बनवारीलाल ने पहलवान को आंखों से संकेत किया और वह वहां से टल गया। चार बजे तक बोली एक हज़ार छः सौ पर रूपकृष्ण के नाम समाप्त हुई। रूपकृष्ण ने दो सौ रुपये का चेक अग्रिम जमा कराया और उसकी रसीद ले ली। रूपकृष्ण समझ रहा था कि उसने जीवन में प्रथम व्यापार किया है और उसमें उसने सफलता प्राप्त की है। वहां से वह अपने घर गया।

अगले दिन उसने गोवर्धनलाल जी के घर जा, अपनी योजना बता दी। उसने कहा, "फूफाजी ! मैंने एक व्यापार आरम्भ किया है।"

"क्या ?"

"मैंने हौज़ काज़ी में एक ज़मीन का टुकड़ा नीलाम में मोल लिया है। सोलह सौ की बोली मेरे नाम समाप्त हुई है।"

"ठीक है, यदि किसीने उत्तरदारी न की तो यह टुकड़ा तुम्हारे नाम हो जाएगा। क्या करना चाहते हो इसपर ?"

"मैं मकान बनवाऊंगा। नीचे दुकानें होंगी और ऊपर मकान होगा। जब बन जाएगा तो इसको मुनासिब लाभ पर बेच दूंगा। यदि इसमें सफलता मिली तो यह काम मुझको पसन्द है।"

"ठीक है। यह सुझाव तुमको किसने दिया है?"

" बात यह है कि राधा बहिन का लड़का कृपाराम ताया जी की दुकान पर आया था और बातों ही बातों में उन्होंने दो सुझाव कृपाराम के सम्मुख रखे थे। एक तो हानि-लाभ व्यापार अथवा व्यवसाय में होता ही है। इसमें हानि से डर-कर व्यापार से हाथ पीछे करने वाला सफल नहीं हो सकता। दूसरा यह कि किसी भी काम का अनुभव पुस्तकें पढ़ने से नहीं, अपितु काम में प्रवेश करने से होता है। इन दोनों बातों पर मनन करते हुए मैं आपके घर की ओर आ रहा था कि हौज़ काज़ी में नीलामी होती देखी। मैंने विचार किया, मकान बन गया तो बिक जाएगा। ढंग से मकान बनवाऊंगा तो लाभ होगा। बस, साहस किया और बोली दे दी। बोली मेरे नाम पर समाप्त हो गई।

" अब मैं आपसे दो बातों की सहायता लेने आया हूं। एक तो इस भूमि को लेने के लिए मुझको क्या करना चाहिए और दूसरे मकान बनवाने में किससे बनवाऊं और कैसा बनवाऊं?"

"पहले तुमको एक प्रार्थनापत्र सबजज के नाम देना होगा। दोपहर के समय मेरे साथ न्यायालय चलना। मैं तुमको यह बात करवा दूंगा। इस प्रार्थनापत्र के उत्तर के पश्चात् ही विचार किया जा सकता है।"

दूसरा परिच्छेद

सुलक्षणमल की सबसे बड़ी लड़की विष्णुदेवी का विवाह बिरादरी में एक धनी आदमी के पुत्र प्रतापकृष्ण से हुआ था। पहले तीन वर्ष तो विष्णुदेवी के अपने ससुराल में बहुत सुख से व्यतीत हुए। जब उसके घर में प्रथम सन्तान यमुना हुई, तो उसके ससुर का देहान्त हो गया और उसकी सास ने आत्महत्या कर ली। ससुर की मृत्यु हुई थी निमोनिया से, और सास ने मकान की छत पर चढ़कर छलांग लगा दी थी। दोनों की अर्थी एक समय निकली और एक ही चिता में फूंकी गई थी।

माता-पिता के देहान्त के उपरान्त प्रतापकृष्ण बेलगाम हो गया। पिता की एक ही सन्तान थी और सम्पत्ति पर अधिकार पाते ही उसको मद्य-सेवन एवं जुआ खेलने की लत लग गई थी। परिणामस्वरूप पूर्ण सम्पत्ति चार-पांच वर्ष में समाप्त हो गई। इस समय उसके पिता का व्यापार नष्ट हो चुका था और कोष खाली होने तक प्रतापकृष्ण इतना बदनाम हो चुका था कि मुहल्ले में उसको कोई मुंह नहीं लगाता था।

प्रताप के पिता की नई सड़क पर एक कटरे में कपड़े की थोक दुकान थी। अब उस दुकान पर मक्खियां भिनभिनाती थीं।

अवस्था के बिगड़ने पर भी प्रताप को चेतना न हुई। वह बढ़िया स्कॉच व्हिस्की पीता-पीता अब देसी फरीदकोट की बनी शराब पीने लगा था। और इससे उसका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा था।

इस समय तक उसके घर दो लड़कियां और हो चुकी थीं। दूसरी का नाम गंगा एवं तीसरी का नाम गोदावरी रखा गया। अब विष्णुदेवी घर पर पड़ोसियों के कपड़े सीकर निर्वाह किया करती थी।

इन दिनों मुहल्ले में से किसीने सुलक्षणमल को आकर बताया कि उसकी लड़की विष्णुदेवी की अवस्था बहुत बिगड़ गई है और वह बेचारी हाथ से काम कर अपना निर्वाह करती है। पिता ने अपने बड़े लड़के को भेजा कि वह जाकर मालूम करे कि क्या कारण है उस अवस्था का, और उसने अभी तक बताया क्यों नहीं।

शिवकुमार अपनी बहिन से मिलने गया। विष्णु को अपने पिता के घर गए पांच वर्ष हो चुके थे और पांच वर्ष से वह भाग्य से होड़ लगाए हुए, परिश्रम कर रही थी।

शिवकुमार प्रातः के अल्पाहार के समय पहुंचा था। यमुना खाना बना रही थी। वह इस समय आठ वर्ष की हो चुकी थी। विष्णुदेवी घर के वातायन के समीप बैठी मलमल का एक कुर्ता सी रही थी। उसकी आंखों पर चश्मा लगा हुआ था और उससे भी वह सीने में कठिनाई अनुभव कर रही थी।

बहिन भाई को आया देख, अपनी बिगड़ी अवस्था पर लज्जा अनुभव करने लगी थी। उसने यत्न किया कि मलमल के कुर्ते को छिपा ले परन्तु वहां छिपाने के लिए स्थान नहीं था।

"यह क्या कर रही हो विष्णी?"

"आओ भैया। आज तुम्हारा चित्त किया है बहिन को मिलने का? बैठो, पानी पिओगे?"

"नहीं। हमारे जीजा जी कहां हैं?"

"कहीं गए हैं।"

"बता कर नहीं गए?"

"बताने की आवश्यकता नहीं थी। मैं जानती हूं, वे कहां गए हैं?"

"कहां?"

"देसी शराबखाने में।"

"शराब के लिए पैसे कहां से पाते हैं?"

"साथ ही जुआखाना है। वहां छोटे-छोटे दांव लगाते हैं—कभी जीत जाते हैं तो खूब पीते हैं और बदमस्त हो, घर पर आ जाते हैं। हारते हैं तो भूत की भांति दीवारों के साथ-साथ आश्रय ले, चले आते हैं।"

"कभी जीतते हैं तो कुछ घर के व्यय के लिए भी देते हैं क्या?"

"हां। एक-आध रुपया खैरात के रूप में फेंक जाते हैं।"

"तो निर्वाह कैसे होता है?"

"मैं और यमुना दिन-भर में दो कुर्ते सी लेती हैं। गली के बाहर रमजान दर्जी है। वह काम दे जाता है। आठ आना प्रति कुर्ते की सिलाई देता है। इस तरह निर्वाह हो रहा है।"

"परन्तु तुमने पिता जी को कभी बताया नहीं ?"

"उनको क्या बताती ? अपने दुर्भाग्य की कथा बता, उनको व्यर्थ में दुःखी करती।" विष्णुदेवी की आंखों से आंसू बहने लगे थे।

"परन्तु बहिन, तुमको इस नरक से निकाल लेते।"

"भैया, यह भाग्य की विडम्बना यदि मानवकृत होती तो मनुष्य के करने से छूट जाती। भला भाग्य को कौन टाल सकता है! आपने तो अच्छे आदमी ढूंढ़े थे। दित्त-दाज भी खूब दिया था। भाग्य ने साथ नहीं दिया।" विष्णुदेवी की चोली भीगने लगी थी।

शिवकुमार ने कहा, "अच्छा, उठो, आज हमारे घर चलो। पिता जी को तुम्हारी दशा का वृत्तान्त कल किसी मुहल्ले वाले ने बताया तो वे तब से ही बेचैन हो रहे हैं। रात-भर वे सो नहीं सके। आज उन्होंने मुझको भेजा है कि तुमको वहां ले चलूं। वहां चलकर इसका कुछ उपाय ढूंढ़ा जाएगा।"

"क्या उपाय हो सकता है। मैं समझती हूं, आपने अपना कर्तव्य पालन कर दिया। भला मेरे दुर्भाग्य से झगड़ा कैसे होगा ?"

यमुना रोटी बना चुकी थी। वह रोटी थाली में परस, ले आई। तीनों प्राणियों का भोजन एक ही थाली में था। मूंग की दाल थी, आम का अचार था और बिना चुपड़ी रोटियां थीं।

गंगा तो पांच वर्ष की थी और खेल रही थी। रोटी आई देख वह भी वहां आ गई। सबसे छोटी गोदावरी अभी एक वर्ष की थी। उसको यमुना ने दूध पिलाकर सुला दिया था।

विष्णुदेवी ने अपनी दोनों लड़कियों को हाथ धो, भोजन करने के लिए कहा और स्वयं अधसिले कुर्ते को एक ओर खाट पर रख, हाथ धोने चल पड़ी। "भैया शिव", उसने रोटी खाने के लिए बैठते हुए कहा, "भोजन करोगे ?"

"नहीं बहिन, मैं भोजन करने नहीं आया। मैं तुमको यहां से बाहर करने के लिए आया हूं। मुझको बहुत ही दुःख है कि तुमने अपनी इस अवस्था का हमसे कभी वर्णन नहीं किया।" इन सूखी अधजली रोटियों को खाया जाता देख, शिव की आंखें भी तरल हो उठी थीं।

बहिन ने दृढ़ स्वर में कहा, "भैया, तुम लोग भी तो कभी खबर लेने नहीं आए। मैं तो यह समझ रही हूं कि बिना भगवान के आश्रय के उद्धार होगा नहीं।"

"तो भगवान के रूप में ही तो कल पिता जी को कोई कहने आया प्रतीत होता है। विष्णी बहिन, तुम नहीं जानतीं, परन्तु आज से पांच वर्ष पूर्व प्रताप जी दुकान पर किसी काम से गए थे और पिता जी के कुछ कहने पर दुर्वचन कहने लगे थे। वहां से आते समय प्रताप जी ने कहा था, 'यदि लड़की के घर का खाने में कुछ भी लज्जा लगती हो तो मेरे घर किसीको मत भेजना।' इसपर वे तुम्हारी मां को दुर्वचन कहते हुए चले आए थे। उस समय उनकी अवस्था इतनी बिगड़ी हुई प्रतीत नहीं होती थी। हमने यह समझा कि तुम पति-पत्नी सुखी रहो। हम दूर से ही सुख अनुभव कर लेंगे, तुमसे सम्बन्ध-विच्छेद कर बैठे।"

विष्णी को याद आ गया। गंगा का जन्म हुआ था। विष्णी की मां कर्मदेवी नई सन्तान के हेतु वस्त्रादिक लेकर आई थी। उसके साथ सदा और राम भी आए थे और विष्णी उनको मिठाई खिला रही थी। मां को जो कुछ देना था, देकर चली गई। सदा और राम दिन-भर शिशु लड़की को गोदी में ले खेलाने का रस लेने वहां रह गए थे। उस समय प्रताप आया था। कदाचित् भारी रकम हारकर आया था। उसने भी वहां पर रखे वस्त्र और उनपर कुछ रुपये रखे देखे तो पूछा, 'ये कहां से आए हैं?'

'मां दे गई है।'

'मेरे लिए क्या है?'

'आपके लिए भी वस्त्र हैं।'

प्रतापकृष्ण ने बिना देखे वस्त्र फेंककर कह दिया, 'अब हम निर्धन हो गए हैं। इसलिए सूती कपड़े देने लगे हैं?'

'तो हमारा उनसे पाने का अधिकार है क्या, जो दे गए उनकी कृपा है।'

'ठीक है और इन दोनों को यहां की रोटियां तोड़ने की कृपा कर गए हैं।'

विष्णी समझ रही थी कि उसका पति भारी रकम हारकर आया प्रतीत होता है। इससे चुप रही। बात आई-गई हो गई। राम और सदा चले गए और फिर उसकी मां के घर से कोई नहीं आया। यह तो उसको आज ही विदित हुआ था कि उसका पति उसके पिता से लड़ आया है।

उस समय अवस्था इतनी पतली नहीं हुई थी। इसपर भी परिवार निर्धनता के गर्त में धंसता जा रहा था। इन पांच वर्षों का पूर्ण इतिहास विष्णुदेवी को स्मरण आया तो वह पुनः आंसू बहाती हुई उन सूखी अधजली रोटियों को चबाने

लगी।

उसने रोटी खानी छोड़ दी। मन की अवस्था के कारण मुख का ग्रास गले से नीचे उतरता नहीं था।

वह उठ, स्नानागार में गई और मुख से ग्रास निकाल, गला और आंखों को धो-पोंछ, भाई के समक्ष आ बैठी।

उसकी अवस्था पर शिवकुमार ने भी अपने आंसू पोंछते हुए कहा, "मैं समझता हूं, तुमको चलना चाहिए। पिता जी किसीको भेज, जीजा जी को भी बुला लेंगे और फिर वहां बैठ, राय करेंगे।"

"मैं यह कहने वाली थी कि तुम जाओ। वे रात को आएंगे तो मैं उनको पिता जी से मिलने के लिए कहूंगी।"

"वह नहीं आएगा।"

"तो मैं वहां जाकर क्या करूंगी?"

"कम से कम ये कुर्ते सीने तो बन्द हो जाएंगे, ये सूखी रोटियां तो कुछ तर हो जाएंगी।"

"बिना उनके कुछ नहीं होगा शिव! फल खाए इस पेड़ के गन्दे कीने पात। यही हमारा धर्म है, जलेंगे इनके साथ।"

शिव बहिन की भावना समझता था और वह उसको पतित करना नहीं चाहता था। उसने कहा, "अच्छा बहिन! मैं उनको ढूंढ़कर लाता हूं और तुम सबको इकट्ठा ही ले चलूंगा।"

शिव मकान से नीचे उतर गया। मकान के नीचे एक दुकान पर से पूछने लगा, "भाई साहब! यहां देसी शराबखाना किधर है?"

दुकानदार ने शिव को प्रताप के मकान से उतरते देखा था। इस कारण उसने पूछा, "प्रताप को ढूंढ़ रहे हो?"

शिव को प्रताप की इतनी ख्याति देख विस्मय हुआ। उसने कह दिया, "तो आप जानते हैं कि वह कहां है?"

अभी बहुत सुबह है। वह शराबखाने में नहीं होगा। इस समय शराबखाने के बाहर एक बैठक पर होगा।"

"किसकी बैठक है?"

"नसीम रण्डी की।"

"वह किधर है ?"

दुकानदार ने बताया तो शिवकुमार उधर ही चल पड़ा। ढूंढ़ने में कुछ कठिनाई अवश्य हुई परन्तु बैठक का द्वार खुला था और सीढ़ियां चढ़ने पर चार-पांच आदमी हंसते हुए और बातें करते हुए सुनाई दिए। शिवकुमार सीढ़ियों में खड़ा उनकी बातें सुनने लगा। वह यह देखना चाहता था कि उनमें किसी स्त्री की आवाज़ है क्या। किसी औरत की आवाज़ सुनाई नहीं दी। बातचीत प्रताप के विषय में हो रही थी। एक सज्जन उसको गाली देता हुआ कह रहा था, "प्रताप! अब तो कई दिन से तुम निरन्तर हार रहे हो। बताओ, उधार कैसे दोगे ?"

"अरे भाई !" एक भर्राई हुई आवाज़, जिसको प्रतापकृष्ण की मानने को शिवकुमार को साहस नहीं होता था, कहने लगी, "कभी तो जीतूंगा ही। कब तक पत्ते उलट चलते रहेंगे।"

"नहीं, ओ उल्लू के पट्ठे ! अब एक पैसा और नहीं मिलेगा। कुछ बीवी की नथनी वगैरा है या नहीं। जाओ ले आओ तो बात करूंगा।"

"अब तो उसके पास भी कुछ नहीं ?"

"तो तुमको शर्म नहीं आती यहां आते हुए ?"

"शर्म किस बात की ? तुमसे उधार लूंगा। सुभीता होते ही दे दूंगा।"

"देखो प्रताप ! जाओ। मण्डी में दलाली ही कर लो। कुछ तो मिल ही जाएगा।"

"एक बार इसको आरम्भ किया था। एक-आध रुपया दिन-भर की भाग-दौड़ के बाद मिल जाता था। उससे तो चुल्लू-भर पानी भी नहीं मिलता था। मैं अपने को इतना सस्ता नहीं समझता।"

"तो तुम अपना क्या मूल्य लगाते हो ?"

"यदि दांव सीधा पड़ गया तो सौ-दो सौ एक घंटे में।"

"पर दांव लगाने के लिए कुछ तो जेब में होना चाहिए।"

"उसके लिए तुम पांच उधार दे दो।"

"तुम्हारे जैसे नहूसत को देकर वापस मिलेगा ही नहीं।"

"और यह क्यों नहीं कहते कि तुम्हारा रुपया ही नहूसत (अपशकुन) है।"

"बकवास बन्द करो प्रताप, निकल जाओ यहां से, नहीं तो सीढ़ियों से नीचे धक्का दे दूंगा। सीधे यमलोक पहुंच जाओगे।"

"पर यह मकान तुम्हारा है क्या ?"

"जिसके पास पैसा है, नसीमा उसकी है। नसीम का मकान भी उसीका है।"

"आह ! नसीम के भी मालिक बन बैठे हो ? आ ले वह, पूछूंगा।"

"अच्छा जी। अब उसकी अदालत में मुकदमा जाएगा ?"

"क्यों नहीं जाएगा ?"

"तो जाओ उसकी अदालत में।" इसके अनन्तर बैठक में हाथापाई की नौबत आ गई। शिवकुमार सीढ़ियों में खड़ा उनके वार्तालाप और झगड़े की बात सुन रहा था। एकाएक दो आदमी झगड़ते और लड़ते हुए सीढ़ियों के पास आ गए। उनमें से एक प्रतापकृष्ण था। शिव ने आवाज़ दे दी, "प्रताप !"

दोनों लड़ते-लड़ते सीढ़ियों में देखने लगे। लड़ाई बन्द हो गई। शिव ने पुनः कहा, "प्रताप चलो ! मैं तुमको बुलाने आया हूं।"

"क्यों, किसलिए बुलाने आए हो ?"

"एक नये जुएखाने में ले चलने के लिए।"

"तो शिव, तुम भी जुआ खेलने लगे हो ?"

"हां, आओ।"

प्रताप नीचे न उतरता, यदि उसका साथी उसको सीढ़ियों से नीचे धकेलने के लिए उसकी गर्दन पकड़े न खड़ा होता। बैठक में कुछ लोग और भी थे परन्तु उनमें से कोई भी उसकी सहायता के लिए तैयार नहीं हुआ था। इसपर एक ने आवाज़ लगा दी—"सूम जाए !"

रूपकृष्ण नीचे उतर आया। शिव ने उसके कंधे पर हाथ रखकर पूछ लिया, "प्रताप, कितना रुपया तुम्हें इसको देना है ?"

"कुछ नहीं दादा, यह रुपयों के लिए नहीं लड़ रहा था। यह तो नसीम के कारण लड़ाई थी। वह इस धनी बाप के बेटे पर भी मुझको तरजीह देती है।"

"पक्की बात कहते हो ?"

"हां दादा, अगर मैं दो दिन यहां न आऊं तो मुझको अपना नौकर भेजकर बुला लेती है।"

शिवकुमार को इस कथन पर उतना ही विश्वास आया जितना किसी भी मद्यसेवी और जुआरी पर आ सकता था। इसपर भी शिव ने अपने उद्देश्य को

पूर्ति के लिए मुस्कराते हुए प्रताप से पूछ लिया, "मालूम होता है वह तुमसे प्रेम करती है ?"

"ज़रूर करती होगी।"

"अच्छा देखेंगे, एक दिन। अव तुम मेरे साथ चलो, कुछ काम है तुमसे।"

"क्या काम है ?"

"कुछ तुम्हारे लाभ की वात विचार रहा हूं।"

"क्या वात है, वताओ न।"

"यहां वाज़ार में ही ? नहीं। चलो मेरे घर। तुम, विष्णी, यमुना, गंगा, गोदावरी—सव चलो।"

"क्या है ? लड़के की सगाई करने वाले हो ?"

"नहीं भाई, सगाई-वगाई कुछ नहीं। वैसे ही कुछ आय की वात है।"

"परन्तु मैंने तो कसम खाई है कि तुम्हारे लाला जी के मकान पर नहीं जाऊंगा।"

"मकान पर नहीं चल रहे, तुम लोग मेरी दुकान पर चलोगे।"

इस समय वे प्रतापकृष्ण के घर पहुंच गए थे। विष्णी का विचार था कि उसका घरवाला आएगा ही नहीं। इसलिए वह हाथ धो, पुनः कुर्ता सीने वैठ गई थी। यमुना वर्तन साफ कर रही थी।

शिव प्रताप को लेकर मकान पर आया तो उसने विष्णी को कहा, "उठो वहिन ! ये भी चल रहे हैं।"

"तो चलूं ?" विष्णी ने प्रश्न-भरी दृष्टि से अपने पति की ओर देखते हुए पूछ लिया।

"शिव दादा कह रहे हैं कि कुछ लाभ की वात है। आज मेरी जेव में कुछ नहीं है। जो कुछ था, सवका सव एक ही दांव में समाप्त हो गया है।"

"तो चलिए। दादा की वात भी सुन लें।" विष्णुदेवी ने कुर्ते से सूई टांक दी और उसको लपेटकर टोकरी में रख, कपड़े वदलने पिछले कमरे में चली गई।

२

विष्णुदेवी ने अपने पिता के समक्ष उपस्थित हो, कह दिया, "मैं अपने पति के साथ रहने में धर्म समझती हूं। मैं यह भी जानती हूं कि वे मद्य-सेवन करते हैं और जुआ

खेलते हैं। कदाचित् वेश्यागमन भी करते हैं, परन्तु मैं उनके इन कर्मों की भागीदार नहीं हूं। मैं यथाशक्ति उनकी और अपनी लड़कियों की सेवा कर देती हूं। यह मेरा धर्म है और मैं इसको पूर्ण करने का यत्न करती रहती हूं।"

"ठीक है विष्णी।" उसके पिता ने कहा, "मैं तुमको उसे त्यागने के लिए नहीं कह रहा। मैं तो यह कह रहा हूं कि उसका चरित्र सुधरेगा तो उसका स्वास्थ्य भी सुधरेगा और तुम्हारा सुहाग चिरकाल तक बना रहेगा। वर्तमान अवस्था में तो वह दो-तीन वर्ष से अधिक जीवित रह नहीं सकता। क्या तुम अपने सुहाग की भी चिन्ता नहीं करतीं?"

"करती हूं।" मैं उनको अपने वर्तमान व्यवहार को बदलने के लिए भी कहती हूं और जब देखती हूं कि मेरे कहने का प्रभाव नहीं होता तो भगवान से विनती करती हूं कि उनको सन्मार्ग दिखाए। बस यही तो मेरी सामर्थ्य की सीमा है।"

"इसमें कुछ हमको भी यत्न करने दो। हम तुम्हारी सामर्थ्य को अधिक करना चाहते हैं।"

"आप करिए।"

"तुम हमारे इस कार्य में सहयोग दो तो।"

"मैं उनसे लड़ नहीं सकती। मैं उनको त्याग भी नहीं सकती। इसके अतिरिक्त जो एक पत्नी के धर्म के विपरीत नहीं, वह मुझको बताइए। मैं यथाशक्ति करूंगी।"

"एक तो घर में पौष्टिक तथा स्वादिष्ट भोजन बने। दूसरे, तुम स्वच्छ और सुन्दर वस्त्र पहनो। तीसरे, लड़कियों को स्कूल में भेज, पढ़ने का अवसर दो। चौथे, घर को सुख-सुविधा का स्थान बनाओ। इसके लिए शिव तुमको साधन देगा। परन्तु तुम नकद उसको कुछ नहीं देना। जो वह तुमको दे, उसको सावधानी से रखना। व्यर्थ कुछ न जाए। शेष हम स्वयं प्रताप से निपट लेंगे।"

"कठिनाई तो यह है कि जब मेरे हाथ में वे रुपये देखेंगे और वे जुए के लिए अथवा अन्य व्यसनों के लिए मांगेंगे तो मैं इन्कार नहीं कर सकूंगी। यह मेरी प्रकृति में नहीं।"

"तुम्हारे हाथ में कुछ होगा ही नहीं। तुम चिन्ता मत करो। तुम आज से सीने-परोने का काम छोड़, गृहस्थी को सुखकारक बनाने का यत्न करो। दोनों

लड़कियों को स्कूल में भरती करवा दो।"

"तो खर्चा कैसे चलेगा ?"

"यह तुमको चिन्ता नहीं करनी चाहिए। शिव इसका प्रबन्ध करेगा।"

"मैं आपसे मांग नहीं रही। मैं इनसे अपना अधिकार नहीं मांगती।"

"पर मेरे दिए को लेने से इन्कार कैसे कर सकती हो! तुम मेरा अधिकार, कि मैं अपनी सन्तान को जो उचित समझूं, दूं, छीन क्यों रही हो ?"

विष्णुदेवी को पिता जी के कथन में कुछ भी आपत्तिजनक नहीं दीखा। वस्तुतः उसपर अपनी इच्छानुसार व्यवहार रखने में किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं था। वह चुप रही।

उसको समझा सुलक्षणमल ने उसे मां के पास भेज दिया। कर्मदेवी ने अपनी लड़की को पहनने योग्य वस्त्र दिए। लड़कियों को भी नवीन वस्त्र पहना दिए, और उनको अपने ही घर में कुछ दिन रहने का निमंत्रण दे दिया।

दूसरी ओर शिव प्रताप को बता रहा था, "देखो प्रताप, जुआ खेलना एक अनिश्चित लाभ का कार्य है। इसमें कभी भारी लाभ भी हो जाता है। यह एक बहुत बड़ा प्रलोभन भी होता है। इसको छोड़ा नहीं जा सकता।

"परन्तु इस अनिश्चय के आधार पर यदि कुछ निश्चित न हो तो इसका परिणाम यही होता है जो तुम अपने में देख रहे हो। पिछले पांच वर्ष में तुम आधे रह गए हो। इस अट्ठाईस वर्ष की आयु में तुम्हारे बाल पकने लगे हैं और मुख पर झुर्रियां पड़ने लगी हैं।"

"परन्तु भैया निश्चित आधार क्या हो सकता है ?"

"आय का निश्चित आधार है परिश्रम। कुछ घंटे नित्य ऐसा काम करो, जिसका फल उसमें लगाए परिश्रम और उस परिश्रम में प्रयोग की हुई बुद्धि के अनुसार हो। परिश्रम एवं बुद्धि तो अपने हैं। इस कारण उससे उपलब्ध आय भी अपनी और निश्चित है। नित्य ऐसी आय किया करो। फिर उसमें से कुछ के साथ अपने भाग्य की परीक्षा जुएखाने में लिया करो।

"परन्तु जुएखाने के कुछ नियम हैं। यदि उनका पालन करोगे तो उस मूर्ख से धक्के खा-खाकर जुएखाने से कभी निकल नहीं जाओगे।"

"क्या नियम हैं ?'

"उधार लेकर जुआ मत खेलो। अपने धन से जुआ खेलो। दूसरे के पैसों से

मत खेलो। यदि अपनी जेब में पूंजी समाप्त हो जाए तो फिर खेलना बन्द कर दो। जब जीतकर आओ तो एक निश्चित राशि से अधिक जेब में मत रखो। शेष को ऐसे कोष में जमा कर दो, जिसमें से अपने सुख-सुविधा के लिए ही निकाल सको।"

"यह तो बहुत कठिन है दादा, जब जुए में हार जाता हूं तो मन में और खेलने की प्रवृत्ति होती है। यह शराब पीने के तुल्य ही है। शराब पूर्व तो अति मृदुल मस्ती उत्पन्न करती है। परन्तु जब इसका प्रभाव मस्तिष्क पर होता है तो अधिक और अधिक पीने की उत्कट इच्छा होती है। यह सब तब तक रहती है जब मनुष्य सर्वथा अचेत नहीं हो जाता। यही बात जुए की है। ज्यों-ज्यों मनुष्य हारता तथा जीतता है। पहले तो यह मधुर-सा प्रतीत होता है उपरान्त जब इसका प्रभाव मस्तिष्क पर होता जाता है तो फिर निरन्तर खेलने की इच्छा होती जाती है। यह इच्छा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, जब या तो शराब की भांति बोतल रिक्त न हो जाए अर्थात् कोष रिक्त न हो जाए, अथवा मनुष्य सर्वथा अचेत—मेरा तात्पर्य है बुद्धि मन्द न हो जाए। तब मनुष्य युधिष्ठिर की भांति अपनी स्त्री तक को बाज़ी पर लगाने के लिए तैयार हो जाता है।"

"इसमें मैं तुम्हारी सहायता करना चाहता हूं। मैं दो प्रकार से यह सहायता कर सकता हूं। एक तो प्रातः ठीक आठ बजे यहां आ जाया करो। दो-तीन घंटे दुकान पर काम किया करो। इससे तुम्हारी निश्चित आय हो जाएगी। तुम जुए में जीतो अथवा हारो, यह आय तुम्हारी आधारभूत आय होगी जिसका सम्बन्ध हारने-जीतने से नहीं होगा, तुम्हारी बुद्धि एवं परिश्रम से होगा।

"पारिश्रमिक तुमको नित्य मिल जाया करेगा और इतना लेकर तुम जुएखाने में चले जाया करो। जब इतना हार जाओ तो खेलना बन्द कर दिया करो। जिस दिन जीत जाओ उस दिन जीता हुआ रुपया मेरे पास जमा करा जाया करो। उसपर आठ आने सैकड़ा ब्याज दिया जाएगा और तुम्हारी लड़कियों के विवाहादि के समय वह धन दिया जाएगा। कभी तुम जुआ खेलते पकड़े गए अथवा नसीम ने तुमको किसी झगड़े के कारण पकड़वा दिया तो तुम्हारे मुकदमे पर व्यय किया जाएगा।"

"नसीम झगड़ा नहीं करेगी। मुझको विश्वास है।"

"तो उस अवस्था में कुछ व्यय नहीं होगा। फिर भी तुमको विश्वास होना क्या उचित नहीं कि यदि किसीसे उलझ गए तो तुम बेयारो मददगार नहीं रहोगे?"

"अच्छा, तीन-चार घंटा प्रतिदिन काम करने से क्या मिल जाया करेगा ?"

"वह निर्भर है तुम्हारे काम पर। जितना चित्त लगाकर काम करोगे उतना अधिक तुमको मिल जाएगा। देखो प्रताप जी ! हमारे यहां बीस-पचीस कर्मचारी हैं। मैं भी एक कर्मचारी हूं। कर्मचारी आठ आना नित्य से लेकर दस रुपये नित्य तक प्राप्त करते हैं। मैं दस रुपये नित्य लेता हूं।"

"यह तो कुछ भी न हुआ। इतना तो जब मैं जीतता हूं तो शराब पिलाने वाले को टिप (बख्शीश) दे देता हूं।"

"पर देखो प्रताप, जुए में जीती राशि में से वह कर सकते हो। वह फोकट की आय है। उसमें से दस से भी अधिक बखशीश दी जा सकती है। मगर मेहनत-मज़दूरी के दस रुपये का मूल्य तो जुए में जीते हज़ार रुपये से भी अधिक होता है। इसमें अपना खून और पसीना होता है।"

वास्तव में प्रतापकृष्ण को इस समय दस रुपये की अति आवश्यकता थी। वह अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा नसीम की बैठक में पुनः प्राप्त करने की अभिलाषा रखता था। इससे वह पूछने लगा, "और मज़दूरी नित्य की नित्य मिलेगी ?"

"हां। तीन घंटे काम करोगे तो मज़दूरी मिल जाएगी।"

"तो भैया ! काम बताओ। अब बारह बजे हैं। मैं सांयकाल से पूर्व उस बेईमान के बच्चे जग्गू को यह बताना चाहता हूं कि नसीम उसकी कुछ भी परवाह नहीं करती।"

"इधर आओ।" शिवकुमार उसको दुकान पर ले गया। उसको एक स्थान पर बैठा दिया और पिछले वर्ष की वही उसके समक्ष रखकर कहने लगा, "देखो प्रताप, इसमें हमें कुछ से रुपये लेने हैं। कुछ को देना है। तुम लेन-देन का पृथक्-पृथक् चिट्ठा तैयार कर दो। जब तक तुम ये चिट्ठा तैयार कर दोगे तब एक दूसरा काम है वह बता दूंगा। अभी तुम खाली कागज़ पर ही बनाओ। जब मैं देख लूंगा कि ठीक बन गया है तो फिर नई वही में लिखने के लिए कह दूंगा।"

तीसरे पहर शिवकुमार उसको चाय के लिए पुनः दुकान के ऊपर घर पर ले गया। वहां उसको विष्णुदेवी और अपनी लड़कियों के साथ बैठ, चाय पीने के लिए कहा गया। अल्पाहार लेते समय प्रताप ने अपनी स्त्री तथा बच्चों को नवीन रेशमी वस्त्रों में देखा तो पूछने लगा, "ये कहां से पा गई हो ?"

"मां जी ने दिए हैं।"

"किस निमित्त ?"

"लड़कियों की नानी होने के निमित्त। उन्होंने इनको फटे-मैले कपड़ों में देखा तो ये इनको पहना दिए हैं।"

"तम जानो, तुम्हारा काम जाने।"

प्रतापकृष्ण को अल्पाहार में एक दिल्ली के सेठ के घर में बनी नमकीन दाल-भुजिया, फलों की चाट और उसके साथ लौंग-इलायची से बनी चायमिली। ये वस्तुएं उसको कई वर्षों के उपरान्त प्राप्त हुई थीं। जब से उसकी पत्नी को अपने तथा बच्चों के लिए मेहनत-मजदूरी करनी पड़ी थी, वह सूखी रोटी-दाल बनती देख घर पर खाना-पीना छोड़ बैठा था। बाजार से जैसी रोटी और साग-भाजी मिलती थी, उसीसे निर्वाह करता था।

आज उसको घर का खाना-पीना बहुत स्वादिष्ट प्रतीत हुआ। इसपर विष्णु-देवी ने कह दिया, "मां जी कुछ दिन यहां रहने के लिए कह रही हैं।"

"तो रह जाओ।"

"आप भी यहां रहोगे तो रहूंगी।"

"मुझको रात को बहुत देरी हो जाती है।"

"आपको कुछ जल्दी आ जाना चाहिए। साथ ही मद्य-सेवन कर यहां आना ठीक नहीं होगा।"

"इसीसे तो कहता हूं कि मैं यहां नहीं आऊंगा।"

"तो मैं भी यहां नहीं रहूंगी।"

"क्यों ?"

"केवल इसलिए कि माता-पिता ने मेरा हाथ आपके हाथ में पकड़ाया था। अब तो आपके हाथ में ही रहेगा। इससे हम दो घरों में कैसे रह सकते हैं ?"

प्रतापकृष्ण को समक्ष रखी फलों की चाट का स्वाद अनुभव हो रहा था। वह उसको कई वर्षों के पश्चात् खाने को मिली थी। इससे कुछ विचारकर उसने कहा, "अच्छा, यदि शिव मुझको कहेगा तो मैं रात सोने के लिए यहां आ जाऊंगा।"

"भैया कह देंगे। जब तक हाथ तंग है यहां आ ही जाना चाहिए। हां, मद्य बाजार में ही पीकर मत आइएगा।"

"क्यों ?"

"रात को मकान के बाहर चौकीदार बैठा रहता है। वह आपको देखेगा तो

क्या कहेगा !"

"क्या कहेगा ?"

"यही कि इतने बड़े बाप के बेटे और सेठ के दामाद गली की नालियों में गिर-गिर पड़ते हैं।"

"पर मुझको तो उसके बिना नींद नहीं आती।"

"आप घर पर ला रखिए।"

"तो अब तुम घर पर पीने को दोगी ?"

"हां, मां जी ने समझाया है घर पर दिया करूं।"

"तुम पिलाओगी ?"

"नहीं। पियोगे तो स्वयं ही। मैं आपके लिए छिपाकर रख छोड़ूंगी। जब मांगोगे तो दे दिया करूंगी।"

"तो अब लड़कियों पर उस पीने का प्रभाव नहीं होगा ?"

"वे पृथक् कमरे में सोया करेंगी। शिव भैया के बच्चे हैं। ये सब इकट्ठे सोएंगी। एक बात और है। यमुना और गंगा स्कूल में भरती होंगी।"

"बात यह है विष्णी, कि मैं पिता जी से लड़कर गया था। पांच वर्ष से अधिक हो गए हैं। अब उनके घर रहने में मुझे लज्जा आती है।"

"भैया स्वयमेव आपको कहें कि आप यहीं रह जाइए तब तो लज्जा की बात नहीं रहेगी ? वे तो आपके झगड़े को भूल गए हैं और आप इसे भूल नहीं पाए। मज़ेदार बात तो यह है कि आप घर की अन्य अनेकों बातें भूल जाते हैं।"

"मुझको वह भी स्मरण है कि झगड़ा क्यों हुआ था ?"

"किस कारण हुआ था ?"

" राम और सदारानी मेरे घर में आए हुए थे। वे आनन्द से बैठे मिठाई खा रहे थे। मुझको कुछ ऐसा समझ आया था कि वे मेरे गाढ़े पसीने की कमाई हज़म कर रहे हैं। मैं यहां आया था और तुम्हारे पिता जी से कहने लगा था कि 'आप अपने बच्चों को यहां बुला लें। उनको अपनी निर्धन बहिन के घर का खाते हुए लज्जा आना चाहिए।'

" 'अपने बड़ों के घर का खाने में तथा उनके अनुभव का भागीदार बनने में लज्जा नहीं लगती प्रताप ! यह सौभाग्य माना जाता है।' पिता जी का कथन था।

" इसपर मैंने उनसे लड़ना आरम्भ कर दिया। "

"तो आप अब अनुभव करते हैं कि आपने गलती की थी। साथ ही यह भी आपको मालूम होना चाहिए था कि माता जी जब उनको हमारे घर पर छोड़ गई थीं तो उनके दिन-भर के खाने के लिए अपने पास से दे गई थीं। उसपर हमारा एक पैसा भी व्यय नहीं हुआ था।"

"तो क्या करूं? मैं झगड़ा कर गया था।"

"तो ऐसा करिए, आप चुप रहिए। पिता जी तो कदाचित् भूल गए हैं कि क्या झगड़ा था और कब था। आपको शिव भैया यहां रहने के लिए कह दें तो कह दीजिए कि मुझको राज़ी कर लें। शेष मैं सब ठीक कर दूंगी।"

३

प्रतापकृष्ण तो संभला नहीं। हां, विष्णुदेवी तथा उसके बच्चों का भविष्य अवश्य सुधर गया था। जब प्रताप को शिव ने अपने घर में निवास करने का निमंत्रण दे दिया तो प्रतापकृष्ण मान भी गया, परन्तु कुछ ही दिनों के उपरान्त उसने वहां आना पुनः छोड़ दिया।

शिवकुमार ने तीन-चार घंटे नित्य गलत-मलत काम करने का दस रुपये नित्य भी दिया और प्रतापकृष्ण ने कुछ दिन तक अपने जुए में जीतने का धन उसको लाकर भी दिया परन्तु वह अपने इस निश्चय पर स्थिर नहीं रह सका।

पहले ही दिन जब वह नसीम की बैठक पर पहुंचा तो वहां पर एकत्रित जुआरी उसको नित्य से अधिक प्रसन्न देख समझ गए कि आज फिर वह अपनी स्त्री का कोई आभूषण लेकर खेलने आया है। "आओ प्रताप! कुछ है जेब में?"

"प्रताप की जेब में दस रुपये थे। ये शिवकुमार ने उसे दिए थे। वह बैठ गया। जग्गू ने उसके सम्मुख ताश रख दी। "फेंट दो।" जग्गू ने कहा।

प्रताप ने 'ताश' को फेंटते हुए कहा, "नई मंगवाओ। इस गंदी ताश से मैं नहीं खेलूंगा।"

"ओह! बहुत कुछ लेकर आए हो जेब में!"

"कुछ भी हो। मैं इससे नहीं खेलूंगा।" जग्गू ने बैठक के नौकर करीम की ओर देखकर कहा, "लाओ भाई, नई ताश ला दो।"

"आठ आने दाम।" करीम का प्रश्न था।

"प्रताप देगा।"

"नहीं। तुम जीते हुए हो। दाम तुम दोगे।"

"अच्छा, जो जीतेगा वह देगा। क्यों करीम ! ठीक है न ?"

करीम ने ताश की नई डिब्बी अलमारी में से निकालकर सामने फेंक दी। ताश के पैकट को प्रताप ने खोला। पत्तों को फेंटा और जग्गू ने पत्ते बांटे। खेलने वाले चार आदमी थे। पत्ते बांटे तो प्रताप ने दस रुपये का नोट, जो वह शिवकुमार के पास से लेकर आया था, बाज़ी पर लगा दिया। सबने दस-दस रुपये बाज़ी पर लगा दिए।

जग्गू ने कहा, "बाज़ी दस नहीं पांच की ठीक रहेगी।"

बुद्धू मियां ने कह दिया, "जग्गू भैया, एक घंटे से जीत रहे हो। अब दस रुपये में पानी पतला पड़ गया है ?"

यह सत्य था कि उस दिन प्रताप के आने से पूर्व जग्गू एक हज़ार तक जीत चुका था। इससे उसको चुप रहना पड़ गया। पत्ते खोले गए। प्रताप के हाथों में चारों बादशाह थे। जग्गू के हाथ छक्की-सत्ती थी। अन्य के हाथों में जग्गू से ऊंचे पत्ते थे परन्तु प्रताप से घटिया थे। प्रताप के दस के चालीस हो गए।

अब बांटने की बारी प्रताप की थी। फेंटने की बारी जग्गू की थी। प्रताप ने चालीस के चालीस बाज़ी पर लगाए। सबने भी उतने-उतने निकालकर रख दिए। इस बार पुनः प्रताप जीता। अब उसकी जेब में एक सौ साठ रुपये थे। तीसरी बार उसने एक सौ साठ की बाज़ी लगानी चाही। बुद्धू मियां उठ गए। उसकी जेब में इतना धन नहीं था। उसने कहा भी, "प्रताप बाबू उधार दें तो मैं खेल सकता हूं।"

प्रताप ने कहा, "बुद्धू भैया ! तुम एक तरफ हट जाओ। आज तो मेरी बाज़ी जग्गू से लगेगी।"

इसपर अन्य दोनों हट गए। अब प्रताप और जग्गू में चलने लगी। तीन बार के खेल में जग्गू खाली जेब हो गया। आज कई मासों के पश्चात् उसकी जेब में बारह सौ से ऊपर रुपया था। जग्गू ने कहा, "अभी उधार दे दो तो मैं और खेलूंगा।"

"नहीं ओ जग्गू। सुबह मैं तुमसे पाच रुपये मांग रहा था। तुमने गर्दन से पकड़ सीढ़ियों के नीचे धकेलने का यत्न किया था। अब मैंने फैसला किया हुआ है कि जुएखाने में न तो उधार लूंगा न दूंगा।"

"अच्छा, नसीम को आने दो। फिर खेलूंगा।"

"हां, तुम नसीम की प्रतीक्षा करो, मैं तो चलता हूं।"

प्रताप ने नसीम के नौकर को कमीशन के एक सौ रुपये दिए और शेष रुपया बटोरकर चला गया।

आज उसने एक सौ रुपया मद्य पर व्यय किया। एकेग्रा नं० १ की तीन बोतलें खरीद घर पर जा पहुंचा। सेठ सुलक्षणमल के घर में बैठकर शराब पी जाने लगी। अगले दिन प्रताप ने शिवकुमार को पिछली रात की जीत की कहानी बताई तो शिवकुमार ने वह जीत का सब रुपया ले लिया और उसको काम पर लगा दिया। आज भी उसको कार्य का पारिश्रमिक दस रुपये दे दिया। उस दिन भी प्रताप जीतकर आया और उसने सब रुपये शिव के पास जमा करा दिए। यही बात कई दिन तक चलती रही। नसीम तक प्रताप के जीतने की खबर पहुंची तो वह एक दिन उस समय ही बैठक में आ पहुंची और प्रताप को जीत का रुपया ले भागते हुए पकड़ बैठी, "क्या जी लाला! अब पांचों घी में हैं तो हमको भूल ही गए हो?"

"नहीं बाई जी! आपको कैसे भूल सकता हूं!"

"तो कहां भागे जा रहे हो?"

"घर को?"

"आज यहां ही ठहर जाओ न?"

"बात यह है कि यह नीचे की ढाबे की रोटियां खाते-खाते ऊब गया था। इसलिए घर पर खाना-पीना होने लगा है।"

"पीना भी?"

"हां बाई जी। यमुना की मां भर-भरकर पिलाने लगी है।"

"ओह! तभी तो कहती हूं, भूल गए हो वे दिन, जब मेरी मुहब्बत में दीवाने बने रहते थे!"

"भूला तो नहीं। हां, जिस दिन धक्के दे-देकर यहां से निकाला गया था, उस दिन से तनिक सचेत और सतर्क हो गया हूं।"

"किसने धक्के दिए थे?"

"जग्गू ने—और करीम के देखते-देखते।"

"तो लाला जी। उस दिन बताना था। कब की बात है?"

"आज पन्द्रह दिन के लगभग हुए हैं। कहता था जिसके पास पैसा है, नसीम उसकी है और उसका मकान भी उसीका है।"

"वह बिलकुल मूर्ख है। पैसा तो चाहिए ही, मगर पैसे के अलावा इन्सान भी चाहिए। तुमने मुझको बताया होता तो मैंने उसको उसी दिन कान पकड़कर उसकी बीवी के पास भेज दिया होता। कैसे-कैसे गन्दे लोग यहां आते हैं!"

बस, तीन मास की बिगड़ी दो मीठी-मीठी बातों से बन गई। शिवकुमार से दिए गए दस रुपये प्रताप ने पृथक् अपनी जेब में रखे हुए थे। उसके मन में विश्वास बैठ गया था कि वे रुपये बरकत वाले हैं और उन दस रुपयों को खर्च कर देने से डरता था। इससे उनको वह जीते हुए धन से पृथक् रखता था।

उस रात प्रताप बैठक की ऊपरी मंज़िल पर नसीम के पास रहा। उसने जो छः सौ रुपयों के लगभग जीता था, सब व्यय कर दिया। रात बहुत आनन्द से व्यतीत हुई। अगले दिन उसको शिवकुमार के घर जाने में संकोच होने लगा। वह फिर वहां नहीं गया।

कई दिनों तक विष्णुदेवी और शिवकुमार उसकी प्रतीक्षा करते रहे। एक दिन शिवकुमार उसको खोजता हुआ नसीम की बैठक पर जा पहुंचा। वहां कुछ लोग बैठे मिले, परन्तु प्रताप न मिला। शिवकुमार ने पूछा तो सब बैठक के नौकर करीम का मुख देखने लगे। करीम ने कह दिया, "साहब! प्रतापकृष्ण को यहां आए आज दस दिन हो गए हैं।"

"तो कहां होगा वह?"

"खुदा जाने।"

शिवकुमार जब सीढ़ियां उतर रहा था तो उसने ऊपर बैठक पर बैठे हुओं को ठहाका मारकर अट्टहास करते सुना। वह सीढ़ियों में ठहर गया। परन्तु एकाएक सबकी हंसी रुक गई और बैठक में शान्ति छा गई। करीम साढ़ियों के ऊपर झांक रहा था। शिवकुमार भी हंसी की आवाज़ सुन, ठहर गया था और ऊपर को देखने लगा था। करीम ने आवाज़ दे दी, "लाला जी! प्रताप को ढूंढ़ना हो तो बानो की बैठक पर जाइए। किसीने उसको वहां पर देखा है।"

"वह किधर है?" शिवकुमार ने पूछा।

"चावड़ी बाज़ार के जामा मस्जिद वाले कोने पर दो बैठक छोड़कर।"

शिवकुमार को इन रंडियों का अनुभव नहीं था। इसपर भी बहिन का विचार कर

वह पूछता-पूछता वहां पहुंचा। वहां बानो नाचने के लिए पांवों में पायल बांध, तैयार खड़ी मिली। वहां वह बैठ गया। बानो ने समझा कि कोई नया शिकार आया है। अतः उत्साह से नृत्य आरम्भ कर दिया। जब सब बखशीश देने लगे तो शिव ने भी एक दस का नोट निकालकर मैदान में फेंक दिया। बानो ने देखा तो कह दिया, "बस !"

शिवकुमार ने मुस्करा दिया। पान-सुपारी वितरण करने वाले से वह पूछने लगा, "मैं एक प्रतापकृष्ण की खोज में आया हूं।"

"कितनी आयु है उसकी ?"

"पचीस-तीस वर्ष की होनी चाहिए।"

"ओह ! मैंने समझा कि कोई नाबालिग है। लाला, उसकी घर पर प्रतीक्षा करिए, उसको घर का रास्ता तो आता होगा।"

लज्जित हो शिवकुमार घर लौट आया। छः मास व्यतीत हो गए। प्रताप घर नहीं लौटा। इस दुर्घटना से विष्णुदेवी बहुत शोकातुर रहती थी। उसका विचार था कि उसके भाई की योजना से ही वह भाग गया। एक दिन उसने अपने पिता से कह दिया, "आपकी योजना से तो मैं जो कुछ थी, वह भी नहीं रही।"

सेठ सुलक्षणमल भी इस बात को अनुभव करता था। उसने कहा, "हमारा विचार था कि वह इस प्रकार धीरे-धीरे सुधर जाएगा। परन्तु हमारा विचार गलत निकला। ऐसा प्रतीत होता है कि उसके पूर्वजन्म के कर्म अति प्रबल सिद्ध हुए हैं।"

"कुछ भी हो। यदि आप कहें तो मैं अपने घर चली जाऊं।"

"क्या करोगी वहां जाकर ?"

"उनके आने की प्रतीक्षा करूंगी।"

"और लड़कियां ?"

"यदि शिव भैया मानें तो यमुना और गंगा यहीं ही रहेंगी। उनकी लड़की के साथ रहेंगी। गोदावरी को मैं अपने साथ ले जाऊंगी।"

"और फिर कुर्ते सीया करोगी ?"

"हां। पेट तो भरना ही होगा।"

"नहीं। मेरा कहा मानो। तुम उस घर में जाओ। उसको शिव सब सुन्दर सामान से सुसज्जित करा देगा। शिव तुम्हारे भोजन-वस्त्र की भी व्यवस्था कर

देगा। कुछ रुपया तुम्हारे अन्य व्ययों के हेतु तुमको मास की प्रथम तिथि को दे आया करेगा।"

"और मैं खाली बैठकर क्या किया करूंगी ?"

"रामायण का अध्ययन करो। भगवद्भजन किया करो और घर को उसके स्वागत के लिए तैयार रखो।"

विष्णुदेवी छः मास अपने पिता और भाई के घर रहकर पुनः अपने पति के मकान में चली गई। मरम्मत, सफेदी, रंग-रोगन और नये फरनीचर से मकान को ठीक रहने योग्य बनवा दिया गया।

विष्णुदेवी अब वहां रहने लगी। अपने पति की अनुपस्थिति में उसने निर्णय कर लिया था कि वह साध्वियों का सा जीवन व्यतीत किया करेगी। घर में तो पलंग, दरी-कालीन बिछे थे। खिड़कियों और दरवाजों पर पर्दे टंग गए थे। भोजन के लिए प्रत्येक प्रकार के स्वादिष्ट एवं पौष्टिक पदार्थ आ गए थे। परन्तु वह श्वेत परिधान में अनलंकृत एवं भूषणों से रहित रहती थी। उसके सोने के कमरे में भूमि पर चटाई बिछी थी। बच्ची गोदावरी के लिए एक खटोला रहता था। वह नमकीन दलिया और शाक-भाजी पर निर्वाह करती थी।

शिवकुमार अथवा दुकान के वृद्ध मुनीम दूसरे-तीसरे दिन आकर समाचार ले जाया करते थे। इस प्रकार के जीवन के भी छः मास से ऊपर व्यतीत हो गए थे।

शिवकुमार आदि को इस परिश्रम के भी असफल हो जाने का विश्वास होता जाता था। इन दिनों एक दिन सेठ सुलक्षणमल स्वयं लड़की के घर आए और उसको समझाने लगे, "तुम्हारे इस प्रकार अकेले रहने से तो मुहल्ले के लोग भी निन्दा करने लगेंगे।"

"इससे मेरा क्या बिगड़ेगा ?"

"हमारी बदनामी होगी।"

"तो आप मेरी खबर लेने न आया करिए। जब आपको कोई कुछ कहे तो कह दीजिए कि आपने मुझसे सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया है।"

"अर्थात् उनके लांछन का समर्थन कर दें। नहीं, यह नहीं हो सकेगा।"

"पर मैं अब यहां से जाऊंगी नहीं। मेरी तपस्या अभी अधूरी है। मैं उनको छोड़ नहीं सकती।"

सुलक्षणमल कह नहीं सका कि अपने नालायक पति की आशा त्याग दे।

अब तक यह विदित हो चुका था कि वह वहीं नसीम की बैठक पर उसके साथ रहता है। इतना कुछ विष्णुदेवी को बता दिया गया था। इसपर भी वह उसको छोड़ने के लिए मन को तैयार नहीं कर सकी।

उसने अपने पिता को अन्तिम बात कह दी, "पिता जी! पवित्र अग्नि को साक्षी बनाकर मैंने उनसे सम्बन्ध बनाया है। अब वह सम्बन्ध टूट नहीं सकता। सुख-दुःख तो भगवान के अधीन हैं।"

एक दिन रात के दस बजे मकान का द्वार खटखटाने का शब्द हुआ तो विष्णुदेवी ने वातायन से झांककर देखा। गली में अंधेरा था। वह देख नहीं सकी कि कौन है। उसने आवाज़ दे दी, "कौन? और क्या चाहते हो?"

"मैं हूं, विष्णी।" आवाज़ भर्राई हुई थी।

"तुम कौन?"

"प्रताप।"

"ठहरो।" वह नीचे गई। उसने सीढ़ियों में रखी मिट्टी के तेल की कुप्पी को जलाया और द्वार खोल दिया। लड़खड़ाते पगों से प्रतापकृष्ण भीतर घुस आया। उसको पहचान, विष्णी ने दरवाज़ा भीतर से बन्द कर लिया और उसे बांह का आश्रय दे ऊपर ले गई। उसके मुख और वस्त्रों से मद्य की तीव्र गंध आ रही थी।

ऊपर की मंज़िल पर पहुंच, उसने उसे एक सोफासेट पर बैठा दिया और उसको बेहाल, उसके कपड़ों को मिट्टी में लथपथ और सिर तथा पांव से नग्न देख सब कुछ समझ गई। वह समझ गई कि वे सब कुछ हारकर अकिंचन हो लौटे हैं।

विष्णी ने कह दिया, "ये कपड़े बहुत गन्दे हो रहे हैं। इनको उतार दीजिए। आपको धोती-कुर्ता देती हूं।"

"मैं स्नान करूंगा। गरम पानी मिलेगा?"

"हां, कुछ समय लगेगा।"

जल गरम किया गया। प्रतापकृष्ण ने स्नान किया और फिर कपड़े पहने। विष्णुदेवी ने दलिया तैयार किया और उसको पेट-भर खिलाया, तदनन्तर सोने के लिए पलंग पर बिस्तर लगा दिया। स्नान करने से नशा उतर गया था। वह पलंग पर लेटा तो उसको सुख अनुभव हुआ। उसने पत्नी को कहा, "तुम भी लेट जाओ।"

"मेरा बिस्तर उस कमरे में लगा है।"

"किस कमरे में ?"

"यह साथ वाले कमरे में।"

प्रताप ने उठकर उस कमरे को देखा। वहां चटाई बिछी थी। लड़की जो इस समय दो वर्ष की हो चुकी थी, एक खटोले पर सो रही थी। प्रताप ने कहा, "तो मैं भी यहीं सो जाऊं ?"

विष्णी ने सिर हिला दिया और उंगली से कमरे के कोने में ठाकुर जी की चौकी की ओर संकेत कर दिया। प्रताप इस इन्कार का अर्थ नहीं समझ सका तो विष्णुदेवी ने समझा दिया, "मैं अभी ठाकुर जी की सेवा में हूं। आप जाकर सो जाइए।"

"ठाकुर जी की सेवा ?"

"हां। मेरी जाप और तपस्या अभी समाप्त नहीं हुई।"

प्रतापकृष्ण जाकर पलंग पर लेट गया और अपने नरम गद्देदार पलंग को छोड़, कठोर भूमि पर पत्नी के सोने पर विस्मय करते हुए करवटें लेता रहा।

४

जब तक शिवकुमार का दस का नोट सुरक्षित रहा, वह निरन्तर जीतता रहा। यह क्रम सात-आठ मास तक चला। नसीम उसे एक भाग्यशाली खिलाड़ी समझ, अपने पास रखे हुए थी। इन आठ मासों में नसीम ने पचास हज़ार के लगभग प्रतापकृष्ण का जीता हुआ रुपया प्राप्त किया था। एक वेश्या के घर का व्यय भी असीम था। रुपया पानी की भांति आता था तथा पानी की ही भांति वह जाता था।

इस काल में नसीम तथा प्रताप इकट्ठे ही रहते थे। भाग्य की गति एक समान नहीं रहती। अच्छे दिनों के उपरान्त बुरे दिन भी आ जाते हैं। एक दिन शराब के नशे में वह शिवकुमार वाला दस का नोट खर्च बैठा। शराब के नशे में उसने शराब पिलाने वाली बांदी को वह बखशीश में दे दिया था।

भाग्य का पांसा अगले दिन से बदला। पहले तो कभी जीत कभी हार होने लगी। धीरे-धीरे हार अधिक और जीत कम और अन्त में हार ही हार रह गई।

ऐसा चलते हुए भी चार मास से ऊपर व्यतीत हो गए। नसीम का व्यय उसी

स्तर पर चल रहा था जिस स्तर पर जीत के दिनों में था और जब निरन्तर हार होने लगी तो नसीम ने समझा कि प्रताप का सितारा मन्द गति में चला गया है। वह अब किसी उच्च गति पर चलने वाले सितारे की खोज करने लगी।

आखिर वह मिला। एक दिल्ली के रईस घासीराम लोहिया का लड़का किशोरचन्द जुए की बैठक पर पहुंचा। उसको ऊपर की मंज़िल पर ले जाने में कुछ भी कठिनाई न हुई।

नसीम को अभी भी यह आशा थी कि प्रताप का सितारा उच्च स्तर पर आ सकता है। इस कारण वह दोनों से सम्बन्ध बनाए हुई थी। किशोरचन्द लोहिया में दो विशेषताएं थीं। एक तो वह जीते या हारे, नसीम के लिए भेंट सदैव उसकी जेब में रहती थी। दूसरा यह कि वह मद्य को छूता तक नहीं था। इससे वह समझती थी कि यह आदमी लूटा नहीं जा सकता। प्रतापकृष्ण तो शराब में बद-मस्त हो सब कुछ नसीम के हाथ में दे देता था।

एक दिन नसीम ने किशोर के मन की भावना को जानने के लिए कह दिया, "किशोर जी! आप प्रताप को जानते हैं?"

"हां, देखा है। वही जो आपके लिए सुपारी कतरा करता है और पान लगाया करता है।"

"वास्तव में वह मेरा प्रेमी है।"

"सत्य?"

"हां।"

"पर मैंने तो सुन रखा है कि आपकी जात वालियों का प्रेम धन से होता है, किसी व्यक्ति से नहीं।"

"आप तो बहुत समझदार हैं। इसपर भी मैं आपको बताना चाहती हूं कि प्रताप ने मेरे पास पचास हज़ार जमा करा रखा है, जिसको मैंने ब्याज पर चढ़ाया हुआ है। उससे पांच सौ रुपया महीना मुझको ब्याज आता है।"

"यह तो बहुत अच्छी बात है।"

"मैं यह कह रही हूं कि आपसे कुछ अधिक की आशा रखती हूं।"

"कितना अधिक?"

"जिससे मैं प्रताप को छुट्टी देकर पूर्णरूपेण आपके आश्रय रह सकूं।"

"और मुझसे अधिक कोई देने वाला आ गया तो मुझको छुट्टी दे दोगी?"

"आप इतना कुछ दीजिए कि उससे अधिक देने वाला कोई आ ही न सके।"

"मेरे पास तो पचास हज़ार है ही नहीं। हां, मैं एक लाख के ब्याज के बराबर प्रतिमास दे सकता हूं।"

"अर्थात् एक हज़ार रुपया महीना ?"

"हां।"

"परन्तु विश्वास कैसे आएगा कि आप मुझको ये देना बन्द नहीं कर देंगे। मैं सदा जवान तो रह नहीं सकती।"

"मैं समझता हूं कि एक हज़ार में तो तुमको बुढ़ापे के लिए बचा रखने के लिए भी समझ लेना चाहिए। जिस बाबू का वेतन एक हज़ार रुपया हो, उसके पास तो बूढ़ा होने तक एक लाख की सम्पत्ति एकत्रित हो जाती है।" नसीम के पास इस बात का उत्तर नहीं था। परन्तु जिस दिन किशोर ने नसीम को एक हज़ार दिया उस दिन ही उसने प्रताप को वहां से निकाल देने का आग्रह कर दिया।

"मैं औरत उसको कैसे निकाल सकती हूं।"

"तुम चुप रहो तो मैं निकलवा दूंगा।"

इस प्रकार नसीम की स्वीकृति ले, एक दिन प्रताप को तेज़ शराब पिला, अचेत कर, बैठक के नीचे नाली में डाल दिया गया। नसीम के सेवक ही इसमें उसके सहायक हो गए।

दो घंटे वहां पड़े रहने पर उसको कुछ चेतना आई तो वह उठा और स्मरण करने लगा कि क्या हो गया है। ज्योंही उसको समझ आया कि वह नाले में पड़ा है, वह आत्मग्लानि में गलने लगा। वह उठा और नाली में से बाहर निकला परन्तु सड़क पर चक्कर खाकर गिर पड़ा।

इस समय उसको अपनी पत्नी और बच्चों की याद आई। उसको विश्वास नहीं आता था कि इस अवस्था में और उस व्यवहार के पश्चात् जो उसने पत्नी के साथ किया था, वह उसे, वापस जाने पर स्वीकार करेगी।

उसको यह विदित हो चुका था कि उसकी पत्नी पुनः उसके घर में आकर रहने लगी है। इससे वह अपनी पत्नी की परीक्षा के लिए मकान के नीचे जा पहुंचा और दरवाज़ा खटखटाने लगा। आशा के विपरीत उसकी पत्नी उसको आश्रय दे ऊपर ले गई। उसके लिए पानी गरम किया। स्नान कराया और खाने को दिया। पश्चात् सोने के लिए पलंग दिया। इतने पर भी उसने उसके पलंग का भागीदार

बनना स्वीकार नहीं किया।

इस सब अप्रत्याशित व्यवहार पर विचार करते हुए रात-भर उसको नींद नहीं आई।

प्रतापकृष्ण ने रात कई बार उठकर देखा, उसकी पत्नी चटाई पर गहरी नींद सो रही है। अर्थात् उसको भूमि पर लेटने का भी किसी प्रकार कष्ट नहीं हो रहा। वह अपने विषय में भी विचार करता। उसको कोमल गद्देदार पलंग पर भी नींद नहीं आ रही थी। वह समझ रहा था कि वह उससे अधिक सुखी प्रतीत होती है। क्यों? वह समझ नहीं रहा था।

दिन चढ़ने तक उसको नींद नहीं आई। विष्णुदेवी स्नान से अवकाश पा, सूर्योदय से पूर्व उस पलंग के पास आई। वह जाग रहा था। विष्णो ने उसे लेटा देख सोया हुआ समझा, इससे उसने अपने पति के चरण बिना छुए, माथा टेक दिया। एक क्षण तक प्रणाम कर वह अपने कमरे में चली गई और पूजा में लीन हो गई।

प्रताप को इसके पश्चात् कुछ काल के लिए एक झपकी लग गई। वह जागा तो दिन के आठ बज चुके थे। वह शौच आदि के लिए चला गया। वह लौटा तो उसके स्नान के लिए जल गरम किया जा चुका था। स्नान से निवृत्त हुआ तो प्रातः का अल्पाहार तैयार मिल गया। अल्पाहार करते समय उसकी पत्नी उसके सम्मुख बैठी थी। इस समय तक प्रतापकृष्ण ने मकान की सफाई, मरम्मत और फर्नीचर सब देख लिया था। यह सब कुछ ऐसा और इतना था जितना कि उसको सम्पन्नता के दिनों में भी उसे अप्राप्त था। भोजन-व्यवस्था भी सुन्दर थी।

प्रतापकृष्ण ने पूछ लिया, "यह सब तो बहुत सुन्दर है।"

"सब क्या?"

"मकान, फरनीचर, और तुम तथा गोदावरी। तुम लोग अब हृष्ट-पुष्ट प्रतीत होती हो। यह सब कहां से आया है?"

"भैया दे गए हैं।"

"क्यों?"

"वे भैया हैं—इस कारण।"

"परन्तु तुम तो भूमि पर सोती हो। तो तुमको इससे क्या लाभ हुआ है?"

"यह सब आपके भोग के लिए है। विवाह के समय भी उन्होंने बहुत कुछ

दिया था। उस समय तो मैं बालिका-मात्र थी। वह सब कुछ आपकी माता जी के पास था। उपरान्त आपने उसका भोग किया। अब पुनः यह सब कुछ दे गए हैं। और यह आपके लिए ही है।"

"और तुम ?—मेरा अभिप्राय है कि तुम्हारे भोग के लिए कुछ नहीं ?"

"मैं तो केवल आपके द्वारा ही भोग कर सकती हूं, जो कुछ और जितना आप मुझको भोग के लिए देंगे वही मैं ले लूंगी।"

"यह सब मैं नहीं समझ सका। तुम्हारे भाई ने दिया और तुम उसका प्रयोग नहीं करतीं।"

"यह हमारी जात-बिरादरी की रीति है। लड़की के माता-पिता लड़की को और उसके साथ दित्त-दाज को उसके पति को देते हैं। वही उसको सुखी रखने का दायित्व अपने सिर लेता है।"

"परन्तु मैं तो तुमको सुख दे नहीं सका।"

"यह मेरे भाग्य के अनुसार ही है।"

"तुम अल्पाहार भी नहीं ले रहीं।" प्रताप ने बात बदलकर पूछ लिया।

'आपके उपरान्त लूंगी।"

"मेरे साथ क्यों नहीं ? मुझसे घृणा है क्या ?"

"यह मेरा धर्म है। पति को खिलाकर ही पत्नी को खाना खाना चाहिए। ये धर्मशास्त्र में लिखा है।"

"तो तुम अभी अपने को मेरी पत्नी मानती हो ?"

"मेरे मानने न मानने का तो प्रश्न ही नहीं। ये तो देवताओं और परमात्मा की साक्षी में निश्चय हुआ था। भला, मैं कैसे अस्वीकार कर सकती हूं ?"

"कहां हैं देवता और परमात्मा ?"

"मुझको वह हर समय हर स्थान पर दिखाई देते हैं।"

"परन्तु रात तुमने पत्नी के कार्य से इन्कार किया था।"

"उस समय मैं अपने देवताओं को आपके लौट आने पर धन्यवाद करना चाहती थी।"

"परन्तु तुम तो सो गई थीं।"

"वह शरीर सो गया था। मन और आत्मा तो उनके चरणों में लगा हुआ था।"

प्रताप हिन्दू-धर्मशास्त्र के जो भी कुछ संस्कार अपने बचपन में रखता था, वे पिछले सात वर्ष के जीवन में विलीन हो चुके थे। मद्य के अति-सेवन से उसकी बुद्धि कुण्ठित हो चुकी थी और वह अपनी दुर्व्यवस्था को अपने परमात्मा में अविश्वास से जोड़ नहीं सका था। इसपर भी वह मन ही मन अपनी पत्नी की श्रद्धा-भक्ति और पति-सेवा को देख सुख अनुभव कर रहा था।

नसीम के पास उसको वासना-तृप्ति प्रचुर मात्रा में प्राप्त होती थी। यहां उसका लेश-मात्र भी नहीं था। यहां श्रद्धा, भक्ति एवं सेवा थी। दोनों में अन्तर स्पष्ट था। वहां और यहां में कौन श्रेष्ठ था—प्रताप सोच रहा। परन्तु बुद्धि निर्णय नहीं कर सकी थी।

बिना निर्णय किए भी वह नसीम के पास भाग जाता, यदि उधर का द्वार खुला होता। उसको रात की पूर्ण घटना स्मरण थी। किशोरचन्द लोहिया ने उसको पिलाकर अचेत करवाया था। और अवश्य ही उसने उसको उठवाकर नीचे नाली में डलवाया होगा। यह सब कुछ नसीम के देखते-देखते हुआ था। यूं तो एक मास से ऊपर हो चुका था नसीम को आंखें बदले हुए। यह किशोर के आगमन पर ही हुआ था।

अपने घर आने से पूर्व उसने नसीम की बैठक का द्वार खटखटाया था। परन्तु वह द्वार खुला नहीं था। उसके नौकर-चाकर अवश्य जागते होंगे। कोई न कोई तो जागता ही रहता था। परन्तु द्वार नहीं खुला। इस घर में द्वार खुलने की आशा नहीं थी। यहां का द्वार तो विशेष प्रयास के बिना ही खुल गया था। उसने अपना नाम बताया और उसकी पत्नी ने द्वार खोल दिया था। सबसे मजेदार बात यह थी कि विष्णुदेवी ने पूछा भी नहीं कि रात वह दुर्दशा कैसे हुई और वह यहां कैसे आ गया।

अल्पाहार समाप्त होने पर प्रतापकृष्ण ने पूछा, "मैं जानता नहीं कि मैं क्या करूं? वास्तव में मैं काम करने का ढंग ही भूल गया हूं। जानती हो कि मैं शिव की दुकान से क्यों भाग गया था?"

विष्णुदेवी के मन में यह बात स्पष्ट थी कि उसकी प्रेमिका अवश्य उससे अधिक सुन्दर, आकर्षक और मधुभाषी होगी। परन्तु उसने कहा कुछ नहीं। उसे चुप देख, प्रताप ने कह दिया, "शिव ने मुझको वही में से कुछ नकल करने को दिया था। मैं नकल कर रहा था। दिन-भर के काम में बीसियों भूलें, अशुद्धियां और काट-

छांट करता था। मैंने कई दिन तक ठीक काम करने का यत्न किया। जब नहीं कर सका तो भाग गया। अब पुनः फिर किसी काम करने की आवश्यकता अनुभव हो रही है, परन्तु क्या करूं, क्या कर सकूंगा, समझ नहीं आ रहा।"

"आपको कुछ करने की अभी आवश्यकता नहीं। अभी तो आप अत्यन्त थके हुए-से प्रतीत होते हैं। आप यहीं रहिए। आराम करिए। जब तबीयत ठीक हो जाएगी तब विचार कर लिया जाएगा।"

अन्य कुछ चारा भी नहीं था। "यमुना, गंगा कहां हैं ?"

"माता जी के घर पर हैं। वे स्कूल में पढ़ती हैं और वहां अन्य बच्चे भी पढ़ते हैं। वे उनके साथ रहती हैं और पढ़ती हैं।"

"तो मेरे आने पर भी तुम्हारे भैया घर के लिए व्यय दे देंगे ?"

"यह मैं कैसे कह सकती हूं। जब तक देते हैं, लेती हूं। जब देना बन्द कर देंगे तब विचार कर लूंगी।"

"अभी कितने दिन की रसद घर में है ?"

"अभी कई दिन तक के लिए है।"

प्रताप पुनः पलंग पर चढ़कर सो गया और विष्णी ने स्वयं भोजन किया और ताज़ी साग-भाजी खरीद लाई। उसने मध्याह्न के लिए भोजन तैयार कर दिया।

५

प्रतापकृष्ण को घर लौटे एक सप्ताह से अधिक हो गया। आरम्भ में उसको घर से निकलते लज्जा आती थी। अब धीरे-धीरे वह सब्ज़ी-भाजी लेने जाने लगा था। मोहल्ले वाले और बाज़ार में दुकानदार उसके घर में लौट आने को जान गए थे। वह घर की आवश्यक वस्तुएं खरीदने बाज़ार जाने लगा था और उनको उठा-उठाकर घर लाता देखा जाता था। इसपर भी किसीको उससे पूछने का न तो साहस होता था और कदाचित् न इसकी आवश्यकता अनुभव होती थी।

एक दिन वह सब्ज़ी खरीदकर तथा अपने लिए कपड़े सिलवाकर दर्जी से ला रहा था कि शिवकुमार बहिन के घर की ओर जाता दिखाई दिया।

"ओह प्रताप जी, किधर से आ रहे हैं ?"

"राम-राम भैया !" प्रताप तो आंख बचाकर निकल जाना चाहता था।

परन्तु शिवकुमार की दृष्टि में आ गया। अतः वह अब राम-राम करने पर विवश हो गया। शिवकुमार उसके घर आ जाने के विषय में पूछे बिना शेष प्रश्न कर दिया, "अब क्या कारोबार करने का विचार है?"

"अभी तक निश्चय नहीं कर सका। मुझको तो कोई काम ऐसा दिखाई नहीं देता जिसको सहस्रों और लाखों पहले न कर रहे हों। किसी नये आदमी के लिए किसी भी काम के लिए स्थान निकल सकेगा—समझ में नहीं आता।"

"शिवकुमार उसके साथ उसीके घर की ओर चल पड़ा।" शिवकुमार ने कुछ विचारकर कहा, "मुझको एक काम सूझ रहा है, जिसमें बहुत कम लोग हैं।"

"क्या है वह?"

"यह आप दुकान पर आइएगा तो इस विषय में योजना बनाई जा सकती है।"

"कुछ दिन से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहा। जरा ठीक हो जाऊं तो आऊंगा।"

"किसी वैद्य-हकीम को दिखाया है?"

"हां, एक वैद्य को दिखाया है। उसने बताया है कि कुछ दिन के लिए परिश्रम का काम न करो। इसीसे प्रायः घर पर पड़ा रहता हूं।"

"ठीक है। ईश्वर करे, आप शीघ्र स्वस्थ और सबल हो जाएं। तब आ जाइएगा। मैं आपके लिए और कुछ भी विचार करूंगा। एक बात और···"

"क्या?"

इस समय वे प्रतापकृष्ण के मकान के नीचे पहुंच गए थे। प्रतापकृष्ण ऊपर चढ़ते-चढ़ते रुक गया। वह अपने प्रश्न का उत्तर वहीं मकान के नीचे ही ले लेना चाहता था। शिवकुमार ने मुस्कराते हुए कह दिया, 'प्रताप जी, चलिए, उस विषय पर फिर बात करेंगे।"

"तो आप ऊपर नहीं आ रहे?"

"ऊपर ही चल रहा हूं। बहिन से मिलने ही तो आया हूं।"

प्रताप ऊपर चढ़ा तो शिवकुमार भी ऊपर की मंजिल पर चढ़ गया। निष्ठी ने अपने भाई की आवाज सुन ली थी। इस कारण वह सीढ़ियों पर खड़ी उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। शिवकुमार ने 'जै राम जी की' कहा तो निष्ठी ने सजल नेत्रों से मुस्करा दिया। वह यह कह रही थी कि उसकी योजना सफल हो रही प्रतीत होता है।

शिव ने पूछा, "बहिन ! बताओ अब क्या आवश्यकता है ?"

"भैया ! अब तो ये आ गए हैं।"

"ठीक है, परन्तु ये तो अभी आराम कर रहे हैं न ? देखो, मैंने मुन्शी फकीरचन्द को ये वस्तुएं भेजने के लिए कह दिया।"

उसने जेब में से एक कागज़ का पुर्ज़ा निकालकर पढ़ना आरम्भ कर दिया :

"दो ज़नाना सूती धोती, एक रेशमी धोती। चार टुकड़े बच्चे के फ्राक तथा जांघिये के लिए। चावल, दलिया, मूंग की दाल, अरहर की दाल, उड़द की दाल और चने। बेसन, नमक, मिर्च, मसाला। घी, सरसों का तेल तथा तिल्ली का तेल। आटा और चीनी। और क्या चाहिए ?"

विष्णुदेवी चुप रही। इसपर शिवकुमार ने कह दिया, "अब प्रताप भैया आ गए हैं। इस कारण राशन दुगना कर दूंगा और इनके लिए छः धोती, छः कुर्ते, छः सलूके, छः टोपी और जूता। पाकेट खर्चा भी दुगना हो जाएगा।"

"भैया ! ......" विष्णी कहते-कहते रुक गई। उसका गला आंसुओं से रुंध गया था।

"बहिन !" शिवकुमार ने आश्वासन देते हुए कहा, "मैं समझता हूं, अब तुमको भूषण इत्यादि पहन लेने चाहिए। कुछ वस्तुएं तुम्हारी भाभी को लाने के लिए कह दूंगा। तुम वह बताओ जो मुझको सूझ नहीं रहा।"

विष्णुदेवी ने कहा, "मैं यही विचारती हूं कि इनके आ जाने के पश्चात् मुझको किसी भी वस्तु का अभाव नहीं रहा। अब यह इनका काम है कि यह देखें कि क्या चाहिए और क्या नहीं चाहिए।"

"ठीक है। जो यह लाने वाले हैं उनके अतिरिक्त ही तुम बताओ।"

"मुझको आपसे लेते हुए लज्जा आ रही है।"

"यह तो तुम हमसे अन्याय कर रही हो, बहिन ! हम तुमसे ऐसी बात की आशा नहीं करते।"

शिवकुमार ने बात बदल दी। उसने प्रताप को सम्बोधित करते हुए कहा, "भैया ! शीघ्र से शीघ्र मिलने का यत्न करना। बेकार बैठने से तो बीमारी बढ़ भी सकती है।"

जब शिवकुमार चला गया तो प्रताप ने पूछा, "तुम भैया के सामने रोने क्यों लगी थीं ?"

"जब से पिता जी तथा भैया को मालूम हुआ है कि आप घर के व्यय के लिए कुछ नहीं देते तो ये निरन्तर मेरी सहायता कर रहे हैं। यहां इस मकान में आए मुझको एक वर्ष होने जा रहा है। ये रसद, पानी, वस्त्राभूषण और फरनीचर इत्यादि सबका ध्यान रखते हैं। सब आवश्यकता के पदार्थ स्वयमेव ही पहुंचे चले आते हैं।"

"शिवकुमार कह रहे थे कि वे किसी ऐसे कार्य को जानते हैं जिसको मैं कर सकूंगा और जिसमें अभी बहुत गुंजाइश है।"

"ओह ! वे बता सकते हैं। उनके यहां दिन-रात अनेकानेक व्यवसायों के लोग आते रहते हैं। आपको जाना चाहिए।"

"मुझको इनके पास जाते लज्जा आती है। एक बार पहले भी मैंने इनका कहा नहीं माना था।"

"तो इन्होंने इस विषय में कुछ कहा है ?"

"नहीं, मेरे मन में ही संकोच है।"

"संकोच जहां जाने का करना चाहिए वहां तक ही उसको रखिए। जहां अपने हैं और अपने होने से सदा सहायता के लिए तैयार रहते हैं, उनसे मेल-जोल में संकोच उचित नहीं।"

मन का चोर निकलने में समय लगा। जब उसने देखा कि लाला मुलखराजमल का मुन्शी फकीरचन्द प्रति सोमवार आता है और आवश्यक सामान पहुंचा जाता है और फुटकर खर्चे के लिए रुपया दे जाता है तो उसका संकोच कम होने लगा। एक दिन वह ससुर की दुकान पर जा पहुंचा।

लाला जी ने देखा और उसको अपने पास बैठाते हुए पूछने लगे, "सुनाओ। स्वास्थ्य कैसा है ?"

"ठीक है।"

"देखो। अब तुम तीस वर्ष की आयु से ऊपर हो चुके हो। तुम्हारी बड़ी लड़की यमुना एक-दो वर्ष में विवाह के योग्य होने जा रही है। अब तुमको अपने पांव पर खड़ा होने का यत्न करना चाहिए।"

"इसी अर्थ तो आया हूं। भैया शिवकुमार ने कहा था कि वे ऐसा कोई काम बता सकते हैं जिसको संसार में करने वाले बहुत कम हैं।"

"हां ! वह बताएगा। तुम नित्य यहां ठीक आठ बजे आ जाया करो। शेष

तुम हमपर छोड़ दो।"

प्रतापकृष्ण आने लगा। उसको काम यह बताया गया कि वह दुकान के कर्मचारियों पर जमादारी करे। बैंक से रुपया निकालने के लिए अथवा जमा कराने के लिए जाया करे। उसके साथ चौकीदार जाता था। इस काम के लिए उसको दो सौ रुपया मासिक मिलने लगा।

धीरे-धीरे उसको अधिक, और अधिक उत्तरदायित्व का काम दिया जाने लगा। एक वर्ष के भीतर उसके घर एक लड़का और हो गया। उसका नाम भूषण रखा गया।

भूषण के पश्चात् अन्य कोई सन्तान नहीं हुई। समय पाकर गंगा-यमुना और गोदावरी का विवाह हो गया। इन तीनों लड़कियों के विवाह के समय सुलक्षणमल ने भरसक सहायता की। भूषण की शिक्षा-दीक्षा में भी उसके नाना का काफी सहयोग रहा।

जिस दिन सेठ सुलक्षणमल के शव की अर्थी निकली तो उसकी अपनी सन्तान और उनके सम्बन्धियों की संख्या ही चार सौ से ऊपर थी। चार लड़के, चार लड़कियां थीं। एक विधवा को छोड़कर शेष सात की सन्तान और उनके अपने सम्बन्धी तथा उनकी सन्तान के सम्बन्धी थे। सन्तान की सन्तान और उनके भी बहुत-से विवाह हो चुके थे और उनके यहां भी सन्तान हो चुकी थी।

जब शिवकुमार ने झूठा इच्छापत्र न्यायालय में उपस्थित किया और राम ने घूम-घूमकर सब सम्बन्धियों को बताया कि यह झूठा इच्छापत्र है तो पूर्ण परिवार में भारी हलचल मची थी। इस हलचल की गूंज विष्णुदेवी और प्रताप के कानों तक भी पहुंची थी।

श्मशान घाट से संस्कार कर सब लौटे तो प्रताप ने अपनी पत्नी से बताया, "शिव भैया कह रहे थे कि लाला जी इच्छापत्र लिख गए हैं।"

"तो इसमें विचित्रता क्या है?"

"विचित्रता यह है कि उन्होंने इसका कभी किसीके सम्मुख वर्णन नहीं किया। यहां तक कि माता जी ने भी इसकी अनभिज्ञता बताई है।"

"हां! उनको किसीको तो बता जाना चाहिए।"

देहान्त के एक मास पश्चात् सब सम्बन्धियों को न्यायालय का प्रथम नोटिस

मिल गया। प्रतापकृष्ण को भी नोटिस मिला। वह नोटिस लिए हुए शिवकुमार के पास पहुंचा और पूछने लगा, "भैया ! इच्छापत्र में क्या लिखा है ?"

"उन्होंने पूर्ण सम्पत्ति का उत्तराधिकारी मुझको बनाया है। शेष बहिनों-भाइयों तथा उनकी सन्तानों तथा सन्तानों की सन्तानों को समय और आवश्यकतानुसार देने के लिए मुझको कहा है, परन्तु धनराशि के विषय में मुझको स्वतन्त्रता दी है।"

प्रताप को दुकान से दो सौ रुपये लेते हुए उनतीस वर्ष हो चुके थे। इन दो सौ रुपये के अतिरिक्त दुकान से उसके बच्चों के विवाह के समय भारी सहायता मिलती रही थी। अतः उसको कुछ भी न मिलने का शोक नहीं था।

उस दिन उसने अपनी पत्नी को शिवकुमार की बात बताई तो विष्णुदेवी ने भी उसके मन की बात कह दी, "वास्तव में पिता जी की सम्पत्ति में से कुछ भी पाने का मेरा अधिकार नहीं है। इसपर भी शिव भैया सदा मुझपर स्नेह का हाथ रखते रहे हैं। इससे मुझको उनकी सद्भावना पर विश्वास है और मैं प्रसन्न हूं।"

इसके कुछ ही दिन उपरान्त लाला गोवर्धनलाल की ओर से न्यायालय का दूसरा नोटिस आया। प्रताप गोवर्धनलाल जी से भी मिला और उन्होंने बताया कि रजिस्टर्ड इच्छापत्र मिल गया है और उसके अनुसार विष्णी बहिन को दो लाख के लगभग की सम्पत्ति मिलने वाली है।

प्रताप ने यह सूचना भी अपनी पत्नी को दी तो विष्णुदेवी ने कह दिया, "हमको इस विषय में किसी पक्ष की सहायता अथवा विरोध नहीं करना। कौन ठीक है और कौन झूठा है यह स्वयमेव न्यायालय में निर्णय हो जाएगा।"

इसके कुछ ही दिन पश्चात् घर में फैसला हो गया और न्यायालय के रजिस्टर्ड इच्छापत्र को स्वीकार कर गोवर्धनलाल को सम्पत्ति का आदाता बना दिया गया।

अब एक दिन गोवर्धनलाल ने एक लाख दस हजार के मूल्य की सम्पत्ति के कागजपत्र प्रताप के हाथ में दे दिए। प्रताप ने कागजपत्रों का लिफाफा शिव के हाथ में देते हुए कहा, "भैया ! मैं नहीं जानता, इसको क्या करूं ?"

"आप यह लिफाफा विष्णी के हाथ में दे दीजिए। वह जब आएगी तो मैं उसको समझा दूंगा कि क्या करे।"

विष्णी आई तो शिव ने बहिन को कह दिया, "इस सब सम्पत्ति का प्रबन्ध

करने के लिए गोवर्धनलाल को ही कह दो। वे माता जी तथा सदा बहिन के भाग का प्रबन्ध कर रहे हैं। इससे वे आपकी सम्पत्ति का भी प्रबन्ध कर देंगे।"

"क्या देना पड़ेगा?"

"यह तुम स्वयं निश्चय कर लो। जहां तक दुकान का सम्बन्ध है, प्रताप जी को काम करते रहना चाहिए। उनको वेतन मिलता रहेगा।"

प्रतापकृष्ण का लड़का भूषण अपने पिता के मकान में ही रहता था। उसने एम० ए० पास कर हिन्दू कॉलिज में प्रोफेसर की नौकरी प्राप्त कर ली थी। वह अपनी पत्नी राजेश्वरी तथा अपने दो बच्चों के साथ रहता था।

राजेश्वरी बैरिस्टर रघुनाथसहाय त्रिवेदी की लड़की थी। वह भूषण के कॉलिज में ही पढ़ती थी। दोनों सेंट स्टीफन कॉलिज के विद्यार्थी थे। जब भूषण ने एम० ए० किया तो राजेश्वरी ने बी० ए० पास किया था। दोनों का परस्पर प्रेम हुआ और विवाह हो गया।

विवाह के पश्चात् छः वर्ष व्यतीत हो चुके थे और उनके घर में एक लड़की तथा एक लड़का उत्पन्न हो चुके थे। इस समय सुलक्षणमल का देहान्त हुआ। राजेश्वरी को भी अपनी सास को दो-दो नोटिस मिलने का ज्ञान था। उसने भी अपने पिता त्रिवेदी जी से इस विषय में राय ली थी। त्रिवेदी ने न्यायालय में जाकर दोनों इच्छापत्रों को देखा और आकर अपनी लड़की को बता दिया था कि कुछ नहीं हो सकता।"

"क्यों?"

"लाला सुलक्षणमल की सम्पत्ति अपनी अर्जित है। इस कारण वह इसको नाली में भी बहा देने का अधिकार रखता है।"

इसके पश्चात् जब एक लाख दस हज़ार की सम्पत्ति राजेश्वरी की सास को मिली और उसने लाला गोवर्धनलाल को इस सम्पत्ति का कर्ता नियुक्त किया तो बैरिस्टर साहब को यह भला प्रतीत नहीं हुआ। त्रिवेदी ने अपनी लड़की को कह दिया, "तुम्हारी सास ने बहुत बड़ी भूल की है।"

"क्यों?"

"लाला गोवर्धनलाल एक साधारण क्लर्क है। वह इतनी बड़ी सम्पत्ति का प्रबन्ध नहीं कर सकेगा।"

"परन्तु बड़े लाला ने तो बाईस लाख की सम्पत्ति का प्रबन्ध उनके हाथ में दिया है।"

"वह इसलिए कि उनके सम्बन्धियों में कोई बैरिस्टर नहीं।"

यद्यपि राजेश्वरी को बैरिस्टर होने और सम्पत्ति का प्रबन्ध करने में कोई सम्बन्ध समझ नहीं आया। इसपर भी वह अपने पिता से बहस नहीं कर सकी। परन्तु उसने अपने पिता की बात अपने पति से कही तो भूषण ने कह दिया, "असल बात यह है राजेश्वरी! कि संसार में धन-सम्पदा के विषय में विचार और भावनाएं बदल रही हैं। इन बदल रही भावनाओं के विषय में मां को कुछ भी ज्ञान नहीं। इसीसे वे सब प्रबन्ध एक अनपढ़ क्लर्क को दे बैठी हैं।"

राजेश्वरी को जहां यह बात समझ नहीं आई थी कि बैरिस्टरी पास करने और सम्पत्ति के प्रबन्ध में क्या सम्बन्ध हो सकता है, वहां उसको यह भी समझ नहीं आया कि बदल रहे विचारों का सम्पत्ति के विषय में क्या सम्बन्ध हो सकता है। वह टुकर-टुकर अपने पति का मुख देखती रह गई। प्रोफेसर साहब ने अपनी पत्नी के न समझने पर हंसी उड़ाते हुए कहा, "इसीसे मैं कहता हूं कि इतिहास पढ़ने का कुछ भी लाभ नहीं। आज पूर्ण संसार अर्थशास्त्र के आश्रय चल रहा है। उसका कुछ भी ज्ञान हो जाए तो इतिहास के भी अर्थ दिखाई देने लगेंगे।"

"कुछ तो ज्ञान आपसे प्राप्त किया भी है। आपने बताया था कि देश की सम्पत्ति किसी व्यक्ति के हाथ में नहीं होनी चाहिए। इसको ठीक मानकर ही भला मौसा जी के प्रबन्ध से इसका क्या सम्बन्ध हो सकता है?"

"देखो मैं बताता हूं। देश की सम्पत्ति उस देश में रहने वाले समाज की सम्पत्ति है। यह किसी न किसी प्रकार कुछ एक आदमियों के हाथ में एकत्रित हो गई है। यह पुनः समाज में फैल जानी चाहिए। ऐसा करने के दो उपाय हैं। एक तो यह कि सरकार धनिकों से बलपूर्वक धन छीन ले और फिर उसका वितरण कर दे। यह अभी हो नहीं सकता। सरकार विदेशी है और वह स्वयं भी धन लूटने वालों में है। एक दूसरा भी उपाय है। जिसके पास धन हो उसे खर्च करने दो। इससे भी डिस्ट्रिब्यूशन ऑफ़ वैल्थ (सम्पदा का वितरण) हो जाएगा। इसके लिए धन वालों को व्यय करना सीखना चाहिए।

"अब न तो मां कुछ पढ़ी-लिखी है और न ही गोवर्धनलाल जी। इस कारण धन को पूंजी का रूप देकर इससे गरीबों का एक्सप्लायटेशन (शोषण) करने पर

तैयार हो गए हैं।"

"तो आप मांजी को समझाइए। वे धर्म-कर्म तो बहुत करती हैं। यदि कोई नेक राय देंगे तो मान जाएंगी।"

"विचार तो है कि समझाऊं परन्तु वे समझ सकेंगी क्या ?"

"यत्न तो करिए।"

अतएव एक रात भोजन के उपरान्त भूषण ने मां से कह दिया, "मां! सुना है नाना जी की सम्पत्ति से एक लाख रुपया मिला है ?"

"हां, एक लाख दस हज़ार था। सम्पत्ति के कागज़ बनवाने में चार हज़ार से ऊपर व्यय हो गया है। शेष एक लाख पांच हज़ार से कुछ ऊपर मिला है। वह सब स्थावर सम्पत्ति के रूप में है। उसकी मासिक आय पौने आठ सौ रुपये है। इसको प्राप्त करने के लिए दस प्रतिशत खर्चा बैठेगा। अतः लगभग सात सौ रुपया हमको मिल जाया करेगा। इसमें से दस प्रतिशत के लगभग सम्पत्ति की मरम्मत इत्यादि के लिए जमा रख, शेष छः सौ रुपया हमारे पास रहेगा।"

"यह तो ठीक है, परन्तु आप इसको जमा रख क्या करेंगी ?"

"मैं छः सौ रुपया मासिक व्यय करने का यत्न करूंगी। देखो न, अढाई सौ तो तुम लाते ही हो, दो सौ तुम्हारे पिता लाते हैं। डेढ़ सौ तुम्हारी पत्नी राजेश्वरी वेतन पाती है। इस प्रकार छः सौ रुपया तो वही है। इधर छः सौ यह आएगा तो हम राजा-रईस हो जाएंगे।"

भूषण हंस पड़ा। हंसकर बोला, "मां, यह अर्थशास्त्र के सिद्धान्त के विपरीत हो रहा है।"

"वह क्या होता है ?"

"मां! दुनिया के विद्वानों ने रुपये-पैसे के विषय में एक शास्त्र की रचना की है, उसको अर्थशास्त्र कहते हैं।"

"और वह क्या कहता है ?"

"वह शास्त्र कहता है कि बिना परिश्रम के प्राप्त धन हराम का होता है। मां इसको अपने शास्त्र में 'अन-अर्ण्ड इन्कम' (अनुपार्जित आय) कहते हैं।"

"तो फिर ?"

"ऐसी सम्पत्ति के लिए दो मार्ग खुले हैं। एक तो यह कि सरकार इसको छीन ले दूसरे यह कि इसका स्वामी इसका व्यय कर दे।"

"तो आगे कहो।"

"आगे यह कि जो एक लाख पांच हजार तुमको मिला है वह अनुपार्जित सम्पत्ति है। यह व्यय हो जानी चाहिए, नहीं तो सरकार इसको छीन लेगी।"

"देखो बेटा भूषण! तुम्हारे शास्त्र ने यह कैसे कह दिया कि यह धन अनुपार्जित है? घास-फूस की भांति अनायास ही उत्पन्न नहीं हुआ यह।"

"तुम तो जानते नहीं। परन्तु मैं जानती हूं कि तुम्हारे नाना अनाज का व्यापार करते थे। अन्न किसान भूमि से पैदा करते हैं। सौ मन पैदा करने पर सरकार को भूमिकर देकर उसके पास नब्बे मन बच जाता है। उसका बाजार-मूल्य चार-पांच रुपये मन के हिसाब से तुम्हारे नाना दे देते थे। उस अनाज को वे बाजार से दो पैसा, चार पैसा प्रति रुपये के लाभ पर बेचते थे, बताओ इसमें अनुपार्जित धन कैसे आएगा?"

"मां! नाना जी की पचास लाख की सम्पत्ति पैसा-पैसा, दो-दो पैसा से एकत्रित हुई है क्या?"

"हां।"

"यह तो नहीं हो सकता। मैं इतना पढ़-लिखकर उसका शतांश एकत्रित नहीं कर सकता।"

"तुम्हारे जैसे के लिए ही तो यह कहावत है, 'नाच न जाने आंगन टेढ़ा।' तुम तो धन का एक ही प्रयोग जानते हो कि उसे व्यय कर दिया जाए। भला बताओ मैं इसको कहां व्यय कर दूं।

"मां! मान लो कि नाना जी ने इसको पैसा-दो पैसा कर ही कमाया है तो भी एक मनुष्य की कमाई लाखों रुपये प्रतिवर्ष नहीं हो सकती।"

"कहां लिखा है? तुम अढ़ाई सौ रुपया मासिक पाते हो और तुम्हारे कालेज का चपरासी चालीस मासिक पाता है। यह अन्तर क्यों है? यदि एक एक और छः का अन्तर हो सकता है तो एक और सौ का क्यों नहीं हो सकता?"

"पर मां! तुमने तो इस कमाई में कुछ उद्योग नहीं किया। तुम तो अनायास ही पा गई हो।"

"मैं अपने पिता के घर में उत्पन्न हुई हूं। इसने पिता जी मुझको स्नेहवश दे गए हैं।"

"देखो भूषण! तुम प्रति सप्ताह अपनी पत्नी के साथ सिनेमा देखने जाते

हो। क्यों जाते हो ?"

"इससे हमारा मनोरंजन होता है।"

"तो तुम यह समझो कि जब एक पिता अपनी सन्तान को कुछ देता है तो उसका भी मनोरंजन होता है। पिता जी की आत्मा को यह धन, मुझे देकर सन्तुष्टि हुई प्रतीत होती है।"

भूषण हंस पड़ा। हंसते हुए उसने कहा, "मां! तुम कभी सिनेमा देखने नहीं गईं। इसीसे तुम सिनेमा देखने और सन्तान में धन बांटने को एक समान मानती हो।"

" एक समान तो नहीं कहा, वैसे व्यय तो दोनों ढंग से होता है। मैं सिनेमा देखने में धन खर्च करने को बहुत ही घटिया ढंग समझती हूं।

" भूषण, क्या व्यय करते हो प्रति सप्ताह ? "

"हम दोनों प्रति सप्ताह पांच रुपये व्यय करते हैं।"

"तो एक मास में बीस रुपये हुए, वर्ष में अढ़ाई सौ रुपये हुए और साठ वर्ष में पन्द्रह हज़ार हुए। इसपर पचास हज़ार से अधिक तो व्याज बन जाता है। तो बताओ, यदि तुम यह सिनेमा न देखो तो जीवन में सत्तर हज़ार एकत्रित कर ही लोगे; इसपर भी यह अनायास कैसे हो गया ? इसकी कमाई में तुम्हारा पढ़ना-पढ़ाना दोनों का फल है। फिर इस सत्तर हज़ार को तुम राजकुमारी को दे दो तो यह हराम की कमाई कैसे हो गई ? भला सिनेमा में व्यय करने से यह अच्छा नहीं क्या ?"

भूषण का अर्थशास्त्र निरुत्तर होता जाता था। इसपर भी उसने साहस नहीं छोड़ा और अब अनपढ़ मां को शिक्षा देने लगा। "मां, पन्द्रह पर पचास हज़ार व्याज ? यह भला कैसे हो गया ? यह तो रामनाम के बहाने लूट है।"

"यह तो धन के प्रयोग करने पर भाड़ा है। जैसे एक मकान का मासिक भाड़ा दस रुपये होता है परन्तु सौ वर्ष में बारह हज़ार हो जाता है। इसमें समय की लम्बाई का भी विचार करना पड़ता है।"

"हमारा शास्त्र मकान के भाड़े और रुपये के व्याज को अनुपार्जित आय कहता है।"

"अर्जित तो है। यह अर्जन है मकान में रहने वाले अथवा रुपये का प्रयोग करने वाले का। मकान के तथा रुपये के मालिक को यह मिलता है। इस कारण कि उसने इसके मूलधन का अर्जन किया है।

"मां ! तुम समझ नहीं सकतीं। इस बात को समझने के लिए अर्थशास्त्र का पढ़ना आवश्यक है। जिस बात पर मेहनत की जाए उसको 'अर्जन करना' कहते हैं। जो बिना परिश्रम किए मिल जाए उसको अनुपार्जित कहते हैं। मान लो कि जीवन-भर सिनेमा न देखकर हम पन्द्रह हजार एकत्रित कर लेते हैं और वह अपनी लड़की राजकुमारी को देकर भी उतना ही सुख प्राप्त करते हैं जितना सिनेमा देखकर परन्तु राजकुमारी के लिए यह रुपया, और फिर उस रुपये का ब्याज तो हराम की कमाई ही हो सकती है। उसने तो इसके लिए कुछ भी परिश्रम नहीं किया।"

"तो फिर यह रुपया और यदि यह बैंक में रखा हो तो इसका ब्याज कौन ले?"

"सरकार ले।"

"सरकार क्यों ले?"

"वह हमारी रक्षा करती है।"

"उसके लिए तो लोग कर देते हैं। किसान भूमिकर के रूप में देता है। तुम्हारे नाना ने यह आयकर के रूप में दिया है। सुना है प्रति सौ रुपया आय पर पचास रुपये से भी अधिक सरकार ले लेती है।"

"वह कम था।"

"तो और अधिक ले लेती! परन्तु जब एक मतलब के लिए सरकार ने रुपया ले लिया तो फिर उसी मतलब के लिए दूसरी बार भी क्यों ले?"

"यह जो एक लाख मुझको मिला है, सरकार का कर देने के उपरान्त बचा हुआ है। इसको व्यय करने का अधिकार मालिक को होना चाहिए। पिता जी ने उसे मुझे दिया है अब सरकार को दुःख क्यों?"

"यह अच्छे-बुरे का निर्णय तुम मत करो। वह तो धन का मालिक करेगा। मालिक से मेरा अभिप्राय उस व्यक्ति से है जिसने मेहनत-मशक्कत से इसको पैदा किया है अथवा जिसने इसको सिनेमा जैसे व्यर्थ की बातों पर व्यय न कर जमा किया है। तुम उसको कह सकते हो कि वह स्कूल खोले, हस्पताल बनाए। परन्तु उसकी रुचि के विपरीत तुम व्यय क्यों करोगे? तुम्हारे नाना ने भी एक मन्दिर बनाने की इच्छा प्रकट की है और सुना है गोवर्धनलाल एक भूमि लेकर मन्दिर बनवा रहे हैं!"

"तो मन्दिर बनाने और हस्पताल खोलने को तुम एक समान समझती हो।"

"मैं मन्दिर की अधिक महिमा मानती हूं। परन्तु यह तो रुपये के मालिक के मानने की बात है। मेरे, तुम्हारे अथवा सरकार के मानने की नहीं हो सकती।"

प्रतापकृष्ण मां-बेटे में हो रहे इस विवाद को सुन रहा था और अपने पढ़े-लिखे लड़के को केवल-मात्र हिन्दी पढ़ी मां से निरुत्तर होते देख, रस ले रहा था। उसको इस विवाद के आधार में एक दूसरी बात समझ आई। उसने विवाद में दखल देते हुए पूछ लिया, "भूषण, यह धन, जिसके विषय में तुम्हारे शास्त्र ने तुम्हारा दिमाग खराब कर रखा है, क्या वस्तु है?"

"भापा! यह है मनुष्य के परिश्रम का मूर्तरूप!"

"तो यह परिश्रम है न?"

"हां।"

"तो इसको व्यय करने का अधिकार तुम्हारा शास्त्र परिश्रम करने वाले को क्यों नहीं देता?"

"परिश्रम करने वाले को केवल अपने खाने-पीने का अधिकार है। उससे अधिक उसका अपना नहीं।"

प्रताप हंस पड़ा। हंसते हुए उसने कहा, "तो इसके लिए कानून बनवा दो। फिर देखना कि जब मनुष्य अपने खाने-भर के लिए बना लेगा तो हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाएगा।

"देखो! यही भूल मैंने अपने जीवन में की थी। मैंने भी समझा था कि उपार्जित धन केवल व्यय करने के लिए ही है। मेरे पिता पांच लाख छोड़ गए थे। मैंने समझा कि यह जीवन-भर के लिए पर्याप्त है और व्यय करने लग पड़ा। कमाई बन्द कर दी, हाथ पर हाथ रख उसका भोग करने लगा। भोगों का तो अन्त होता ही नहीं। पांच वर्ष में सब समाप्त कर दिया। उसके पश्चात् भी जब मैं कमाने लगा तो मैंने परिश्रम किया, धन के भोग के लिए। जब खर्च से अधिक मिला तो ह्विस्की की बोतल खरीद लाया और बैठकर पी गया। यही तुम चाहते हो न?"

"नहीं भापा, मैं तो यह कह रहा हूं कि जब खाने-पीने से बचे तो उसको सरकार ले ले, और उससे स्कूल-कालेजों पर व्यय करे।"

"मैं यही पूछता हूं कि सरकार क्यों ले ले? यदि मुझको पता हो कि मेरी

कमाई में से बचा, सौ रुपयों से अधिक को सरकार लेकर अपनी इच्छा से व्यय करेगी तो मैं या तो सौ रुपये की कमाई कर घर आकर लेट जाऊंगा अन्यथा अपना खर्चा बढ़ा दूंगा। अन्न, अनाज तो कुछ अधिक खाया नहीं जा सकता इस कारण शराब पिऊंगा, वेश्यागमन करूंगा और बीस प्रकार की खरमस्तियां करूंगा।

"यही तो हुआ है। मैं अपने पिता की सम्पत्ति और अपनी कमाई को खाने-पीने पर खर्च न कर सकने पर, मद्य, मांस और वेश्याओं पर व्यय करने लगा और तुम्हारे नाना अपने खाने-पीने के पश्चात् बचा धन जमा करते गए। मरने के अनन्तर भी वे अपने फालतू धन से मन्दिर बनवा गए हैं। यदि सरकार लेती तो तुम्हारे जैसे पढ़े-लिखे मूर्ख बनाने के लिए एक कालिज और खोल देती।"

अपने शराबी पिता के मुख से अपने को मूर्ख की पदवी मिलती सुन, भूषण का मुख, क्रोध से तमतमा उठा और उठकर अपने शयनागार में चला गया। प्रतापकृष्ण हंस पड़ा।

पुत्र के 'मूर्ख' कहे जाने पर तो मां को भी दुःख हुआ। भूषण के चले जाने पर मां ने कह दिया, "पढ़े-लिखे पुत्र को मूर्ख कहना ठीक नहीं। उसको क्रोध चढ़ आया है।"

"पर मां जी!" राजेश्वरी ने कह दिया। "वे भी तो अपनी मां को हराम की कमाई खाने वाली कह गए हैं।"

इसपर तो प्रतापकृष्ण और भी जोर से हंसने लगा। राजेश्वरी भी हंसती हुई अपने पति के कमरे में चली गई।

शयनागार में पहुंच, राजेश्वरी ने कह दिया, "आप तो नाराज होकर चले आए हैं! भला माता-पिता से नाराज होने में भी कुछ कारण हो सकता है?"

"देखो राजेश्वरी! मेरे पिता जी ने हमारे बाबा की सम्पूर्ण सम्पत्ति शराब और वेश्यागमन में व्यय कर दी है और मुझको 'मूर्ख' कहते हैं।"

"परन्तु उन्होंने मूर्ख तो आपको इसलिए कहा है कि आप एक मनुष्य के परिश्रम को ही सरकार की सम्पत्ति मान रहे हैं। इसमें कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है।"

"वह इसलिए कि इतिहास में प्रजातन्त्र-शासन की परम्परा नहीं। जब राज्य प्रजातंत्र होगा तब राज्य पूर्ण जनता के परिश्रम का स्वामी हो जाएगा। ये इतिहास पढ़ाने वाले वृद्ध संसार में बदल रही अवस्था का ज्ञान नहीं रखते।"

राजेश्वरी ने हंसते हुए कहा, "मां को हराम की कमाई खाने वाला कहकर

पत्नी को वृद्धू कहने लगे हैं। और उस वृद्धू पत्नी के पति को किसीने मूर्ख कह दिया तो रोष करने की क्या आवश्यकता है !"

"तो मैंने तुमको वृद्धू कहा है ?"

"मैं भी तो स्कूल में इतिहास पढ़ाती हूं।"

"ओह, मेरा यह मतलब नहीं था।"

"पिता जी का भी आपको मूर्ख कहने से मूर्ख कहने का अभिप्राय नहीं था।"

इससे भूषण की हंसी निकल गई। परन्तु नवीन अर्थशास्त्रियों की चक्की चलती गई। सरकारों के अधिकार विस्तार पाते गए और लोग जो परम्परागत ईमानदारी को समझते थे, उसको भूल नई ईमानदारी अर्थात् बेईमानी के ढंग सीखते गए।

६

रूपकृष्ण ने सरकारी अधिकारी द्वारा नीलाम की हुई भूमि खरीदी थी, एक हज़ार छ: सौ रुपये में। उसने लाला गोवर्धनलाल के साथ जाकर सबजज के पास प्रार्थना-पत्र दे दिया कि उसे भूमि का पूरा दाम जमा करने की आज्ञा प्रदान की जाए।

इसपर दो मास के पश्चात् उसको आज्ञा हुई कि वह अमुक तिथि को हाज़िर होकर यह बताए कि क्यों न उसके नाम की हुई बोली को मनसूख (रद्द) कर दिया जाए।

इस नोटिस को लेकर रूपकृष्ण लाला गोवर्धनलाल के घर चला गया। गोवर्धनलाल ने बताया, "ऐसा प्रतीत होता है कि किसीने उजरदारी (आपत्ति) कर दी है।"

"क्या उजरदारी उठाई जा सकती है इसमें ?"

"किसीने कहा होगा कि यह नीलाम नाजायज़ है।"

"तो इसकी सफाई देनेवाला मैं कौन हूं ?"

"तुमको लाभ होने वाला है !"

"यह तो मेरी करनी से होगा। सरकार की बात इसमें क्या है ? मेरे लाभ को अथवा उसके तरीके को तो किसीने चुनौती दी नहीं। सरकार ने भूमि नीलाम की, किसीने उजरदारी की है कि नीलाम गलत है अथवा गलत हुई है। मैं पूछता

हूं कि मैं इसमें क्यों कचहरी की मिट्टी छानूं ?"

गोवर्धनलाल हंस पड़ा। हंसते हुए उसने कहा, "रूप बेटा! यह कानून है।"

"किस मूर्ख ने बनाया है यह कानून ?"

इसपर तो गौरी, जो यह तर्क-वितर्क सुन रही थी, हंसने लगी। जब दोनों गौरी का मुख देखने लगे तो उसने कह दिया, "आप यहां क्यों झगड़ रहे हैं। झगड़ा करना है तो सरकार के यहां करना चाहिए।"

गोवर्धनलाल को बात समझ में आ गई और उसने कहा, "तुम आज मेरे साथ सबजज के न्यायालय में चलो। वहां इस आज्ञा में कारण देखेंगे। जरा जल्दी चलना ; जज साहब के आने से पूर्व वहां पहुंचना चाहिए।"

सबजज के पेशकार रूप के ताया गोपालकुमार थे। इस कारण जब वे अदालत के कमरे में पहुंचे तो पेशकार गोपाल उस दिन उपस्थित होने वाले मुकदमों की सूची कमरे के बाहर लगाने के लिए तैयार कर रहे थे। पेशकार ने गोवर्धनलाल को देखा तो हाथ जोड़कर प्रणाम कर दिया। गोवर्धनलाल ने कुशल-समाचार पूछ, रूपकृष्ण को मिला नोटिस दिखा दिया। पेशकार ने कहा, "मैं अभी फाइल मंगवा देता हूं। आप इस पिछले कमरे में बैठ देख लीजिए। गोवर्धनलाल रूपकृष्ण को लेकर उस कमरे में चला गया। पांच मिनट में चपरासी वह फाइल ले आया। गोवर्धनलाल ने फाइल देखी।

वह तबेला पांच सौ रुपये पर लाला बनवारीलाल के पास गिरो था। बनवारीलाल ने रुपये प्राप्त करने के लिए रुपये और ब्याज की नालिश की। एक वर्ष के मुकदमे के पश्चात् निर्णय बनवारीलाल के पक्ष में हुआ।" बनवारीलाल ने तबेले की नीलामी करा दी। नीलामी में बनवारीलाल स्वयं सस्ते से सस्ते दाम पर खरीद लेना चाहता था। जो कोई भी उससे ऊंची बोली देने आता था, उसका नौकर पहलवान डरा-धमकाकर उसको भगा देता था। जब रूप ने यह कहा कि वह मकान बनवाकर मुनिया को भेंट करने वाला है तो बोली रूप के नाम समाप्त हो जाने दी गई।

परन्तु जब यह बात किसानों को पता चली कि रूप ने जुआ खेलना बन्द कर दिया है और वह बेकार घूमता है तो किसानों ने कहा कि उससे जमीन लिखा ली जाए, तब ही उसको मकान बनाने दिया जाए। उनको किसी भी जुआरी पर विश्वास नहीं है।

एक भेदिए को रूपकृष्ण के मन की बात जानने के लिए भेजा गया और उसे पता चला कि रूपकृष्ण ने तो मकानों का व्यापार करने के लिए भूमि खरीदी है। इसपर वर्तमान उजरदारी ज़मीन के मालिक से करवा दी गई है।

उजरदारी थी यह कि बनवारीलाल ने और रूपकृष्ण ने परस्पर षड्यंत्र कर भूमि का मूल्य बढ़ने नहीं दिया और नीलामी पुनः की जाए। साथ ही ग्राहकों को बोली देने से मना करने वालों को नियंत्रण में रखने के लिए पर्याप्त पुलिस का प्रबन्ध किया जाए।

फाइल पढ़ गोवर्धनलाल ने उक्त विवेचना बता दी। उसका कथन था, "यह है पूर्ण उजरदारी का अभिप्राय।"

गोवर्धनलाल तो कचहरी में नित्य होने वाली बातों की जानकारी रखता था और उसकी उक्त विवेचना इस आधार पर बनी थी। रूपकृष्ण को यह बात ठीक ही प्रतीत हुई थी। वह जानता था कि बनवारीलाल को पता चल गया है कि वह मकान सुमित्रा के लिए नहीं प्रत्युत व्यापार करने के लिए मोल लिया जा रहा है।

परन्तु वह विचार करता था कि मालिक-ज़मीन का फैसला तो न्यायालय को करना चाहिए। इसमें उसको क्यों बुलाया जा रहा है। इससे कचहरी से लौटते हुए रूपकृष्ण ने पूछ लिया, "फूफा जी ! मुझको क्या करना चाहिए ?"

"तुमको निश्चित तिथि को पेश होकर कहना चाहिए—नीलामी ठीक कायदे-कानून के मुताबिक हुई है और उसमें न तो नीलाम करने वाले ने और न ही तुमने कोई अनियमित बात की है। इससे रुपया तुमको दाखिल करा ज़मीन तुम्हारे नाम दाखिल-खारिज करने का हुक्म सादर किया जाए।"

"पर फूफा जी ! यह बात तो अदालत को स्वयं करनी चाहिए। मैं क्यों करूं ?"

"तो तुमको यह ज़मीन नहीं लेनी ?"

"लेनी है। परन्तु यदि उस विधवा को, जो इसकी मालिक है, नये नीलाम से अधिक दाम मिल रहा है तो मैं क्यों उसको नुकसान पहुंचाऊं ?"

गोवर्धनलाल की धर्मबुद्धि जाग पड़ी। न्यायालय के वातावरण ने उसके मन को विचलित कर दिया था। वह चुप कर रहा।

उसी रात रूप ने अपने पिता से बात की। राम लड़के की बात सुन हंस पड़ा। रूप को इस हंसी का अर्थ समझ नहीं आया। उसने पूछ लिया, "पिता जी, इसमें

हंसने की बात कहां से आई है ?"

"तुम वकील नहीं हो। इसलिए। मैं होता तो इस बुढ़िया पर डैफ़ामेशन (अपमान) करने का दावा कर देता।

"इससे लाभ यह होता कि बुढ़िया को जब अदालत में रगड़ा पड़ता तो बक जाती कि उसको बनवारीलाल ने बहकाया है और बनवारीलाल होता कटघरे में और मैं उसपर जिरह करता। एक बार तो अदालत को भी मज़ा आ जाता।"

रूपकृष्ण ने एक क्षण तक विचार किया और कह दिया, "नहीं पिता जी ! मैं यह नहीं करूंगा। मैं तो चाहता हूं कि नीलाम पुनः हो और उस विधवा को कुछ लाभ हो जाए।"

राम ने कंधों को झटककर असन्तोष प्रकट किया।

एक दिन रूप शिवकुमार की दुकान पर पहुंच कर एक चिट्ठी टाइप करने लगा।"

शिव ने पूछा, "यह क्या है ?"

"एक अदालती नोटिस का उत्तर दे रहा हूं।"

"तो तुम भी अपने पिता की भांति वकालत करने लगे हो ?"

"नहीं ताया जी ! यह नहीं।" उसने पूर्ण कथा सुनाई तो शिव ने पूछ लिया, "भला सुनाओ तो क्या लिखा है ?"

रूपकृष्ण ने चिट्ठी पढ़कर उसका अनुवाद शिवकुमार को सुना दिया। शिवकुमार अंग्रेज़ी नहीं जानता था।

रूप ने सुनाया, "श्रीमान सबजज की अदालत में। नोटिस संख्या ३६६, तारीख १३ जनवरी, १९३५ के जवाब में निवेदन है कि यह नोटिस भूल से मुझको आ गया है। हकीकत में यह उस क्लर्क को जाना चाहिए था जिसने नीलामी की थी अथवा यह नोटिस उस जज को जाना चाहिए था जिसके हुक्म से यह नीलामी हुई थी। साथ ही यह नोटिस उस पुलिस अधिकारी को जाना चाहिए था जो नीलाम की रक्षा के लिए खड़ा था।

"मेरे पास इस प्रकार की फिजूल जांच-पड़ताल में हिस्सा लेने के वास्ते न तो समय है न ही रुपया। अदालत अपनी ज़िम्मेदारी मुझपर डाल रही है। मैं इसके खिलाफ प्रोटेस्ट (विरोध) करता हूं।

प्रार्थी—रूपकृष्ण

कटरा खुशहाल राय, किनारी बाज़ार, दिल्ली।"

राम भी समीप बैठा अपने लड़के की अंग्रेज़ी की चिट्ठी लिखने की योग्यता को देख रहा था। वह पत्र सुनकर हस पड़ा। शिवकुमार भी हंस पड़ा, परन्तु तुरन्त ही गम्भीर हो कहने लगा, "रूप! यह तो अदालत से झगड़ा है।"

"हां।"

"इसमें तुम केवल प्रजा-मात्र हो। अदालत से झगड़ा कर तो हानि में रहोगे। है हिम्मत सरकार से लड़ने की?"

"मैं समझता हूं कि यह एक वस्तुस्थिति का वर्णन है। यह किसीसे झगड़े का सूचक नहीं।"

इसपर राम ने कह दिया, "अच्छी बात है, कुछ गड़बड़ हो जाए तो तुम मुझको अपना वकील बना लेना। मैं तुम्हारी ओर से मुकदमा लड़ूंगा।"

जैसी शिवकुमार और रामकुमार को आशा थी, वैसा ही हुआ। जब रूपकृष्ण ने अदालत में स्वयं उपस्थित हो चिट्ठी दी तो सबजज बहादुर ने पढ़ी और माथे पर त्यौरी चढ़ाकर रूप से पूछने लगा, "तुम्हारा वकील किधर है?"

"मेरा कोई वकील नहीं है। इस छोटी-सी बात के लिए मैं वकील की आवश्यकता नहीं समझता।"

"तुम कितने पढ़े हो?"

"मैं अंग्रेज़ी साहित्य में एम० ए० हूं।"

"कहां नौकर हो?"

"कहीं नहीं।"

"काम क्यों नहीं करते?"

"करता हूं। मैं प्रापर्टी डीलर बनना चाहता हूं। इसी निमित्त यह ज़मीन ख़रीदी है।"

"तो यह ज़मीन तुमको नहीं चाहिए?"

"अगर श्रीमान जी नीलाम को नियमित ठहराएंगे तो लूंगा और अगर नियमित नहीं ठहराएंगे तो नहीं लूंगा। मेरी प्रार्थना यह है कि उस नीलामी को नियमित सिद्ध करना सरकार का काम है। मेरा इसमें कुछ लेना-देना नहीं। जिस किसीने भी यह चुनौती दी है, उसने सरकार को चुनौती दी है मुझको नहीं। मैं इसमें समय और रुपया व्यय करना नहीं चाहता।"

"पर अदालत आपको तहकीकात के लिए तो बुला सकती है?"

"हां। उस समय मुझको एक साक्षी के रूप में बुलाया जाना चाहिए न कि एक अपराधी के रूप में।"

"तुम अपने को अपराधी मानकर जवाब दो।"

"उस अवस्था में सरकार मुझको अपराधी के रूप में बुलाती। मुझपर कोई आरोप लगाया जाता और मैं उसका उत्तर देता। मुझपर कोई आरोप नहीं है। अतः मैं अपराधी के रूप में कैसे आ सकता हूं?"

"अच्छा, बयान लिखाओ।"

"एक बयान जो नोटिस के उत्तर में है वह मैंने लिखित रूप में दे दिया है।"

"तुम अपराधी के कटघरे में आ जाओ। वकील तुमपर जिरह करेगा।"

रूप एक बने कठघरे में खड़ा हुआ तो राम, जो पीछे खड़ा सब कुछ सुन रहा था, अदालत के सामने आ खड़ा हुआ।

उसने कह दिया, "हुजूर, मैं इस मुलजिम की डिफैन्स (प्रतिरक्षा) के लिए हाज़िर हूं। मुझको इसके खिलाफ चार्जशीट (आरोपपत्र) दी जाए।"

सबजज एक क्षण के लिए राम का मुख देखता रह गया। राम कचहरी में एक थर्ड रेट का वकील माना जाता था। परन्तु आज तो सबजज क्रोध से आगबबूला हो रहा था। उसने कहा, "तुम वकालतनामा पेश करो।"

राम इस सबकी सम्भावना मान ही कचहरी में आया था। वह विचार कर रहा था कि रूप अदालत में झगड़ा करने जा रहा है और उसकी रक्षा के लिए उसको भी अदालत में चलना चाहिए। अतः वह वकालतनामा लिख उसपर उचित कोर्ट-फीस का स्टाम्प लगा तैयार लाया था।

उसने अपने बस्ते से वकालतनामा निकाला और रूप के समक्ष रख उसे हस्ताक्षर करने को कहने लगा। रूप का विश्वास था कि यह धींगामस्ती हो रही है और इसका विरोध उसको करना चाहिए। उसने हस्ताक्षर किए तो राम ने वकालतनामा अदालत में उपस्थित कर कहा, "मेरी प्रार्थना है कि चार्जशीट बनाई जाए। फाइल में कोई नहीं है।"

"चार्ज यह है कि इस लड़के ने और बनवारी ने षड्यंत्र कर नीलाम की बोली होने नहीं दी।"

"हुजूर! यह तो प्रार्थनापत्र है। इसपर कोई चार्जशीट तैयार नहीं की गई। उस चार्जशीट से पूर्व प्रार्थना करने वाले के बयान नहीं लिए गए। उन बयानों पर

कोई जिरह नहीं हुई। फिर इस आरोप का कोई साक्षी नहीं। नीलाम करने वाले एजेण्ट के बयान नहीं लिए गए; और···और एक बात और है। आज्ञा हो तो निवेदन करूं।"

"हां, करो।"

"यदि यह आरोप ठीक भी हो तो यह ज़ाब्ता फौजदारी (पीनल कोड) के अन्तर्गत है। इसलिए हुज़ूर इस मुकदमे को करने का अधिकार नहीं रखते, यह फर्स्टक्लास मैजिस्ट्रेट के पास जाना चाहिए।"

"मैं !" सबजज ने कहा, "मैं मुकदमे की तारीख डालता हूं। १५ फरवरी, १९३५ को प्रार्थी मुसम्मात फिरोजा बेगम हाज़िर होकर अपनी प्रार्थना का सबूत पेश करे।"

"चलो रूप।" राम ने गर्व से कहा।

रूपकृष्ण बाहर आया तो बनवारीलाल का वकील राम के साथ-साथ अदालत से निकलते हुए कहने लगा, "राम ! आज तो तुमने कमाल कर दिया।"

"हां भाई ! बात यह है कि न चलती दुकान पर खरीदार सस्ता माल लेने आते हैं और दुकानदार मुनाफा कम मिलने पर घटिया माल देता है। आज मैं वकालत करने नहीं आया था, आज तो मैं अपने साहबज़ादे की तुम बड़े पेट वालों से रक्षा करने आया था।"

"तो यह रूप की चिट्ठी तुमने बनाई थी ?"

"नहीं। यह उसने स्वयं लिखी थी। मुझे तो यहां देने से पूर्व दिखाई थी। मैं समझ गया था कि आज सबजज साहब नाराज़ होने वाले हैं। वे पहले भी हुआ करते हैं, परन्तु तब हमको फिकर होती थी कि कहीं हमारे ग्राहक का मुकदमा खराब न हो जाए। अब जिम्मेवारी मुझपर नहीं थी। न ही मेरी किसी किस्म की मेहनत-मज़दूरी में कमी होने वाली थी।"

"तो क्या फिर कभी सबजज के सामने किसी मुकदमे में उपस्थित होने का विचार नहीं ?"

"नहीं। मैं वकालत करना छोड़ चुका हूं।"

"ओह !"

"अब मैं पेशेवर वकील नहीं हूं।"

"मतलब यह कि पेशेवर औरत न होकर एक गृहस्थिन बन गए हो ?"

राम हंस पड़ा और कहने लगा, "भाई, देख लो। यह तो तुम्हारे ही विचार करने की बात है कि तुम क्या हो ?"

७

गौरी को रूपकृष्ण अदालत में हुई घटना सुना रहा था। गोवर्धनलाल और रूप चाय पीने के लिए बैठे थे और गौरी उनके सम्मुख रखे प्यालों में चाय बना रही थी। जब रूपकृष्ण ने अपने पिता की कारगुज़ारी और फिर उनका बनवारीलाल के वकील को कटाक्ष सुनाया तो गौरी ने पूछा, "रूप, तुमको जेल जाने का डर नहीं लग रहा ?"

"क्यों बूआ ? जेल क्यों जाऊंगा ?"

"तुमने सरकार के एक बड़े अफसर की भूल निकाली है।"

"और यह अपराध है क्या ?"

"यह गुस्ताखी (धृष्टता) है।"

"एक भूल करने वाले को बताना कि वह भूल कर रहा है, एक पढ़े-लिखे व्यक्ति का कर्तव्य है।"

"मैं तुमको बधाई देती हूं।"

"बधाई ? यह कैसी बूआ ?"

"तुमने अपने को आज पढ़ा-लिखा समझा है।"

"मेरे समझने न समझने की बात नहीं बूआ। मैं वास्तव में एम० ए० पास हूं।"

"हां, आज मुझको मालूम हो गया है। देखो रूप, विद्या से मनुष्य बुद्धिशील एवं निर्भय होता है। आज तुमने ये दोनों बातें की हैं। बुद्धिशीलता तो यह है कि तुमने सरकारी नोटिस में वास्तविक दोष पहचान लिया है। यह बुद्धि का काम है। और विद्या से बुद्धि निर्मल होती है। दूसरे विद्या कहते हैं आत्मज्ञान को। यथार्थ आत्मज्ञान से मनुष्य के सब सांसारिक भय छूट जाते हैं। ये दोनों बातें तुमने सिद्ध कर दी हैं और तुम कहते हो कि यह एक पढ़े-लिखे-व्यक्ति का कर्तव्य है। इसलिए मैं कहती हूं कि तुमको यथार्थ ज्ञान आज हुआ है।"

गोवर्धनलाल ने कहा, "यह मकान तो अब तुमको मिलेगा नहीं। अब कोई

और काम विचार करो।"

"काम तो यही करूंगा। हां, अब सरकारी नीलाम हो रही भूमि नहीं लूंगा। अब तो मैं प्राइवेट मालिक से सीधे ही भूमि लेने का यत्न करूंगा। इसलिए मैं यह यत्न कर रहा हूं।"

"क्या यत्न कर रहे हो?"

"रोहतक रोड पर नगर से तीन मील के अन्तर पर चार आने गज़ जगह मिल रही है।"

"इतनी दूर जगह लेकर क्या करोगे? वहां तो कोई जाकर रहेगा नहीं।"

"मैं अभी योजना बना रहा हूं। जब बन जाएगी तो बताऊंगा।"

इसपर गोवर्धनलाल ने कह दिया, "जुए का रुपया फोकट में ही जाएगा।"

"फूफा जी! मैं इस रुपये को शुद्ध-पवित्र कर लूंगा।"

"वह कैसे?"

"यही बुआ से पूछने आया हूं। एक बार ताया शिवकुमार ने बताया था कि व्यापार में साहस से काम लिए बिना लाभ नहीं हो सकता। सो अब मैं साहस बटोर रहा हूं। एक दिन मैंने बुआ से पूछा था, 'साहस कैसे उत्पन्न होता है?' तो बुआ बताने लगी 'संसार में सबसे बड़े शक्तिशाली से नाता जोड़ने से।'

"मैंने पूछा,"वह कौन है और कहां है?'

"तो बूआ ने बताया, 'वह परमात्मा है। सब स्थान पर व्यापक है। हमारे हृदय में भी है।'

"तो उससे कौन नाता बनाया जाए और कैसे बनाया जाए?" मैंने पूछा।

"बूआ बोली, 'उसको पिता बना लो और पिता के रूप में उसके चरणों में बैठ साहस मांगा करो।'

"सो फूफा जी, मैं अब यही करता हूं। अब मुझको अपने हृदय में सत्य अनुभव हुई बात किसीको भी कहने में संकोच नहीं होता।"

"देखो रूप!" गौरी ने कह दिया, "धन तो मिट्टी का ढेला-मात्र है। इसमें अच्छाई-बुराई कुछ नहीं। यह ठीक है कि इसके उपार्जन में की गई धोखा-धड़ी उपार्जन करने वाले को पापी बना देती है। धन को नहीं। यदि तुमने जुआ खेलने में धोखा-धड़ी नहीं की, तो तुमने कोई पाप नहीं किया। यह तो तुम जानो। हां, इस धन के प्रयोग में निर्मल बुद्धि एवं पवित्र उद्देश्य तुम्हारी कमाई को पवित्र कर

देगा।

"निर्मल बुद्धि तो उसीसे प्राप्त होती है जो सर्वज्ञ है। जहां उससे साहस मांगते हो, वहां उससे बुद्धि की निर्मलता भी मांगा करो। शेष तो उद्देश्य की बात रह जाती है। उसके लिए शास्त्र में लिखा है—परमात्मा ने जब मनुष्य की उत्पत्ति की थी तो इसके साथ यज्ञ की उत्पत्ति भी की थी। यज्ञ कामधेनु है। इससे इच्छित फल प्राप्त होता है।—इसलिए रूप, तुम काम करो। यज्ञ समझ करो तो निस्सन्देह तुमको इच्छित फल मिलेगा।"

"यज्ञ क्या होता है?"

"जो स्वार्थ का विचार त्यागकर लोक-कल्याण के हेतु किया जाए।"

"और अपना खाना-पीना कहां से चले?"

"कहीं अग्नि-होत्र होते देखा है?"

"हां।"

"जब आहुति डाली जाती है तो पश्चात् बचा हुआ हविष जल के एक पात्र में छोड़ दिया जाता है। वह अपने कार्य को चलाने के लिए होता है। इस प्रकार जब लोक-कल्याण का कार्य करते हुए कुछ बचे, तो वह अपने लिए प्रयोग करना चाहिए। इसी प्रकार जीवन में किसी लोक-कल्याण के कार्य का उद्देश्य बना लो, उसके लिए धन उपार्जन करो, और उसमें से अपने निर्वाह के लिए निकाल लिया करो। इसपर भी प्राथमिकता कल्याण-कार्य को होनी चाहिए। यही यज्ञ है।"

"बुआ! तुम तो परस्पर-विरोधी बातें करती हो। यदि कल्याण-कार्य प्रथम होगा, तो अपने खाने-पीने के लिए कुछ बचेगा ही नहीं।"

"तुम समझे नहीं। रूप! मैं समझाती हूं। मुझको पिता जी की सम्पत्ति में से एक लाख दस हजार मिला है और तुम्हारे फूफा जी को दो लाख बीस हजार मिला है। इस प्रकार हमारी सम्पत्ति पर हुए खर्च तथा प्रबन्धक समिति का खर्चा देकर दो हजार मासिक मिलता है। मैंने इस आय से एक विधवा आश्रम खोल दिया है। उस विधवा आश्रम में उन विधवाओं को, जो विवाह करना नहीं चाहतीं, कुछ तो अपनी जीविकोपार्जन का ढंग सिखाने की योजना है, कुछ उनमें धर्म-कर्म, चरित्र और अध्यात्मवाद की शिक्षा तथा अभ्यास करने का प्रबन्ध हो रहा है।

"मैं इसमें मुख्याधिष्ठात्री हूं और तुम्हारे फूफा जी व्यवस्थापक हैं। हम

दोनों इस काम में दिन का मुख्य भाग व्यतीत करते हैं। और फिर इस प्रकार पन्द्रह सौ रुपये में से अपने निर्वाह के लिए निकालते हैं। हमारा जीवन इस कार्य के लिए है। और जीवन को रखने के लिए भी यही कार्य करना होगा।

"कुछ ऐसा ही विचार कर लो।

"समाज में कुछ उपकारी कार्य करो। अपनी आय में से उस कार्य का संचालन करो। और स्वयं वह कार्य करते हुए जीवन को चलाने के लिए किया गया व्यय यज्ञ में से बचा हुआ हविष कहलाएगा।"

इस प्रकार की अस्पष्ट बातों को रूपकृष्ण समझ नहीं सका। इसपर भी वह विचार करता हुआ घर चला आया। घर पर बड़ी फूफी विष्णुदेवी और उसके पति आए हुए थे। कभी छः-सात महीने में वे एक-आध दिन को आया करते थे। राम और प्रताप दोनों शिवकुमार की दुकान पर कार्य करते थे। इससे बहन-भाई का सम्बन्ध कुछ दृढ़ ही हुआ था। प्रतापकृष्ण राम से राय करने आया था कि उनको मिला धन किस कार्य में लगाया जाए।

पिछले दिन इस रुपये के विषय में घर में विवाद हुआ था। भूषण इसको हराम की कमाई मानता था। यद्यपि विष्णी ने उसको युक्ति में परास्त कर दिया था। परन्तु उसके कथन ने, कि जिस धन-सम्पदा के अर्जन करने में परिश्रम न किया जाए वह हराम की है, दोनों के मन में द्विविधा उत्पन्न कर दी थी। सब भाइयों में राम सबसे अधिक पढ़ा हुआ था। वह वकील था। राम का लड़का भी एम० ए० पास था। अतएव वे अपने लड़के भूषण के कथन की परीक्षा इनसे कराने आए थे।

रूपकृष्ण घर पहुंचा तो उसकी बूआ विष्णी कुछ दिन पूर्व हुए विवाद की बात बता रही थी। रूपकृष्ण ने इसका मुख्य अंश सुना तो चकित रह गया। विष्णी ने आगे कहा, "मैं राम भैया से भूषण की बात के विषय में जानने आई हूं। भूषण कालेज में प्रोफेसर है। यद्यपि वह मेरा सन्तोष नहीं कर सका, परन्तु उसकी बातों को मैं टाल नहीं सकती।"

राम ने रोहिणी को चाय तैयार करने के लिए कहा और पृथक् बैठ प्रताप से बात करने लगा, "यह लाला जी का धन कुछ कष्ट देता है तो भाई हमसे बांट लो।"

"मेरा होता तो इसकी चिन्ता न करता, पर यह है तुम्हारी बहिन का। उसके

संस्कार और बुद्धि तो कहती है कि यह रुपया और इससे होने वाली आय हराम की नहीं है। परन्तु वह योग्य प्रोफेसर, जिसकी शिक्षा में बेचारी ने अपना पेट काट-काटकर धन व्यय किया है, कहता है कि यह हराम की कमाई है। अब यह तुमसे राय करने आई है।"

"बहिन!" राम ने कहा, "हमारे घर में तो रूप चौधरी बन रहा है। आज यह जज साहब के मुख पर चपत लगाकर आ रहा है। यही तुम्हारी बात की विवेचना कर सकता है।"

विष्णी सबजज के मुख पर चपत की बात सुन चिन्ता व्यक्त करने लगी। इसपर राम ने कचहरी में हुई घटना सविस्तार सुना दी। प्रताप सुनकर फड़क उठा। उसने कहा, "रूप! तुम तो वकील के भी कान कतरने लगे हो। पर मैं समझता हूं कि यदि राम भैया तुम्हारी सहायता के लिए वहां न पहुंच जाते तो आज तुम हवालात में होते।"

"पर मुझको भी तो प्रेरणा रूप ने ही दी थी। यह आज प्रातःकाल दुकान के टाइपराइटर पर अपने नोटिस का उत्तर टाइप कर रहा था। भैया शिव ने पूछा कि क्या कर रहा है तो इसने उत्तर पढ़कर सुना दिया। यह तो वह उत्तर अदालत में देने चला गया और मैं चिन्ताग्रस्त बैठा रह गया। शिव दादा ने मेरे मुख को देखा तो पूछ लिया, "क्यों राम! चिन्ता क्या कर रहे हो?"

" 'रूप हवालात में डाल दिया जाएगा। उसका कोई ज़ामिन चाहिए।'

" 'तुम जाओ और यदि मेरी आवश्यकता पड़े तो मुझको बुला लेना। मैं ज़मानत के लिए तैयार होकर आ जाऊंगा।'

"मैं चला गया और यह साहबज़ादे अदालत को शिक्षा देकर लौट आए हैं और इसको मैं चपत लगाना कहता हूं।"

विष्णी ने कहा, "अच्छा रूप! तुम क्या समझते हो?"

"बूआ! एक बात मैं तुमको बताता हूं। धन-सम्पदा में कभी दोष नहीं आता। यह तो पार्थिव पदार्थ हैं। दोष होता है इसके उपार्जन में। तुमने इसका उपार्जन करने में कोई अनियमित बात नहीं की। बाबा ने तुमको दी है। यह उनकी थी और वे देने का अधिकार रखते थे।"

"यही तो भूषण कह रहा था कि पिता जी का इतना धनवान होना ईमान-दारी से सम्भव नहीं। इसलिए यह हराम की कमाई है।"

"भूषण बहुत ही छोटी बुद्धि का प्रतीत होता है। बूआ, उसको कहो कि बुद्धि निर्मल करे।"

"यह कैसे निर्मल होती है ?"

"परमात्मा की उपासना करने से।"

"वह तो परमात्मा को मानता नहीं।"

"तो उसके लिए कोई आशा नहीं। एक बात मैं कहता हूं, वह इसका उत्तर नहीं दे सकता कि उसको अढ़ाई सौ वेतन क्यों मिलता है, जब मुझको कुछ नहीं मिल रहा ? मेरे अंक उससे अधिक थे। मैं उससे अधिक योग्य हूं।"

"वह कहता है कि उसके स्वसुर ने उसकी सिफारिश की है। वह नौकरी पा गया है। तुम्हारी सिफारिश नहीं थी। और तुमको नौकरी नहीं मिली।"

"पर बूआ, सिफारिश तो परिश्रम नहीं है। इस कारण उसकी नौकरी हराम की है।

"बूआ, यदि बाबा की सम्पत्ति उसकी सन्तान को मिलना हराम की कमाई है तो स्वसुर की सिफारिश से नौकरी पाना भी हराम का है। उसको कहो कि दोनों में प्रेरणा स्नेह है। बाबा का स्नेह अपनी लड़की विष्णुदेवी के लिए और बैरिस्टर साहब का स्नेह अपनी लड़की राजेश्वरी के लिए। उसको कहना कि वह नौकरी छोड़ दे तो तुम भी बाबा की सम्पत्ति छोड़ दोगी।"

इस युक्ति पर तो प्रतापकृष्ण हंस पड़ा। राम भी हंसने लगा। इस समय रोहिणी चाय ले आई। राम चाय बनाने लगा तो रूप ने भी अभी-अभी गौरी से सुनी बात कह दी।

"बूआ ! मान लो कि पिता जी ने किसी अनियमित ढंग से कमाई की थी, तो तुमको इससे क्या ? तुमको तो नियमित ढंग से मिली है। हां, तुम उसको भले कार्य में प्रयोग करोगी तो तुम्हारा भला होगा और बुरे काम में व्यय करोगी तो बुरा होगा।

"इस रुपये से कोई लोक-सेवा का काम करो। स्वयं भी उस काम में लग जाओ और वह सेवा का काम कहते हुए अपने निर्वाह के लिए लोगी तो यह यज्ञ होगा और यज्ञ कामधेनु है। इससे सब कामनाएं पूर्ण होती हैं।"

विष्णी मुख देखती रह गई। सब चाय पीने लगे। राम बात बदलने के लिए बोल उठा, "बहिन ! तुम्हारी भतीजियां बड़ी होती जाती हैं उनके विवाह कर

यज्ञ रचा दो।"

"क्या आयु हो गई है उसकी?"

"बहिन! एक नहीं चार-चार हैं। कृपा एफ० ए० में पढ़ती है। इस समय सत्रह वर्ष की है। दया मैट्रिक में है। पन्द्रह वर्ष की है। छाया ग्यारह वर्ष की है। और पारो सात वर्ष की है।"

"बात बहुत सुन्दर की है तुमने। अच्छा, विचार करूंगी।"

विचार हुआ। इस विषय में परामर्श देने वाले थे लाला गोवर्धनलाल, गौरी और शिवकुमार।

विष्णी को जो सम्पत्ति मिली थी वह कुछ तो मकान के रूप में थी और कुछ एक बीमा कम्पनी के हिस्सों के रूप में। इन सबकी आय दस हजार रुपये वार्षिक के लगभग बनती थी। यह योजना बनी कि इसमें से आठ हजार के लगभग परिवार की लड़कियों के विवाह पर सहायतार्थ दिया जाया करे। सहायता की राशि निश्चित करने के लिए एक समिति बना दी गई। उसमें गौरी, विष्णी एवं राजेश्वरी, रूप तथा गोवर्धनलाल काम करने पर राजी हो गए।

भूषण ने मां की यह योजना सुनी तो खिलखिलाकर हंस पड़ा। राजेश्वरी ने पारिवारिक विवाह समिति की सदस्यता स्वीकार करने से पूर्व अपने पति से इसकी चर्चा की थी।

भूषण ने जब योजना सुनी तो हंसते हुए पूछने लगा, "और तुम इन घोंघावसन्तों में राय देना स्वीकार कर आई हो?"

"मुझको यह योजना अति सुन्दर प्रतीत हुई है। क्या खराबी लग रही है आपको इसमें?"

"क्या अच्छाई है इसमें?"

"परिवार की लड़कियों के लिए अच्छे वर प्राप्त करने में यह एक अति सुन्दर विचार है।"

"तो मां अपने धन के बल पर स्वाभाविक सेलैक्शन (निर्वाचन) में हस्तक्षेप करेंगी?"

"यह तो सब स्थानों पर होता ही है। हमारे परिवार में कुछ घर ये तो संपन्न हैं और उनको धन की आवश्यकता नहीं। मामा शिवकुमार हैं। परन्तु उनके भाई राम जी हैं। बेचारे मस्जिद के चूहे की भांति हैं। फिर गोपाल दास हैं। मैंने तो

उनको ऊपर की आय होती है, परन्तु उससे भी निर्वाह नहीं होता। उनके बड़े लड़के काहन का विवाह हुआ है। परन्तु उसकी पत्नी उसको अपने पिता से पृथक् ले जाकर सरकारी क्वार्टर में रहने लगी है। उसका पति बी० ए० पास करने पर सरकारी नौकरी पा गया है और सरकारी क्वार्टर मिलते ही न केवल पृथक् हुआ है प्रत्युत किसी प्रकार अपने माता-पिता को सहायता भी नहीं देता। अब रुक्मिणी मामी हैं, तीन युवा लड़कियां हैं। तीनों पढ़ती हैं और सरस्वती अध्यापिका के कार्य की ट्रेनिंग ले रही है। महेश्वरी अभी इण्टर में पढ़ती है और लाज तो स्कूल में है। सबका खर्चा चलाने में गोपाल मामा पिस रहे हैं।"

"यह तो सब ठीक है। परन्तु राजेश्वरी, साधन न होने पर सन्तान उत्पन्न करने का अपराध भी तो इन्होंने किया है। देखो, आज से बीस वर्ष पूर्व भारतवर्ष अन्न-अनाज में स्वावलम्बी था। तब इसकी जनसंख्या लगभग तीस करोड़ थी। अब इसकी जनसंख्या चालीस करोड़ से ऊपर है। दस करोड़ पेट भरने के लिए और हो गए हैं और भारतवर्ष, जो अन्न-अनाज विदेशों में भेजता था, अब बर्मा तथा इण्डोनेशिया से चावल मंगवाता है।

"यदि मां की इस समिति ने कार्य आरम्भ कर दिया तो परिवार में दस लड़कियां इस समय जो विवाह योग्य हैं, बच्चे पैदा करने के लिए विवश कर दी जाएंगी और अगली मरदमशुमारी (जनगणना) के समय तक कम से कम तीस पेट भरने के लिए नये पेट पैदा कर देंगी। और कहीं देश में दस-बीस ऐसी समितियां बन जाएं जो हिन्दुओं की लड़कियों के विवाह में सहायता देने लगें, तो निश्चय जानो कि अगली मरदमशुमारी में जनसंख्या पैंतालीस करोड़ हो जाएगी।'

राजेश्वरी का पति अर्थशास्त्री एवं समाजवादी था। वह अपनी गणना से भयभीत परेशानी अनुभव करने लगा था। परन्तु राजेश्वरी का दृष्टिकोण भिन्न था। वह समझती थी कि बच्चे विवाह के बिना पैदा नहीं होते क्या? उसको अपनी बात अभी भूली नहीं थी। वह ट्रेनिंग कालेज में पढ़ती थी। भूषण से मित्रता तो तब से ही थी जब वह अभी बी० ए० में पढ़ती थी। परन्तु ट्रेनिंग कालेज की परीक्षा में अभी दो मास शेष थे कि उसे मां बनने का सन्देह होने लगा। उसने अपनी मां से कहा। मां ने अपने पति बैरिस्टर से वार्तालाप किया और उसने उसकी चिकित्सा कराई तब जान छूटी थी। इस सबका ज्ञान भूषण को नहीं था। अपनी मां की सम्मति से उसने इस घटना का वर्णन किसीसे नहीं किया था।

केवल चार प्राणियों को इसका ज्ञान था। उसको स्वयं, उसकी मां, पिता एवं लेडी डाक्टर को। राजेश्वरी की मां को भय था कि यदि भूषण को भी इस बात का ज्ञान हो गया तो वह विवाह नहीं करेगा। राजेश्वरी ने पूछा भी था, 'क्यों?'

'तुम नहीं जानतीं। यह तुम्हारे पिता का विचार है। वे इस विषय में बहुत अनुभव रखते हैं। इससे हमको उनकी राय माननी चाहिए।'

इसके उपरान्त वह ट्रेनिंग लेकर इन्द्रप्रस्थ गर्ल्स स्कूल में नौकरी पा गई और फिर विवाह की बातचीत होने लगी। यद्यपि भूषण उस विवाह के लिए इच्छा रखता था, परन्तु उसके माता-पिता बिरादरी से बाहर विवाह के लिए राजी नहीं होते थे। बैरिस्टर साहब का विचार था कि बिरादरी की बात ढोंग है। वास्तविक बात दहेज की है। अतः बीस हज़ार की कीमत के दहेज का प्रस्ताव करने के लिए राजेश्वरी की मां को भेज दिया; और विवाह हो गया। उन बीस हज़ार में दस हज़ार के तो भूषण, वस्त्र, फर्नीचर और अन्य भेंट की वस्तुएं थीं और दस हज़ार नकद था। यह दस हज़ार अभी तक उसके पति के खाते में जमा था।

इससे वह समझती थी कि जहां तक सन्तान का प्रश्न है, वह तो बिना विवाह के भी हो सकती है और यदि भ्रूण हत्या नहीं करनी, तो जनसंख्या बढ़ेगी ही। जब तक धन से विवाह करने का प्रश्न है, इससे सन्तान तो होगी पर भ्रूणहत्याएं नहीं होंगी। हां, विवाह में धन का आश्रय होने से योग्य वर मिलने की सम्भावना बढ़ जाएगी। यही परिणाम था उसके अपने अनुभवों का।

इस कारण वह कहने लगी, "जनसंख्या बढ़ती है अथवा घटती है, इससे हमको किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं। हम तो अपने परिवार की लड़कियां अच्छे घरों में विवाहने का प्रबन्ध कर रही हैं।"

"रुपये से मिलने वाले परिवार अच्छे होंगे क्या?"

"मेरा अनुभव तो यही है।"

"कितने विवाह कर देखे हैं तुमने? अभी तो तुम्हारी लड़की बहुत छोटी आयु की है।"

"मैंने एक विवाह किया है—अपना और उसमें यह अनुभव हुआ है कि विवाह प्रोफेसर साहब से न हो सकता यदि पिता जी के पास दस हज़ार नकद देने के लिए न होता।"

"तो यह किसीने मांगा था? और न मिलने पर विवाह होने से इन्कार

किया था ?"

"मैं यह निन्दा के भाव से नहीं कह रही। पिता जी ने इतना कुछ सहर्ष दिया था। हां, एक बात यह हुई है कि वे जीवन-भर और भी अपनी लड़की को कुछ न कुछ देने का विचार रखते थे। अब अपना हाथ खींच लिया है। वे कहते हैं कि प्रोफेसर साहब के माता-पिता लोभी हैं। किसी समय लोभवश वे मांग बैठें तो उस समय उनका मुख बन्द करने के लिए कुछ जमा करना चाहिए।"

"किस समय मांग सकते हैं ?"

"क्या जाने, राजकुमारी के विवाह के अवसर पर आपकी मां जी कह दें कि आधा खर्चा वे दें, तो उसके लिए वे तैयार रहना चाहते हैं।"

"मैं तो इस सबको बेहूदा समझता हूं।"

"किसको ? लेने या देने को ?"

"दोनों को।"

"आप कहते तो ठीक हैं, परन्तु अपनी मां से कहिए कि वे मांगें नहीं।"

"मां मेरी बात तो मानेगी नहीं। पहले तुम यह देने वाली समिति में सम्मिलित न होवो। फिर मैं मां से कह दूंगा। इसपर भी वह क्या मानेगी या नहीं, कौन कह सकता है ?"

८

राजेश्वरी को दो बातों से बहुत भय लग रहा था। लड़के-लड़कियों के नियमित विवाह का प्रबन्ध न किया तो सम्भोग तो होंगे ही। ये रुक नहीं सकते। वह जब वासनाभिभूत भूषण से सम्बन्ध बनाने के लिए तत्पर हुई थी तब उस सम्बन्ध के परिणामों को भली भांति जानती थी। इसपर भी वह विवश थी। यौवन की मांग पर किसी प्रकार का अंकुश न होने से वह दीपक की ज्वाला पर शलभ की भांति जलने चल पड़ी थी। वह उस सम्बन्ध के भयंकर परिणामों से बच गई थी, पिता के अनुभव एवं परिचय के कारण। सबके पिता इतने अनुभवी हो नहीं सकते। इससे वह समझती थी कि ठीक आयु में माता-पिता को बच्चों के विवाह का प्रबन्ध कर देना चाहिए। न केवल यह अपितु किसी भी युवक अथवा युवती को इस बात में सन्देह नहीं होना चाहिए कि उसका विवाह असम्भव

है। विवाह में कम से कम बाधाएं रह जाएं तो ठीक है। इससे परिवार की लड़कियों के मार्ग की एक बाधा तो वे समिति बना हटा ही रहे थे। इस कारण वह अपने पति से इस बात में सहमत नहीं थी कि वह इस समिति की सदस्या न बने।

इसपर भी जब उसके पति ने कहा कि उसको इस कार्य में सहयोग नहीं देना चाहिए तो वह चुप रही। हां, अपनी सास से उसने इतना कह दिया था, "मां जी! आपके पुत्र इस प्रकार के कार्य से प्रसन्न नहीं।"

"क्यों? उसको तो प्रसन्न होना चाहिए।"

"यह आप ही उनसे पूछ लीजिए।"

"परन्तु उसने ही तो कहा था कि इस प्रकार के रुपये को व्यय कर देना चाहिए।"

"मुझको तो उनकी बात समझ आती नहीं। वे मुझको इस कार्य में रुचि लेने से मना कर रहे हैं।"

"तो बेटी! तुम इसमें सम्मति मत दिया करो। एक स्त्री को अपने पति को प्रसन्न रखना चाहिए।"

"उनकी अयुक्तिसंगत बातों और कामों में भी?"

"बेटी, जहां मतभेद हो प्रेम से समझा-समझा लेना चाहिए।"

"और जब वे न समझें तो?"

"तो उनका कहा मानना चाहिए।"

इसपर राजेश्वरी आंखें नीचे किए बैठी रह गई फिर साहस पकड़ बोली, "मैं एक बात आपसे पूछती हूं। आप मेरा नाम बीच में न लाएं तो कहूं।"

"क्या बात है?"

"राजकुमारी अब अढ़ाई वर्ष की हो गई है। ये मुझको गर्भ न धारण के लिए कह रहे थे। कुछ रबड़ का सामान भी उन्होंने लाकर दिया था। मेरी इन वस्तुओं के प्रयोग में रुचि नहीं थी। पिछले मास से आपके परिवार की लड़कियों के विवाह में सहायता की बात से तो मैं कुछ निर्भय हो गई थी और अब देखती हूं कि मुझको कुछ दिन ऊपर हो गए हैं। एक ओर तो ये मुझको कह रहे हैं कि इस प्रकार धन व्यय करना धन का अपव्यय होगा और दूसरी ओर मुझको कह रहे हैं कि किसी लेडी डाक्टर से मिलकर सफाई करवा दूं।"

"सफाई? क्या मतलब है तुम्हारा?"

"मां जी ! वे इस बच्चे को निकाल देने के लिए कहते हैं।"

"तो इसको सफाई कहता है ?"

"जी।"

"तो कुछ गन्दगी है, जिससे पेट को साफ कराने को कह रहा है ?"

"यह वे कहते हैं।"

"तो मत मानो उसका कहना। उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। यह बच्चों के ऊपर एक का अधिकार मैं नहीं मानती। बच्चे परिवार के हैं। इसीलिए जब राम ने अपनी लड़कियों के विवाह की बात कही, तो मैं तुरन्त मान गई। मैं कभी पश्चात्ताप करती हूं कि मैंने इसको इतना पढ़ाया ही क्यों ? ज़रूर इसकी संगत खराब रही है।"

राजेश्वरी विचार करती थी कि अपने पति की संगत में वह भी रही है। फिर यह खराबी कहां से आई ? वह स्वयं भी इस गर्भपात के पक्ष में नहीं थी; परन्तु दिन-रात भूषण आग्रह कर रहा था। उसने एक लेडी डाक्टर से बात भी की थी और वह उसको वहां जाने की बात कह रहा था, परन्तु वह टाल-मटोल कर रही थी।

बात यहां तक ही रह नहीं सकी। राजेश्वरी ने अपनी मां से कहा तो उसने बैरिस्टर साहब से बात कह दी और बैरिस्टर रघुनाथसहाय यह जानता था कि बार-बार गर्भपात कराना भय-रहित नहीं हो सकता। वह एक दिन भूषण के कालेज़ में जा पहुंचा।

भूषण अपनी श्रेणी को पढ़ा रहा था। इस कारण रघुनाथसहाय को स्टाफ-रूम में बैठ प्रतीक्षा करनी पड़ी। घण्टी बजी तो वह स्टाफ-रूम में आया और अपने श्वसुर को बैठा देख बहुत आदर से मिला। चाय-पानी पूछने लगा।

रघुनाथसहाय ने पूछ लिया, "यहां का काम समाप्त हुआ है अथवा कुछ रहता है ?"

"क्यों ? कहीं चलना है ?"

"हां, हमारे घर।"

"क्या है पिता जी ?"

"वहां आज तुमको चाय पर निमंत्रण देने आया हूं।"

"क्यों, क्या बात है आज ?"

"तुम चलो तो मार्ग में बताऊंगा।"

"तो ठहरिए। प्रिन्सिपल साहब से एक मिनट का काम है. उनसे मिलकर अभी आया।"

बैरिस्टर साहब के दो ही सन्तान थीं। एक राजेश्वरी और दूसरा कमलकिशोर। कमलकिशोर राजेश्वरी से पांच वर्ष छोटा था और अब एम० ए० में पढ़ता था। भूषण को समझ आया कि उसके विवाहादि के विषय में विचार करने के लिए उसको ले जाया जा रहा है। कमलकिशोर अपनी बहिन से बहुत ही सुन्दर था। इससे वह समझता था कि उसके विवाह की चिन्ता उसके माता-पिता को नहीं करनी चाहिए। सैकड़ों पढ़ी-लिखी सुन्दर लड़कियां उसपर लट्टू हो जाएंगी और उसको अपनी पत्नी के लिए किसीको चुन लेना कठिन नहीं होगा।

इस विषय में वह विचार करता हुआ प्रिन्सिपल साहब से मिलने गया और काम कर लौट आया। बैरिस्टर साहब अपनी मोटर साथ लाए थे और श्वसुर-दामाद उसमें बैठ चल पड़े। मार्ग में भूषण ने पूछ लिया, "कमल की सगाई की बातचीत हो रही है क्या?"

उसकी सगाई तो हो चुकी है। मौखिक रूप में बात हो चुकी है। एक दिन निश्चय कर पब्लिक फंक्शन भी हो जाएगा।"

"अच्छा! आपने तो बताया नहीं।"

"इसकी जरूरत नहीं समझी। यथार्थ में मेरे एक मित्र हैं भृगुदत्त। उनकी लड़की है। लड़की कमल की माता जी तथा कमल की भी देखी-भाली है। एक दिन भृगुदत्त आए और सगाई की बात करने लगे। मैंने लड़के और उसकी मां से बात की। हम तुरन्त सहमत हो गए और बात पक्की हो गई।"

"लड़की कितनी पढ़ी है?"

"सुना है, बहुत कुछ पढ़ी है। कमल की मां एक दिन उनके घर गई थी और वह लड़की की शिक्षा के विषय में जानकारी ले आई है। मैं उससे सन्तुष्ट हूं।"

"क्या जानकारी लाई हैं मां जी?"

"वह कुकरी की परीक्षा पास है। कपड़े कटिंग का लन्दन से 'ड्रेस एण्ड कटिंग' का डिप्लोमा लिए हुए है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की साहित्य-रत्न की परीक्षा पास किए हुए है। अंग्रेजी भी जानती है।"

"यह तो कुछ न हुआ।"

"मैं समझता हूं तुमसे तो अधिक पढ़ी है। तुमने तो केवल एक विषय में ही एम० ए० किया है और उसने तो कई विषयों की उच्चतम परीक्षा पास की है।"

एक दर्जी के काम में डिप्लोमा को उसका स्वसुर एम० ए० इन इकानौमिक्स से बड़ी परीक्षा बता रहे थे। वह समझता था कि उनके दिमाग में कुछ खराबी आ रही है। इससे उसने बात बदल दी। उसने कहा, "मैंने पी-एच० डी० के लिए थीसिस दे दी है। आशा करता हूं कि मुझको डाक्टर की उपाधि शीघ्र ही मिल जाएगी।

"किस विषय पर लेख दिया है?"

"न्यू वे आफ डिस्ट्रीब्यूशन आफ वैल्थ (धन-वितरण के नये उपाय)।"

बैरिस्टर साहब का ध्यान कम्युनिस्ट ढंग की ओर चला गया। इससे उन्होंने पूछ लिया, "'न्यू वे' से क्या मतलब?"

"सोशलिस्ट वे (सामाजिक ढंग)।"

"सामाजिक ढंग? वह क्या होता है? समाज तो अपने-अपने देश में भिन्न-भिन्न प्रकार की है। भारत में यदि अपना राज्य होता तो यहां का 'नैशनल' सामाजिक ढंग निश्चय करता। इसलिए कौन-सा ढंग सामाजिक ढंग है?"

"मेरी थीसिस तो मार्क्सिस्ट ढंग पर है।"

"ओह! तब ठीक है। मुझको भी कुछ यही समझ आया था।"

"यह किस प्रकार समझ आ गया था, आपको?"

"तुम आबादी कम करने के विषय में बात कर रहे हो न?"

"आबादी कम करने के?" भूषण को स्मरण नहीं था कि उसने कभी इस विषय पर अपने स्वसुर से बात की हो। इसपर वह प्रश्न-भरी दृष्टि से बैरिस्टर साहब की ओर देखने लगा।

रघुनाथसहाय ने उसे समझाने के लिए कहा, "देखो? मैं एक घटना बताता हूं। मेरे पिता देहात के रहने वाले थे। हमारी छोटी-सी ज़मींदारी थी अलमोड़ा के पास। हमारे घर के आंगन में एक आम का पेड़ था। उसपर एक बार मधु-मक्खियों ने छत्ता लगा दिया। दूसरे-तीसरे दिन मक्खियां घर में किसी न किसीको काट जाती थीं। एक दिन पिता जी पेड़ के नीचे बैठे रस्सी बट रहे थे। हवा का झोंका आया और एक पका हुआ आम मक्खियों के छत्ते पर गिरकर पिता जी के सामने आ गिरा। मक्खियों को कुछ ऐसा समझ आया कि पिता जी ने उनके छत्ते

पर ढेला फेंका है। बस, सब पिता जी पर चिपट गईं। पिता जी रस्सी छोड़कर भागे। मक्खियां उनके पीछे-पीछे थीं। बहुत कठिनाई से वे घर के एक कमरे में घुस, भीतर से दरवाज़ा बन्दकर, जान बचा सके। इसपर तीन दिन तक वे खाट पर पड़े रहे। सारा शरीर सूज गया था और उनको तीव्र ज्वर हो गया था।

"जब वे ठीक हुए तो सबसे पहली बात जो उन्होंने की, आम के पेड़ को कटवा दिया। उस समय मैं पांचवीं श्रेणी में पढ़ता था। उस पेड़ के आम बहुत ही मीठे और रसदार हुआ करते थे। आमों के मौसम में घर और आस-पास के लोग उन आमों को चूस-चूसकर रस लिया करते थे। पेड़ के कट जाने से मुझको बहुत शोक हुआ था, परन्तु पिता जी को मक्खियों के काटने से हुई वेदना को स्मरण कर कुछ अनुभव करता था।

"आज जब मैं मार्क्स की जीवन-मीमांसा पढ़ता हूं और जो कुछ मन में हुआ है उसको ध्यान करता हूं तो पिता जी के उस आम के पेड़ को कटवाने की बात स्मरण आ जाती है। मैं समझता हूं कि जैसी मूर्खता वह थी वैसी ही यह है।"

"समझा नहीं?" भूषण के मस्तिष्क में अभी भी यह विचार जमा हुआ था कि बैरिस्टर साहब के दिमाग में खराबी हो रही है।

"समझाता हूं। पिता जी मक्खियों के काटने से इतने दुःखी थे कि उनको लोगों का कथन 'पेड़ न कटवाएं' समझ नहीं आ रहा था। यही अवस्था तुम्हारी प्रतीत होती है।

"तुम देश में बढ़ रही जनसंख्या के आंकड़ों को देख-देख इतने दुःखी हो रहे हो कि तुमको कोई भली सम्मति समझ आती ही नहीं। जैसे मक्खियों से बचने का उपाय पेड़ कटवाने के अतिरिक्त भी थे, परन्तु पिता जी की बुद्धि इतनी भ्रष्ट हो रही थी कि उनको पेड़ का समूल नाश करना ही ठीक समझ आया था। इसी प्रकार तुम जनसंख्या की समस्या के किसी अन्य उपाय पर विचार न कर बच्चे मरवाने के उपाय पर ही तैयार हो गए हो।"

भूषण को समझ आने लगा था कि कदाचित् राजेश्वरी ने कुछ बात अपने पिता से कही है। उसको राजेश्वरी पर क्रोध आने लगा था। पति-पत्नी की गुप्त बातें भला किसी अन्य से कैसे की जा सकती हैं? उसका मुख क्रोध से लाल हो रहा था।

रघुनाथसहाय उसके मुख पर क्रोध के लक्षण देख रहा था। इसी बात को

नरम करने के लिए वह कहने लगा, "यह तो एक उदाहरण है। वास्तव में मार्क्स की पूर्ण प्रतिक्रिया, जो उस समय के समाज की अवस्था से उसके मन पर हुई थी, वह पिता जी के मन पर मक्खियों द्वारा काटे जाने की प्रतिक्रिया के तुल्य ही थी।

"इंगलैंड के कारखानेदार तत्कालीन मजदूरों पर अत्याचार करते थे। उस अत्याचार को दूर करने के उपाय के रूप में उन्होंने कारखानों को तोड़ देने का विचार वना लिया। यह आम के पेड़ को जड़ से निकाल देने के तुल्य था। कुछ पति पत्नियों पर कठोर नियंत्रण रखते थे और उनकी सम्पत्ति को हज़म कर जाते थे इसलिए मार्क्स के अनुयायी विवाह-पद्धति को ही नाश करने पर तैयार हो गए।

"वच्चे जनने के पश्चात् प्रसूता वच्चे के लालन-पालन में लग जाती थी। इसको समय का अपव्यय समझ पैदा होते ही वच्चे मां की गोद से छीन लिए जाने लगे।

"पैदा होते ही वच्चे मां से पृथक् हो जाने के कारण माताएं पुनः शीघ्र गर्भ-धारण करने लगीं तो उन्होंने विवाहित पति-पत्नियों को वलपूर्वक पृथक्-पृथक् रखने का नियम वना लिया। इसपर भी वच्चे होने नहीं रुके तो वच्चों के हस्पताल में एक नियत संख्या से अधिक वच्चे हो जाने पर उन्हें इंजैकशन देकर शान्ति से मार डालने का प्रवन्ध करने लगे।

"क्या-क्या वताऊं इस मार्क्सिस्ट समाज के ढांचे की कहानी? यह सव पढ़-पढ़ तो मेरे रोमांच हो उठता है।

"और भूषण जी! अव तुम इस नये समाज के ढंग की प्रशंसा कर डाक्टर वनोगे? क्या मैं गलत समझ रहा हूं?"

"आपको किसी अमरीकन अथवा चर्चिल के चेले-चांटे ने भड़का रखा है। पिछले वर्ष पण्डित जवाहरलाल नेहरू जी रूस गए थे और वे रूस की प्रशंसा करते नहीं थकते।"

"उनके मस्तिष्क में भी वही प्रतिक्रिया हो रही प्रतीत होती है जो मक्खियों के काट खाने से पिता जी के मस्तिष्क में हुई थी।"

"नहीं जी! वे तो कुछ इस प्रकार लिखते हैं कि सोवियत रशिया कई विषयों में दुनिया का सवसे उन्नत देश है।"

इस समय वे वैरिस्टर साहव की कोठी में पहुंच गए थे। यह सिविल लाइन्ज़

में राजपुरा रोड पर थी। मोटर से उतर वे कोठी के ड्राइंगरूम में बैठ गए थे। राजेश्वरी की मां भी वहां आ गई और बैरा चाय लेने चला गया, इंजिनियर साहब कहने लगे।

"समाचारपत्रों में यह छपा था कि पंडित नेहरू तीन दिन मास्को में रहे थे और तीनों दिन उनका कार्यक्रम इतना सघन था कि उनको ठीक प्रकार सोने को भी समय नहीं मिला। विस्मय करने की बात यह है कि इन तीन दिनों में वे सायबेरिया, युकेरन, आयजरबैजान और क्रीमिया इत्यादि सब स्थानों के समाचार जान आए हैं और सब स्थानों की उन्नति को देख दुनिया के अन्य देशों को पिछड़े हुए समझने लगे हैं।"

"तो उन्होंने यह सब झूठ लिखा है?"

"मैं क्या जानूं? एक सूत्र से प्राप्त सूचना यह है कि लेनिन ने १९१७ की क्रान्ति में लाखों निर्दोषों को अति क्रूरतापूर्ण ढंग से मरवाया था और उसने क्रान्ति के बादशाह कैसर से सोना ले सेना में वितरित कर उनसे ही देशवासियों पर अत्याचार करवाया था। और दूसरी ओर पण्डित जवाहरलाल कहते हैं कि यह क्रांति यूनीक (अद्वितीय) थी और कहते हैं कि ऐसी क्रान्ति संसार के अन्य देशों में भी होनी चाहिए।

"मैंने एक लेख पढ़ा है जिसमें तत्कालीन रूस के समाचारपत्रों के उद्धरण हैं। इधर पण्डित जी का लेख है जिसका कोई प्रमाण नहीं।"

"तो आप उनको झूठा समझते हैं?"

"उनको 'मिस इन्फोर्म्ड' (वस्तुस्थिति से अपरिचित) मानता हूं। वे जो कुछ लिख रहे हैं एक पूर्वकल्पित विचार (प्रीकन्सीव्ड नोशन) के अधीन लिख रहे हैं?"

"वह पूर्वकल्पित विचार क्या है?"

"यही कि जो कुछ भी हिन्दुस्तान में है घटिया है और जो कुछ रूसोवियत में है बढ़िया है। यूरोप में भी जो कुछ आज है वह व्यतीत हुए काल से अच्छा है।"

"कुछ भी हो, भविष्य जवाहरलाल जी का है।"

"हां! इसमें तुम ठीक समझ रहे हो, परन्तु इसमें वर्तमान स्कूल-कालेजों की शिक्षा कारण है, जो तुम्हारे जैसे मक्खियां उड़ाने के स्थान पर पेड़ काटने वाले तैयार कर रही है।"

"यह आम के पेड़ की बात आपके मस्तिष्क में खूब घुस गई है।"

"तुम जैसे लोग इसको याद जो कराते रहते हैं, कैसे भूल सकता हूं ?"

"मैं आपके इस बार-बार कहने का अर्थ नहीं समझा।"

"देखो ! तुम्हारे कितने बच्चे हैं ?"

"अभी तो दो हैं।" भूषण ने चाय का घूंट पीते हुए कहा । उसको अब कुछ विश्वास हो गया था कि राजेश्वरी ने कुछ गर्भपात की बात यहां कही है। इससे वह चाय पी सावधान हो पत्नी की भर्त्सना करने के लिए तैयार हो गया।

"तुम दोनों को कितना वेतन मिलता है ?"

"पौने चार सौ है। पिछले मास ही मुझको पचीस रुपये उन्नति मिली है।"

"राजेश्वरी कह रही थी कि उसको भी दस रुपये उन्नति मिलने वाली है। मैं पूछता हूं कि क्या तुम एक-दो और बच्चों का बोझ सहन नहीं कर सकते ?"

"पिता जी ! यह मेरे सहन करने की बात नहीं। यह पूर्ण देश के समाज की बात है। दिन-प्रतिदिन देश में खाने वाले मुख बढ़ रहे हैं और अनाज की उपज बढ़ नहीं रही। हम स्थायी अकाल के गाल में जा रहे हैं।"

"तो तुमको उनके बच्चों की अपने बच्चों से अधिक चिन्ता है, जो समाज के उपकारी अंग नहीं बन सकते ? कम से कम इतना तो तुम भी समझ सकते हो कि एक प्रोफेसर और स्कूल की अध्यापिका के बच्चे देश के कल्याण में अधिक सहयोग देंगे और एक भिखारी का बच्चा उतना कल्याण नहीं कर सकता ?"

"कौन जाने भविष्य में कौन नेपोलियन और बिस्मार्क बनने वाला है।"

"ठीक है। यही तो मैं कह रहा हूं कि यह तुम कैसे कह सकते हो कि राजेश्वरी के पेट का बच्चा उजड्ड गंवार होगा, जो उसकी हत्या करने के लिए उसे कह रहे हो !

"देखो भूषण ! इसकी हत्या करने से तुम्हारे किसकी परवरिश होगी, बता सकते हो ? मैं तो एक बात जानता हूं कि यह ईश्वरीय बातें हैं। तुम अल्पज्ञान से उसकी योजनाओं को नष्ट-भ्रष्ट कर रहे हो।

"कहीं सुभाषचन्द्र बोस के मां-बाप भी यही करते जो तुम करने जा रहे हो तो भारतवर्ष एक शूरपुत्र की सेवाओं से वंचित रह जाता और कहीं रवीन्द्रनाथ ठाकुर के पिता भी यही कुछ करते तो वह भी न हो सकता। ये दोनों परिवार में सबसे छोटे थे।

"देखो ! अब चुपचाप चाय पियो और जाकर अपनी पत्नी को प्रसन्न करो। वह इस हत्या के पाप से इतनी भयभीत है कि अपने पति का घर छोड़ देने वाली थी। मैंने उसको समझा-बुझाकर वापस तुम्हारे घर भेज दिया है।

"एक बात और किया करो। अपने इस मिथ्या अर्थशास्त्र को लपेटकर कॉलेज में ही छोड़ आया करो। इसका स्थान एक हिन्दू परिवार में नहीं है। हमारा ज्ञान इस अधकचरे ज्ञान से अधिक श्रेष्ठ और सत्य के समीप है।"

९

भूषण आज प्रिन्सिपल से कहने गया था कि वे मालूम करें कि उसके लेख के परीक्षकों ने उसके लेख के विषय में क्या लिखा है ? प्रिन्सिपल ने उसे बधाई दी कि उसको डाक्टरेट मिलने वाली है।"

इधर बैरिस्टर साहब से उसको डांट पर डांट पड़ रही थी और वह उनकी एक भी युक्ति का उत्तर नहीं दे सकता था; इससे उसने अपने श्वसुर की सम्मति मान ली कि वह चुपचाप चाय पीकर घर जाए और राजेश्वरी को प्रेमपूर्वक समझावे।

पर उसका मन पूछ रहा था कि क्या समझावे ? अपने मन की बात समझावे अथवा अपने श्वसुर के मन की। वह मन ही मन विचार कर रहा था कि जिस बलबूते पर वह डाक्टरेट प्राप्त कर रहा है और भविष्य में उसकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त होने वाला है, क्या वह मिथ्या है ? यदि नहीं है तो उसके परीक्षक उसको डाक्टर की उपाधि क्यों दे रहे हैं ?

साथ ही वह विचार कर रहा था कि जितनी युक्तियां उसने समाजवाद के पक्ष में अपने लेख में दी हैं, उनको तो एक झटके में बैरिस्टर साहब ने उसके देखते-देखते हलाल कर दिया है।

वह श्वसुर की मोटर में अपने घर लौट रहा था और उसके मन में विचार कर रहा था कि यह क्या हुआ ? क्या समाजवाद का सिद्धांत अर्थशास्त्र की भूमि पर नहीं होना चाहिए। यह तो अनर्थकारी होगा। तो क्या भ्रूण हत्या के अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं ? उसको तो कुछ सूझ नहीं रहा था। वह मन में गणना करने लगा कि उसके नाना के परिवार में कितने प्राणी हैं ? नाना जी के

चार लड़के और चार लड़कियां। यह हुए आठ। शिव बड़े लड़के के एक लड़का और दो लड़कियाँ। ये हुए ग्यारह। शिव के तीन पोते और तीन दुहिते-दुहितियां। ये हो गए सत्रह।

मोटर में बैठा भूषण उंगलियों पर गिनती कर रहा था। लाला जी की सबसे बड़ी लड़की थी उसकी अपनी मां। मां के घर चार सन्तानें थीं। इस प्रकार हो गए इक्कीस। उसकी मां के पोते-दुहिते थे नौ। सब बन गए तीस। लाला जी की दूसरी लड़की थी लक्ष्मी। उसके घर में भी लड़के-लड़कियां पोते-पोतियां, दुहिते-दुहितियां सब थे बारह। तो यह हो गए बयालीस। चौथा था गोपाल। गोपाल के घर चार बच्चे थे। एक पोता, एक दुहिता और एक दुहिती। ये सात मिलाकर लाला जी के परिवार में हो गए लगभग पचास प्राणी।

इस समय मोटर पहुंच गई थी हेमिल्टन रोड पर, जहां उसका मकान था। वह गणना समाप्त नहीं कर सका और तोबा! तोबा!! एक जोड़े के साठ सन्तान! कदाचित् साठ से भी अधिक! उसकी सूचना पूर्ण नहीं थी। इतने बड़े परिवार में एक-आध प्रतिभास उत्पन्न होना विस्मय करने की बात नहीं थी।

वह मोटर से उतरा तो ड्राइवर ने सलाम किया और मोटर ले गया। वह घर गया तो उसकी मां, पिता एवं राजेश्वरी रेशमी सफेद वस्त्र पहने कहीं जाने को तैयार खड़े थे। तीनों के मुख पर शोकमुद्रा थी। विष्णुदेवी ने कहा, "कहां ठहर गए थे भूषण?"

"मैं राजेश्वरी के पिता के घर गया था।"

"कुछ काम था क्या?

"हां, मां। तुम सब कहां जा रहे हो?"

"गोपाल भैया के लड़के काहनचन्द्र की पत्नी का देहान्त हो गया है।"

"कैसे देहान्त हो गया है?"

"मैटर्निटी होम में। हम सब वहां जा रहे हैं। तुमको भी चलना चाहिए।"

"फजूल है मां।"

"नहीं बेटा! तुम्हारा भाई है काहन—मामा का लड़का। तुमको अफसोस करने जाना चाहिए।"

"तो कैसे चलोगे?"

"नौकर टांगा लेने गया है।"

भूषण मन में विचार कर रहा था कि इतने बड़े परिवार में यदि कहीं [illegible] पर जाने लगा तो उसको तो कालेज जाने के लिए भी समय नहीं होगा । परन्तु मां और पत्नी को जाने के लिए तैयार देख वह भी उनके साथ चल पड़ा ।

करौल बाग में डाक्टर भार्गव के अस्पताल में काहनचन्द्र की पत्नी सुधा का [illegible] मास का गर्भपात हुआ और देहान्त हो गया । काहन, उसका पिता [illegible] और मां रुक्मिणी तथा परिवार के अन्य कुटुम्ब-कुटुम्ब सम्बन्धी अस्पताल में [illegible] एकत्रित थे । शव को पंचकुइयां रोड पर संस्कार के लिए ले गए । भूषण [illegible] साथ चलता-चलता पूछने लगा, "भैया ! क्या हुआ था ?"

"एबॉर्शन (गर्भपात) ।"

"हो गया है या कराया था ?"

काहन ने इस प्रश्न पर भूषण की आंखों में देखते हुए पूछ लिया, "[illegible] है ?"

भूषण को इस प्रश्न पर विस्मय हुआ । इसपर उसके मुख पर मुस्कराहट [illegible] गई और उसने कहा, "कहना किसने है ? क्या मैं [illegible] ? [illegible] नहीं [illegible] प्रतिदिन महंगाई बढ़ रही है ? जीवन-स्तर ऊंचा और महंगा हो रहा है और आम-दनी बढ़ती नहीं ?"

काहन मान गया । "मगर मैं इसको आना नहीं [illegible] था ।"

"खैर छोड़ो । वह तो हो गया । अब विवाह न करना ।"

"क्यों ?"

"तो फिर यही कुछ करने का विचार है ?"

"बच्चे पैदा करने की तो इच्छा नहीं, परन्तु बिना पत्नी के रह सकूंगा क्या [illegible]"

"दिल्ली में वह हवस भी पूरी होने के साधन हैं ।"

"तुम्हारा मतलब है ग्रान्ट रोड ?"

"हां, वह भी है और अन्य भी हैं ?"

काहन ने भूषण की इतनी खुलकर बात पहले कभी नहीं सुनी थी । [illegible] समझ नहीं सका कि वह आज क्यों इस प्रकार की बातें कर रहा है । [illegible] चुपचाप चलते हुए काहन को एक सवाल सूझा । उसने पूछ लिया, "[illegible] भैया भूषण ! तुमको इस प्रकार का बहुत अनुभव मालूम होता है ?"

इसपर मुस्कराते हुए भूषण ने कहा, "इन कालेज में [illegible] की [illegible]

पढ़ाते हैं। यह आवश्यक नहीं कि हम उन देशों में गए भी हों।"

"पर भैया ! यह देश-विदेश की बात नहीं। यह तो गन्दी नाली है। तनिक इस नाली की सैर करने के लिए जाने से पूर्व अपने पिता से राय कर लेना। मैंने सुना है कि उनको इसका बहुत अनुभव है।"

अपने पिता का कुछ इतिहास तो भूषण भी जानता था। इसपर वह मौन हो गया। वास्तव में कानों-कान सब जान गए थे कि सुधा, काहन की पत्नी, का देहान्त क्यों हुआ है और इस बात का सबसे अधिक शोक लाला सुलक्षणमल की स्त्री को था।

जब सब संस्कार कर काहन के क्वार्टर पर आए तो कर्मदेवी, काहन की दादी, ने कहा, "काहन ! बच्चा कहां है ?" काहन तथा सुधा के लड़के की बात थी। वह अभी एक वर्ष का नहीं हुआ था कि सुधा पुनः गर्भवती हो गई थी। इससे पति-पत्नी दोनों बहुत दुःखी हुए थे और उस दुःख-निवारण का सुगम उपाय करने चल पड़े थे।

"बड़ी मां !" काहन ने बताया, "पड़ोसियों के घर में है।"

"उसको ले आओ।"

वह गया और बच्चे को उठा लाया। कर्मदेवी ने उसको गोद में ले लिया और काहन से कहा, "देखो काहन ! या तो तुम मेरे घर में चलो, नहीं तो मैं यहां रह जाती हूं।"

"मां, कूचा घासीराम में मैं जाकर रह नहीं सकता। वह गली बहुत तंग है और गन्दी है। इस खुली हवा में रहने के पश्चात् तो यह भी वहां बीमार हो जाएगा।"

"परन्तु यहां मैं अकेली नहीं आऊंगी। मैं आऊंगी तो मेरे साथ सदारानी भी आएगी। मैं उनको वहां अकेली नहीं छोड़ सकती।"

"तो दोनों आ जाओ।"

"इसका किराया कितना पड़ता है ?"

"वह तो दफ्तर में वेतन से कट जाता है।"

"मैं यह पूछती हूं कि कितना देना पड़ता है ?"

"पन्द्रह रुपये किराया। छः रुपये बिजली पानी और कुछ भंगी-माली इत्यादि। सब मिल-मिलाकर पचीस रुपये।"

"तो ठीक है। हम दोनों आज ही यहां रह जाएंगी।"

भूषण बड़ी मां की काहनचन्द से बातें सुन रहा था। इसपर उसने कह दिया, "बड़ी मां! मेरा विचार है कि तुम बच्चे को अपने साथ ले जाओ और काहन को कहो कि यह क्वार्टर छोड़ दे।"

"मुझको कुछ आपत्ति नहीं। मैं जानती हूं कि काहन अपना निर्वाह कर लेगा। मैं यह भी जानती हूं कि यह अपने पिता के पास जाकर नहीं रहेगा। मैं तो इस बच्चे की रक्षा की बात कर रही हूं।"

"तो तुम बच्चे को ले जाओ।"

"क्यों काहन! क्या कहते हो?"

"बड़ी मां! मुझको भूषण भापा की बात पसन्द नहीं। तुम यहां रहोगी तो मेरा विवाह भी हो सकेगा। अकेला रहने पर तो सम्भव नहीं।"

"विवाह तो होगा तुम्हारा। तेरह दिन निकल जाने दो। तब विवाह का प्रबन्ध कर दूंगी।"

"कहां?" भूषण का प्रश्न था।

"तुम्हारी साली से।"

"कौन साली? बड़ी मां! मैं समझता हूं कि राजेश्वरी के पिता पहले ही बनियों के घर लड़की देकर पश्चात्ताप कर रहे हैं। और फिर उसकी छोटी बहिन कोई नहीं है।"

"मेरे पढ़े-लिखे मूर्ख बेटे! कल से काहन की सगाइयां आने लगेंगी। निश्चय जानो, जब तक मैं जीती हूं, हमारे घर का कोई लड़का अविवाहित नहीं रह सकता।"

भूषण विचार करता था, बहुत अभिमान है धन का उसकी नानी को। इससे वह चुप रहा। वह मन में विचार करता था, "यदि यहां समाजवाद चल जाए तो कम से कम इस बूढ़ी औरत का अभिमान तो चूर हो सकता है।"

जब सदारानी क्वार्टर में रहने के प्रबन्ध के बारे में विचार कर रही थी, भूषण काहन को बाहर ले जाकर उसके मन पर बड़ी मां के प्रस्ताव की प्रतिक्रिया जानने का यत्न करने लगा था।

"काहन! अब तो प्रसन्न हो?"

"मुझको बड़ी मां पर विश्वास है। अपनी मां तो मुझसे उस दिन से ही

नाराज़ है जब मैंने उसको वेतन में से एक पैसा भी देने से इन्कार कर दिया था।"

"तो उसने मांगा था ?"

"हां ! वह चाहती थी कि मैं अपने वेतन का एक-तिहाई भाग उसके पास जमा करा दिया करूं।"

"किसलिए ?"

"वे कहती थीं कि उतना धन परिवार के सुरक्षित कोष में जाएगा। वह कभी परिवार पर मुसीबत के समय काम आएगा। पिता जी अपने वेतन का तीसरा भाग उसमें जमा कराते हैं।"

"तो तुमने क्यों नहीं माना ?"

"सुधा कहती थी, कौन मुसीबत आ सकती है ? दिल्ली में भूचाल आते नहीं, अंग्रेजी राज्य जा नहीं सकता और नई दिल्ली में चोर-डाकू घुस नहीं सकते। इस कारण जो बात होनी नहीं, उसके लिए चिन्ता क्यों करें ?"

"बहुत समझदार थी वह। कान्हन, तुमने उसकी हत्या कर ठीक नहीं किया।"

"भैया ! वह अच्छी तो थी नहीं। उसकी ऊपर की युक्ति मिथ्या सिद्ध हुई है। जब मैं उसके आपरेशन के लिए हस्पताल लेकर गया तो डाक्टर उसका पेट चीरकर फटी नस को सीना चाहता था और पांच सौ रुपया मांगता था। मेरे पास सिर्फ एक सौ था। उसने मुझको कहा कि मैं रुपये का प्रबन्ध करूं। तब तक वह रक्त रोकने का यत्न करता है। मैं भागा-भागा आया और पड़ोसियों से भाग-दौड़कर किसीसे बीस, किसीसे पचास, एक-दो से सौ-सौ रुपया तक एकत्रित कर चार सौ ले गया। इसमें मुझको आधा दिन लग गया। डाक्टर ने मेरे जाने से पूर्व ऑपरेशन कर टांके भी लगा दिए थे। परन्तु वह इतनी दुर्बल हो चुकी थी और उसका इतना रक्त निकल चुका था कि वह बच नहीं सकी।"

"मुझको विश्वास है कि यदि तुरन्त ऑपरेशन हो जाता तो कदाचित् वह बच जाती।"

"चलो, बड़ी मां नया विवाह करने की बात कहती है। तो करोगे विवाह ?"

"क्यों नहीं करूंगा ! हां, अब वैसी भूल नहीं करूंगा जैसी सुधा के साथ की थी। बड़ी मां जी के पास रुपया लेने जाता तो यह घटना न होती।"

इस समय राजेश्वरी बड़ी मां से छुट्टी ले घर चलने के लिए आ गई। उसने अपने पति से कहा, "भैया की बाईसिकल लेकर एक टांगा पकड़ लाइए।"

विवश प्रोफेसर साहब काहन को विवाह के विषय में सीख न दे सका। इस शुभ कार्य को किसी अन्य दिन के लिए छोड़ वह तांगा लेने चल पड़ा।

रात घर चलकर राजेश्वरी से झगड़ा हो गया। घर पहुंचते, भोजन बनते, करते आधी रात व्यतीत हो चुकी थी। सोने से पूर्व बात भूषण ने आरम्भ की। उसने पूछ लिया, "तुम पिता जी से मिलने गई थीं?"

"हां। माता जी लेने आई थीं। स्कूल से आधे दिन की छुट्टी ले उनके साथ गई थी।"

"कुछ विशेष काम था उनको?"

"वे तो केवल मिलने ही आई थीं। मैंने आज आपकी माता जी से आपके मन की बात कही थी। उनका कहना था कि वे तो इस बात की अनुमति दे नहीं सकतीं। इस विषय में मैं अपनी मां से राय कर लूं। अतः जब मैं वहां गई तो आपकी बात बताई। उन्होंने आपकी माता जी का समर्थन किया है। मैं वहां से तीन बजे चली आई थी।"

"तुम्हारे पिता जी आज मुझसे कालेज में मिलने आए थे। फिर मुझको घर चाय पिलाने ले गए। मैंने समझा कि कमल की सगाई के विषय में कुछ बातचीत करने जा रहे हैं। परन्तु उन्होंने तो तुम्हारे गर्भ-पात की बात आरम्भ कर दी। मुझको भली भांति डांट-डपट कर कह दिया चाय पिऊं और घर आकर उनकी लड़की के साथ प्रेमपूर्वक रहूं।"

"यह तो बहुत अच्छी सीख दी है पिता जी ने।"

"तुम वहां गई क्यों थीं?"

"मैंने बताया तो कि मैं नहीं गई थी। इसपर भी कल आपसे पूछकर प्रातःकाल जाने का विचार था। पर माता जी ने कुछ नहीं कहा? वे कह रही थीं कि वे अपने विचार आपको मिलकर बता देंगी।"

"वे कुछ नहीं बोलीं। वे कुछ कहतीं तो पिता जी से अधिक क्या कह सकती थीं।"

"वे मेरे मन की बात बतातीं।"

"और तुम्हारे मन की क्या बात है?"

"जब आपकी मां ने भी आपकी बात को पसन्द नहीं किया तो मैं भी आपका घर कम से कम एक वर्ष के लिए, छोड़ जाने का विचार कर रही थी। आज काहन

भापा की सुधा की कहानी सुनकर तो विचार आया है कि या तो आपको अपने विचार में सुधार करना पड़ेगा अन्यथा मैं अपना पृथक् घर बना लूंगी।"

"ओह ! तुम तो मेरे बिना एक रात भी रह सकना असम्भव कहा करती थीं ?"

"जी। जब मरकर पृथक् होना है तो जीवित ही पृथक् होना ठीक नहीं होगा क्या ? आज आपको बड़ी मां कह रही थीं कि न जाने आजकल लड़कियों को क्या हो गया है कि अपने-आप अपने सौभाग्य को धक्के दे-देकर घर से निकालती रहती हैं।

"वे अपनी कथा बता रही थीं। उनका विवाह बारह वर्ष की आयु में हुआ था और शिव का सोलह वर्ष की आयु में हुआ। आठ बच्चे पैदा कर भी वे हट्टी-कट्टी बैठी हैं। प्रत्येक बच्चे के पैदा होने के समय उनको और आपके नाना को अत्यन्त प्रसन्नता होती थी और भगवान भी अवश्य प्रसन्न होता होगा। प्रत्येक सन्तान के बाद हमारे कारोबार में उन्नति होती थी। भगवान जिसको भी यहां भेजता है उसका भाग्य भी साथ भेजता है।"

"यह सब अज्ञानता के लक्षण हैं। न कोई भगवान है, न वह किसीको यहां भेजता है। अनेकों परिवार बच्चे अधिक हो जाने से भूखे मरते देखे गए हैं। धोखाधड़ी लाला जी को खूब आती रही होगी और गरीब किसानों का धन लूटने में सफल हो गए प्रतीत होते हैं। भोले-भाले किसानों के परिश्रम का धन लूट लिया और नाम लगा दिया बच्चों के भाग्य का।"

"खैर, इससे मेरा क्या सम्बन्ध है। मैं आपको कह देती हूं कि मैं सुधा-सी मौत मरने के लिए तैयार नहीं।"

"तो ठीक है। अब सो जाओ। इस विषय पर कल बात करेंगे।"

अगले दिन राजेश्वरी की सास काहन के क्वार्टर पर गई। मुहल्ले और सम्बन्धियों की स्त्रियां वहां शोक प्रकट करने जा रही थीं। यह रात ही निश्चय हो गया था कि वहां ही बैठेंगी। इस दिन राजेश्वरी वहां नहीं गई। वह स्कूल गई थी।

स्कूल से वह जहांगीर रोड पर काहन के क्वार्टर में गई थीं। उसका विचार था कि अपनी सास को लेकर घर आ जाएगी।

भूषण कालेज से आया तो घर पर नौकर के अतिरिक्त कोई नहीं था। वह आज

मन में अपने और घर के अन्य प्राणियों में मतभेद पर ही विचार करता हुआ चला आ रहा था।

वह विचार कर रहा था कि यदि उसकी पत्नी को बड़ी मां की भांति आठ-दस बच्चे पैदा करने हैं तो वह नौकरी नहीं कर सकेगी। यदि नौकरी नहीं कर सकेगी तो घर की आय कम हो जाएगी। खर्चा बढ़ जाएगा। ऐसी अवस्था में उसकी मां को उसके बच्चों के पालन-पोषण का व्यय अपने ऊपर लेना चाहिए।

घर पर पहुंच घर को जन-शून्य देख वह नौकर से चाय मंगवा पीने लगा। अभी चाय पी ही रहा था कि प्रतापकृष्ण, उसका पिता, घर पर आ गया।

"कहां से आ रहे हैं पिता जी ?"

"काहन की ओर गया था। उसने कार्यालय से छुट्टी ले रखी है और ऐसे समय में उसके पास बैठने के लिए घर के एक-दो प्राणी रहने चाहिए। इस मुसीबत के समय यह आवश्यक होता है। मैं दुकान से आधे दिन की छुट्टी लेकर वहां चला गया था। दिन के पहले समय राम गया हुआ था। अब शिव वहां पहुंचा तो मैं चला आया हूं।"

"तो दूसरे लोग भी जा रहे हैं ?"

"हां। मेरे बैठे-बैठे लक्ष्मीदेवी के घर वाला गणेशदत्त और शिव का लड़का बृजमोहन बैठे रहे थे। अब मेरे आते समय शिव का दामाद मोहन और उसके माता-पिता भी पहुंच गए थे।"

"तो मुझको भी जाना चाहिए ?"

"मैं समझता था कि तुम सुबह गए हो। घर से तो शीघ्र ही चले गए थे।"

"वह तो मुझको अपने लेख के एक परीक्षक श्री चतुर्भुज चटर्जी से मिलने जाना था।"

"हां, तो क्या हुआ है तुम्हारे लेख का ?"

"तीनों परीक्षकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है मेरे लेख की। मुझको विश्वास दिलाया गया है कि मुझको डॉक्टरेट मिल जाएगी।"

"मेरा विचार है, चाय पीकर अभी चले जाओ। तुमको जाना चाहिए। सुख-दुःख सबके साथ लगा हुआ है। परिवार में परस्पर सहानुभूति तो बनी ही रहनी चाहिए।"

भूषण काहन के क्वार्टर पर गया तो उसकी पत्नी और मां वहां से चली गई थीं।

१०

रूपकृष्ण को हौज़ काज़ी वाली ज़मीन मिल गई। वह नीलाम रद्द नहीं हो सका। भूमि की मालिक फिरोज़ा बेगम की उजरदारी स्वीकार नहीं हुई और नीलाम नियमित ठहराया गया।

रूपकृष्ण ने इसपर मकान बनवाने का नक्शा तैयार करवाया, म्यूनिसिपल कमेटी से पास करवाया और मकान बनवाना आरम्भ कर दिया।

काहन का विवाह राम की सबसे छोटी साली से हो गया। राम की पत्नी रोहिणी अति सुन्दर स्त्री थी और उसकी बहिन उससे कम सुन्दर नहीं थी।

काहन को इस विवाह में कुछ अधिक दहेज तो मिला नहीं। हां, पत्नी सुन्दर, चुलबुली और चतुर मिल गई। विवाह का निश्चय तो सुधा के तेरहवें से पहले ही हो गया था, परन्तु सगाई तेहरवें के पांच दिन उपरान्त और विवाह एक मास के मध्य में हो गया।

जहां सम्बन्धी और मित्रगण काहनचन्द से उसकी पत्नी के देहावसान पर शोक प्रकट कर रहे थे वहां दो ही दिन में बधाइयां देने के लिए आने लगे।

भूषण ने तो जब सुना कि रूप की मौसी से ही काहन का विवाह हो रहा है, तो उसके विस्मय का ठिकाना न रहा। तेरहवें दिन का इकट्ठा हो रहा था। क्वार्टर में भीतर स्त्रियां बैठी थीं। सुधा के माता-पिता की ओर से स्त्रियां शोक प्रकट करने आई हुई थीं और रोना-धोना कर रही थीं। उसमें से कुछ तो काहन की भावी पत्नी को गाली भी दे रही थीं। परन्तु बाहर पुरुषों में काहन के नवीन विवाह की चर्चा चल रही थी।

भूषण ने मामा रामकुमार से पूछ लिया, "मामा जी! आपसे पूछकर यह विवाह हो रहा है?"

"हां। यदि यह कहा जाए कि मेरे ही सुझाव पर हो रहा है तो अधिक ठीक होगा।"

"आपको तो विदित होना चाहिए कि काहन अपनी पत्नी का हत्यारा है।"

"कौन किसीकी हत्या कर सकता है बिना ईश्वर की इच्छा के! सब अपने-अपने कर्मफल का भोग करते हैं।"

भूषण इस कर्मफल की मीमांसा को समझ नहीं सकता था। यदि कोई पैदा

हो तो कर्मफल से। यदि कोई मरे तो भाग्य से। विवाह हो तो भाग्य से और न हो तो भाग्य से। वह मन में विचार करता था कि इन सब रूढ़िवादियों को सन्मार्ग दिखाने के लिए कम्यूनिज़्म ही समर्थ होगा।

रूप काहन के पास बैठा था। काहन उससे उसकी मौसी की रूपरेखा के विषय में पूछ रहा था। रूप कह रहा था, "काहन, ईश्वर का धन्यवाद करो कि सुधा मरी है। एक झगड़ालू, कुरूप और मूर्ख स्त्री के स्थान पर अति सुन्दर, चतुर और बुद्धिशील पत्नी आ रही है। किसी पूर्वजन्म के कर्म उदय हो रहे हैं।"

"परन्तु मित्र ! सुना है कि तुम्हारी मां तो तुम्हारे पिता को लूट-लूट अपने पिता का घर भरती रही है।"

रूप ने मुस्कराते हुए कह दिया, "क्या तुम यह कल्पना कर सकते हो कि बिना पति की स्वीकृति से कोई भी स्त्री कुछ घर से बाहर ले जा सकती है? मां तो अब भी छोटे भाइयों को यथाशक्ति खिलाती-पिलाती रहती है।

"मैंने एक दिन पिता जी से पूछा था, वे कहने लगे कि वे सब कुछ जानते हैं परन्तु मेरी मां इतनी सुन्दर है कि वे यह थोड़ी-बहुत चोरी उस सौन्दर्य पर न्योछावर ही समझते हैं।

"वे कहने लगे कि इससे मेरी मां प्रसन्न रहती है और वे इसमें सुख और तृप्ति अनुभव करते हैं।"

भूषण को तो पूर्ण परिवार से अरुचि हो रही थी। राम ने भूषण को अपने मन की बात कह दी, "हम परिवार में सुन्दर स्त्रियां ला-लाकर परिवार में सुन्दर बच्चे पैदा कर रहे हैं। मैं रूप के लिए भी किसी सुन्दर स्त्री की खोज में हूं।"

"कटरे में कोई न कोई मिल जाएगी।" आवेश में भूषण ने कह दिया।

राम ने ध्यान से उसकी ओर देखा और उपरान्त मुस्कराते हुए कहा, "मालूम होता है, बरखुरदार भूषण, कटरे की सैर करते रहे हो ! क्या राजेश्वरी को वहीं से ढूंढ़कर लाए हो ?"

"वह तो बैरिस्टर साहब ने नियमित रूप से विवाह कर दी है।"

"मैं तो यही जानता था। पर भूषण ! वह सुन्दर नहीं है क्या ? क्या समझते हो उसको तुम ? रूप तो वैसी ही पत्नी के लिए आग्रह कर रहा है।"

"ओह ! तो उसकी दृष्टि मेरी पत्नी पर है ?"

"नहीं प्रोफेसर साहब ! वह ऐसा लड़का नहीं। राजेश्वरी को बड़ी भाभी

समझता है और हमारे धर्मशास्त्र में बड़ी भाभी को मां के समान पदवी दी गई है।"

"पर रूप कब से धर्मशास्त्र मानने लगा है ?"

"अपनी बूआ गौरी से पढ़ता रहता है। मैं समझता हूं तुम भी गौरी मौसी से मिला करो। तुम्हारा भी कुछ तो कल्याण हो जाएगा।"

"तो वे देवी हैं।"

"देवी-लेवी की बात तो मैं जानता नहीं। हां, बात वह ऐसे ढंग से करती है कि स्वीकार करनी ही पड़ती है। देखो, उसने और उसके पति ने लाला जी से मिले धन का एक ट्रस्ट बना दिया है और उससे एक विधवा आश्रम खोल दिया है। उस आश्रम पर एक हज़ार रुपया प्रतिमास का व्यय हो रहा है।

"गौरी बहिन ने तुम्हारी मां से कहकर, उसके रुपये का भी एक ट्रस्ट बनवा दिया है। उसमें लड़कियों के विवाह पर रुपये की सहायता दी जाया करेगी। मेरी लड़की कृपा की सगाई की चर्चा उसी ट्रस्ट द्वारा हो रही है।"

"अब एक और ट्रस्ट बनने का विचार हो रहा है। मां, मेरा तात्पर्य है तुम्हारी बड़ी मां और बहिन सदारानी मिलकर एक ट्रस्ट निर्माण कर रही हैं, जिससे परिवार के मेधावी बालकों की शिक्षा में सहायता मिला करेगी।"

"यह तो बहुत बढ़िया काम है।"

"और गौरी बहिन शिव भैया से कह रही है कि वे भी पांच-छः लाख का दान कर एक ट्रस्ट बना दें जिससे परिवार के निर्धन सदस्यों की बीमारी में चिकित्सा का प्रबन्ध हो सके।"

"यह तो सब ठीक है। मैं तो गौरी मौसी को सर्वथा अनपढ़ मानता था, परन्तु वह तो पढ़े-लिखों के कान भी कतर रही है। हां, एक बात यदि वह कर देती तो दिल्ली-भर में उनका और बड़े लाला जी का नाम रोशन हो जाता।"

"क्या कर देती ?"

"यही कि इस दान-दक्षिणा का प्रभाव-क्षेत्र परिवार से बाहर सब पात्रों तक फैल जाए।"

"तो ऐसा करो। तुम स्वयं मिलकर यह शुभ सम्मति उनको दे दो। परन्तु मैं समझता हूं कि वह मानेगी नहीं।"

"क्यों ?"

"मिलकर स्वयं बात कर लो।"

भूषण को कुछ ऐसा समझ आया कि परिवार में गौरी ही सब गड़बड़ मचा रही है। इसमें वह गौरी के अनपढ़ होने को भी कारण मानता था। दूसरी ओर रूप काहन को बता रहा था, "मेरा प्रेम तो एक लड़की से है। परन्तु कई कारणों से मेरा उससे विवाह नहीं हो रहा। इससे मैं विवाह के लिए तत्पर नहीं होता। जब तक कोई अन्य लड़की उससे सुन्दर न मिल जाए, विवाह करने में रुचि नहीं होती।"

"तो उससे विवाह क्यों नहीं हो रहा?"

"कई कारण हैं। सबसे बड़ा कारण है कि उस लड़की के माता-पिता बहुत लोभी हैं। मैं उनका लोभ पूर्ण नहीं कर सकता।"

"तो लड़की को भगा ले जाओ।"

"वह अभी अल्पवयस्क है।"

रूपकृष्ण ने विवाह न हो सकने का वास्तविक कारण नहीं बताया। वास्तव में फिरोजा बेगम के मुकदमा हार जाने के उपरान्त किशनो कई बार रूप से मिलने आ चुकी थी और सुमित्रा से विवाह करने के लिए कह चुकी थी। एक-दो बार बनवारीलाल भी आया था। पहले तो रूप टालमटोल करता रहा, परन्तु उपरान्त उसने स्पष्ट कह दिया, "जब से मैंने सुना है कि पिता जी का सम्बन्ध किशनो से रहा है, मैंने विवाह न करने का निश्चय किया हुआ है।"

"परन्तु तुम तो कहते थे कि तुमको अपने पिता के कथन पर विश्वास नहीं?"

"हां, विश्वास तो नहीं होता। फिर भी सन्देह तो होता है। कुछ भी हो, मेरा चित्त अब सुमित्रा से विवाह के लिए नहीं करता।"

बात समाप्त हो गई। काहन के विवाह के कुछ दिन पश्चात् रूपकृष्ण हौज काजी में मकान के बनवाने का निरीक्षण कर रहा था कि बनवारीलाल घबड़ाया हुआ उसके पास आया और पूछने लगा, "रूप! सुमित्रा से कब मिले थे?"

"बहुत देरी हुई है। जहां तक मुझको स्मरण है कि फिरोजा बेगम की उजरदारी के पश्चात् तो मैं आपके घर की ओर भी नहीं गया। क्यों क्या हुआ है?"

"वह लापता है। कुछ दिन से वह मां से तुम्हारे विषय में पूछती रही थी। परसों भी बात हुई थी। किशनो ने उससे पूछा था कि क्यों पूछ रही है? इसपर उसने पूछा था कि तुमसे विवाह की बात टूट गई है क्या?

" किशनो ने उत्तर दिया कि तुम अब विवाह करना नहीं चाहते।

" 'क्यों ?' उसने पूछ लिया।

" किशनो ने वास्तविक बातें बताने से छुटकारा पाने के लिए कह दिया, 'उसको कोई तुमसे अच्छी लड़की का सम्बन्ध मिल रहा है।'

" इसपर वह कुछ उदास दिखाई दी थी। मैं उसके लिए कोई उपयुक्त वर की खोज में था। परन्तु पिछली रात वह अपने कमरे में सोने गई थी और आज प्रातः वहां नहीं थी। रात को वह बिस्तर में सोई तो प्रतीत होती है, परन्तु मैं जब प्रातः-काल उठा तो उसके कमरे का दरवाज़ा और मकान का बाहरी द्वार खुले थे।

" मुझको सन्देह था कि वह भागकर तुम्हारे पास चली गई है।"

" नहीं भापा। वह मेरे पास नहीं आई। अगर आती तो मैं उसको अपनी बहिनों के पास रखता और उसको पूर्ण परिस्थिति से अवगत कर देता।

" परन्तु भापा ! उसका मेल किसी बाहरी आदमी से था क्या ? "

"पिछले एक-दो मास से मैंने अपना कारोबार करौलबाग में आरम्भ कर रखा है। मैं वहां देरी तक रहता था और किशनो भी उसकी देखभाल के लिए वहां आती-जाती रहती थी। वह वहां से जल्द लौट आती थी। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उसकी अनुपस्थिति में कोई उससे सम्बन्ध बना उड़ा ले गया है।"

"भापा ! एक बात तो हुई है। तुम उसके विवाह पर खर्च करने से बच गए हो।"

"पर किशनो को इसका बहुत शोक है।"

"शोक तो मुझको भी है, परन्तु मेरी एक बूआ है और उसका कथन है कि भाग्य एवं काल मनुष्य को खींचता हुआ मृत्यु की ओर ले जाता है। काल खींचता है और भाग्य मार्ग को रंजित अथवा अरंजित करता रहता है।"

"बकवास है। देखो, मैं यह समझा हूं कि यदि मैं उसका विवाह तुम्हारे पिता से मिलने के पूर्व कर देता तो ठीक था। किशनो ने भूल यह की कि वह एक रंडी की लड़की को एक भले परिवार की लड़की की भांति विवाहिता चाहती थी। मैं उसके लिए तुम्हारे माता-पिता को देखने चल पड़ा। यह तो अब समझ आया है कि वह तुमसे विवाह न हो सकने की बात सुन निराश हो किसी अन्य के साथ भाग गई है। एक बार यह विवाह हो जाता तो फिर यह घटना न घटती।"

"परन्तु भापा ! तुमने जान-बूझकर तो कुछ किया नहीं था। तुम तो उसके

भले का ही विचार कर रहे थे। हुआ वही जो उसके भाग्य में था। कौन जाने यह सब उसके भले के लिए ही हुआ है।"

बनवारीलाल सिर लटकाए चला गया। बनवारीलाल का मन कहता था कि रूपकृष्ण सत्य बात नहीं बता रहा। जिस शान्ति और अलिप्तता से उसने बात की थी और इस घटना की मनोवैज्ञानिक विवेचना करनी आरम्भ कर दी थी, इससे बनवारीलाल का विचार था कि रूप को उससे अधिक ज्ञात है जितना वह प्रकट कर रहा है। इसपर भी कुछ निश्चयात्मक बात नहीं जान सका।

उस दिन रूप मकान से फूफा गोवर्धनलाल के मकान पर जा पहुंचा। उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा जब उसने गौरी से राजेश्वरी को घुल-मिलकर बातें करते देखा। आज वह कई दिनों के उपरान्त अपने फूफा से मिलने आया था। वह अपने कारोबार में लिप्त हो रहा था। अजमेरी गेट के बाहर उसने ग्रांड्य रोड पर एक अन्य टूटा हुआ मकान मोल ले लिया था। उसकी रजिस्ट्री करवाने, टूटे के स्थान पर नया बनवाने की स्वीकृति में वह भाग-दौड़ कर रहा था। इसमें उसको बूआ तथा फूफा से मिलने का अवकाश नहीं मिला था। आज वह सायंकाल की चाय के समय पर पहुंचा था। उसका विचार था कि फूफा जी भी वहां मिलेंगे, परन्तु वे वहां नहीं थे। गौरी ने रूप को आया देखा तो कह दिया, "रूप! बैठो। तुम्हारे फूफा आने ही वाले हैं।" वह बैठक में एक ओर बैठ गया। बैठक के दूसरे कोने में बैठी गौरी राजेश्वरी से बातें कर रही थी। रूप मन में विस्मय कर रहा था कि वह वहां किस अर्थ से आई है और क्या फुस-फुस बातें हो रही हैं।

अभी उनका वार्तालाप समाप्त नहीं हुआ था कि गोवर्धनलाल आ पहुंचा। "कहां गए थे आप?"

"हमारा विधवा आश्रम वाले मकान को मोल ले लेने का निश्चय हुआ था। मैं उसके मालिक से बातचीत करने गया था। मकान का मूल्य तो तय हो गया है परन्तु उसका एक लड़का है और मकान पुरखों की सम्पत्ति में से है। इस कारण कुछ झगड़े वाली बात है। अब उसके लड़के को मिलकर दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर कराने का काम रह गया है।"

"कितने में सौदा हुआ है?"

"दस हज़ार रुपये में।"

"तो फिर इसको नया बनवाइएगा?"

"अभी निकट भविष्य में तो नहीं।"

"मैंने एक मकान आडर्थ रोड पर बनवाने का निश्चय कर लिया है।"

"वह भी बेचने के लिए ही ?"

"जी।"

"तुम्हारा यह हौज़काज़ी वाला मकान तो पूरा हो रहा है ?"

"जी ! उसके ग्राहक अभी आने लगे हैं।"

"भाड़े पर लेने वाले अथवा खरीदने वाले ?"

"दोनों प्रकार के ग्राहक हैं।"

"तो क्या विचार है ?"

"किराया तो लगभग दस-बारह प्रतिशत व्याज देगा। मकान बेचने में तो एकदम बीस से पचीस प्रतिशत लाभ है।"

"तो क्या विचार है ?"

"अभी निर्णय नहीं किया।"

"मेरा विचार है, मकान बेच दो। इसको व्यवसाय के रूप में करो। मकान बनवाकर बेचते जाओ। देखो, मैं तुमको एक बात बताता हूं। भूषण कल मिला था और बता रहा था कि यूरोप में भयंकर युद्ध होने वाला है। उस युद्ध में इंगलैंड भाग लेगा तथा इंगलैण्ड हारेगा, इंगलैण्ड का विरोधी पक्ष विजयी होगा। तब उसका विचार है हिन्दुस्तान स्वतन्त्र होगा। हिन्दुस्तान अपने पांव पर खड़ा नहीं हो सकेगा और इस जगह रूस जैसी व्यवस्था कायम होगी। उस समय मकान इत्यादि सब सम्पत्ति सरकार अपने अधीन कर लेगी। वह कह रहा था कि इस अवस्था में बहुत लम्बी-लम्बी जायदादें रह नहीं सकेंगी।

"इसलिए मैं कहता हूं नकद की बहुत महिमा होगी। नकद भी नोटों के रूप में नहीं, प्रत्युत सोने के रूप में।"

रूपकृष्ण को बात समझ आ रही थी। इतना तो वह भी समझ गया था कि रूस जैसी अर्थ-व्यवस्था में निजी सम्पत्ति नहीं रखी जा सकेगी और उसको फूफा के सुझाव का अर्थ यह समझ आया था कि सोने के रूप में धन चोरी से रखना होगा। उसे फूफा जैसे धर्मात्मा आदमी के मुख से यह बात सुन विस्मय हुआ था। इससे उसने पूछ लिया, "तो यह विधि भी भूषण ने बताई है ?"

"कौन-सी विधि ?"

"यह सोने के रूप में सम्पत्ति रखने की ?"

"नहीं। यह मेरी सम्मति है।"

"पर फूफा जी ! यह तो देश के साथ चोरी हो जाएगी।"

"देश के साथ नहीं रूप ! हां, सरकार के साथ अवश्य चोरी हो जाएगी। सरकार और देश में अन्तर समझते हो ?"

"परन्तु सरकार ही तो देश का भला-बुरा करने वाली होगी ?"

"देखो ! कुछ तो रूस के विषय में मैंने स्वयं समाचारपत्रों में पढ़ा है, कुछ भूषण ने बताया है। यदि वैसी व्यवस्था यहां हुई तो वह सरकार देश का प्रतीक नहीं होगी।

"देश का अर्थ है देश के रहने वाले। यदि स्वतन्त्र रूप से राय ली जाए तो कोई भी व्यक्ति, जो बुद्धि रखता है, अपने को पूर्ण रूप से सरकार के आश्रित कर देना नहीं चाहेगा। यह मानव-प्रकृति के विरुद्ध है। कुछ लोग जो सर्वथा बुद्धिहीन और अशक्त होंगे, वे ही इस प्रकार की व्यवस्था को पसन्द करेंगे। इन मूर्खों का संगठन वे बनाएंगे जो इस प्रकार की व्यवस्था से राज्याधिकार पाने की आशा रखेंगे। ये सम्भवतः राज्याधिकारी उन मूर्खों के संगठन के बल से बहुसंख्यक देशवासियों को अपना दास बनाकर सुख भोग करेंगे।"

"यह तो दास बनाने वालों के विचार करने की बात है कि वे कितना सरकार का अधिकार मानते हैं। उतना उसको देना ही चाहिए। परन्तु उनके अतिरिक्त अपने लिए सुरक्षित करने का अधिकार उनका है। यही मैं तुमको करने के लिए कह रहा हूं।"

"परन्तु। कितना सरकार का है और कितना एक व्यक्ति का है, यही तो विवादास्पद बात है।"

"इसका निर्णय किया जा सकता है। यदि धींगा-मुश्ती से नहीं, अपितु विचार विनिमय से करेंगे, तो देश के विद्वान लोग जो निश्चय करेंगे वह सबको मान्य होना चाहिए। परन्तु यदि सरकारी अधिकारी धोखाधड़ी से अथवा सेना से या देश के गुंडों के बल पर कोई बात मनवानी चाहेंगे तो मैं समझता हूं कि अन्य व्यक्तियों को भी अधिकार है कि चोरी करें अथवा अपने जैसे भले लोगों का संगठन बना अपने विचार से अपने अधिकार की रक्षा करें। शठे शाठ्यं समाचरेत।"

"परन्तु सरकार के विरोध में यह हो सकेगा क्या ?"

"नहीं हो सकेगा तो इस कारण कि भले लोग मूर्खों से बढ़कर मूर्ख होंगे। यदि लोग आत्मविश्वास और ईश्वर में आस्था का परित्याग कर बैठेंगे तो इस पृथ्वी के भगवान उनको कष्ट देंगे ही। पाठशालाओं और विद्यालयों में नास्तिकता की शिक्षा से व्यक्ति में भीरुता एवं विवेकहीनता आ रही है। ये लोग तो उस शासनपद्धति का विरोध कर नहीं सकेंगे। हृदय से उस सरकार की नीति को अन्याय एवं अत्याचारपूर्ण मानते हुए भी उनको उसका विरोध और प्रतिकार करने का साहस नहीं होगा। इसपर भी कुछ तो श्रेष्ठ जन सदैव रहते हैं और रहेंगे। उनको, जब वे प्रत्यक्ष रूप में किसी अन्याय का विरोध न कर सकें, तो चोरी करने का अधिकार है।"

"परन्तु भापा! कितना सरकार का अधिकार है जो स्वेच्छा से सरकार को दे ही देना चाहिए।"

"मैं तो इस समस्या का हल इस प्रकार समझता हूं। प्राकृतिक सम्पत्ति तो परमात्मा की देन है। भूमि, भूमि में उत्पन्न होने वाले वन, वनस्पति, भूमि के गर्भ में खनिज पदार्थ इत्यादि एवं मां के गर्भ से उत्पन्न होने वाले मनुष्य किसी भी मानव-प्रयास अथवा सरकारी प्रयास का फल नहीं। ये मनुष्य और प्राणी-मात्र तो ईश्वर की देन हैं। इनको प्राप्त कर और इनका प्रयोग करने के योग्य बनाने में मानव-परिश्रम ही सबल है। प्राकृतिक सम्पदा और मानव-पराक्रम किसी भी सरकार ने न कभी उत्पन्न किया है और न कर सकती है।

"अतः परिश्रम द्वारा प्राकृतिक साधनों से उपलब्ध पदार्थ परिश्रम करने वाले के हैं। सरकार तो यह देखने के लिए निर्मित हुई है कि वह देखे कि एक के परिश्रम का फल कोई अनधिकारी न ले जाए। ऐसा करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति अपने परिश्रम के फल में से एक निश्चित भाग सरकार को देता है। यह भाग कितना हो? इसका निश्चय समय-समय की आवश्यकतानुसार होता है। कुछ भी परिश्रम का मुख्य फल परिश्रम करने वाले का है। व्यवस्था रखने वाले का भाग परिश्रम करने वाले से अधिक नहीं हो सकता। यदि शासन मुख्य भाग ले जाएगा तो वह बन्दर-बांट कहलाएगा।"

"परन्तु सरकार परिश्रम का अधिकांश लेकर क्या करेगी? क्या यह विचारणीय नहीं है? यदि शासन अपने कार्यों का विस्तार कर दे, यथा शिक्षा, चिकित्सा, सड़कों का निर्माण, विद्युत्, पानी इत्यादि तब तो सरकार का अंश

बढ़ाया जा सकता है। यदि मनुष्य की सब आवश्यकताएं सरकार ही पूरी कर दे, यथा मकान, भोजन, वस्त्र, यौन-तृप्ति इत्यादि का सब प्रबन्ध सरकार कर दे तो फिर शत-प्रतिशत की स्वामी सरकार क्यों नहीं हो सकती ?"

"तुमसे अधिक अधिकार और योग्यता से इस सरकार की सहायता भूषण ने की थी। मैंने पूछा, 'काहन की पत्नी को देखा है ? कैसी लगी है वह तुमको···'

"उसका कथन था, 'बहुत सुन्दर है।'

"'उसकी तुलना में राजेश्वरी कैसी है ?' मेरा दूसरा प्रश्न था।

"बोला, 'फीकी-फीकी है।'

"'तो वह तुमको मिलनी चाहिए अथवा काहन को ?'

"वह बोला, 'काहन को तो नहीं मिलनी चाहिए। वह मुझसे कम पढ़ा-लिखा है, कम सुन्दर है और कम आय करने वाला व्यक्ति है।'

"'तो ऐसा करो।' मैंने कह दिया, 'उसकी पत्नी से बात करके देखो, वह क्या चाहती है ?'

"वह हंसकर बताने लगा, 'कर चुका हूं और मुख पर गरमागरम चपत खा आया हूं।'

"'तो इस विषय में सरकार की सहायता से उसको पाना चाहोगे क्या ?

"'यदि यह अधिकार तुमने सरकार को दिया तो वह किसी मंत्री की रखैल बना ली जाएगी और तुम तथा काहन मुख देखते रह जाओगे, साथ ही राम की साली के साथ भारी अन्याय हो जाएगा।'

"'मैं समझता हूं कि वह अति प्रसन्न होगी, काहन जैसे मूर्ख से छुटकारा पा किसी उच्च राज्याधिकारी की पत्नी बन जाएगी।'

"'यह तो उसने तुम्हारे मुख पर चपत लगाकर सिद्ध कर दिया कि वह अपने पतिव्रत धर्म को तुम्हारे रूप, बुद्धि और धन से अधिक मूल्यवान समझती है।'

"वह मूर्ख है। उसके माता-पिता के घर के संस्कारों ने उसकी विचारशक्ति को मलिन कर रखा है।

"मैंने उससे अधिक बात नहीं की। कारण यह है कि दुर्गा की विचारशक्ति मलिन है अथवा भूषण की, एक विवादास्पद बात है। इस विषय पर मैंने उसको शिक्षा देने का यत्न नहीं किया। मैंने लाभ भी नहीं समझा। वह मेरी बात को मानता भी नहीं।"

राजेश्वरी फूफा जी तथा रूप को नमस्कार कर गई तो चाय की व्यवस्था होने लगी।

११

राजेश्वरी के गौरी से मिलने आने का कारण उस समय ज्ञात नहीं हुआ। रूपकृष्ण ने पूछा भी नहीं। इसपर भी वह विस्मय करता रहा कि क्या काम हो सकता है राजेश्वरी का फूफी से। उसने केवल यह पूछा था, "राजेश्वरी भाभी पहले भी आया करती थी?"

"कुछ दिनों से लगभग नित्य ही आ रही है।"

"बूआ! हमारे घर में यह और भूषण अल्ट्रा मॉडर्न (अति अर्वाचीन) विचार के प्राणी हैं। कुछ इनको भी शिक्षा दिया करो।"

"तुम भी तो अति पतित प्रकृति के व्यक्ति थे!"

"बूआ! दोनों में अन्तर है। मैं जुआरी था और बस। जुआ खेलना तो बहुत ही प्राचीन व्यवहार है। वह अच्छा है या बुरा है, इसको मैं नहीं जानता था। मुझको यह विदित था कि धर्मपुत्र युधिष्ठिर न केवल जुआ खेलते थे, अपितु जुए खेलने का ढंग सिखाने का कार्य भी करते थे।"

"इसपर भी यह अच्छा कार्य नहीं था और युधिष्ठिर को जुआ खेलने का फल मिला था।"

"यह तो ठीक है। इसी कारण मैंने जुआ खेलना त्याग दिया है। परन्तु अर्वाचीन मस्तिष्क की अवस्था तो असाध्य रोग है। यह छूटेगा नहीं।"

"तो इसका फल भी मिलेगा। प्रत्येक बात अपने समय पर फल लाती है। इस अर्वाचीन के फल को परिपक्व होने में एक लम्बा समय लगेगा।"

इसके अनन्तर रूपकृष्ण पूछ नहीं सका और गौरी ने बताया नहीं। परन्तु जब कोई वस्तु गली-सड़ी हो तो वह चिरकाल तक छुपाकर रखी नहीं जा सकती। उक्त घटना को हुए तीन मास से ऊपर व्यतीत हो चुके थे। राजेश्वरी अब सातवें मास में जा रही थी और वह अपनी मां के घर में प्रसव के हेतु गई हुई थीं। यह पूर्व से भिन्न बात थी। पूर्व दो बच्चों के होने के समय वह अपनी सास की देख-रेख में रही थी। इस बार वह प्रसव से तीन मास पूर्व ही अपने पिता की कोठी में

जाकर रहने लगी थी।

रूप को इसका ज्ञान तब हुआ जब वह अपने विवाह का निमंत्रण देने अपने सम्बन्धियों के पास जा रहा था। वह विष्णी बूआ और प्रतापकृष्ण को नपरिवार निमंत्रण देने पहुंचा तो दो बातों का पता चला। एक तो यह कि राजेश्वरी अपनी मां के घर प्रसव करने गई हुई थी। और दूसरे, भूषण अब घर नहीं आता। वह भी कदाचित् अपनी पत्नी के साथ वहां ही रहता है।

"कदाचित् का क्या अर्थ, बूआ ?"

"यह कि हमको ठीक-ठीक विदित नहीं। हमने सुना है कि वह कनाट प्लेस में एक भाड़े के मकान में रहता है और हमको वह यह कहता रहा है कि वह राजपुरा रोड पर बैरिस्टर साहब के मकान पर रहता है। मैं पिछले सप्ताह राजेश्वरी से मिलने गई थी और मैंने भूषण के विषय में पूछा था। वह आंखों में आंसू भरती हुई चुप रही थी। उसने किसी प्रकार का उत्तर नहीं दिया।"

रूप ने कह दिया, "तो भाभी को निमंत्रण देने वहां जाऊं ?"

"कहो तो मैं भी जा सकती हूं। परन्तु मेरा विचार है कि तुम ही जाओ और यदि वह भूषण का ठीक-ठीक पता बता दे तो उसको भी आमंत्रित करने वहां चले जाओ और फिर पति-पत्नी में सुलह करवाने का यत्न कर दो।"

रूपकृष्ण बात इतनी बिगड़ जाएगी, अनुमान नहीं लगा सका था। वह भूषण के मस्तिष्क की बनावट में खराबी मानता था। अन्यथा एक डाक्टर की उपाधि से विभूषित व्यक्ति भला राजेश्वरी जैसी पत्नी से कैसे लड़ सकता है ?

वह राजपुरा रोड पर श्री रघुनाथसहाय की कोठी पर जा पहुंचा। वह अपने साथ बैरिस्टर साहब के लिए सपरिवार बरात में सम्मिलित होने का निमंत्रण लेकर गया था।

जब भूषण वहां पहुंचा तो बैरिस्टर साहब क्लब में जाने के लिए तैयार हो रहे थे। औपचारिक नमस्कार के उपरान्त रूपकृष्ण ने बैरिस्टर साहब के लिए निमंत्रण उन्हें दे दिया। बैरिस्टर साहब ने पढ़ा और निमंत्रण-पत्र के लिए शिवकुमार का नाम पढ़ पूछने लगा, "यह रूपकृष्ण कौन है ?"

"मैं हूं।"

"ओह ! तुम्हारा शिवकुमार से क्या सम्बन्ध है ?"

"वे मेरे ताया जी हैं।"

"सगे ?"

"जी।"

"अच्छी बात है।"

"मेरा निवेदन है कि आप अवश्य आइएगा। आपके आने से तथा मेरी बरात में सम्मिलित होने से मैं अपने को बहुत ही सम्मानित समझूंगा।"

"क्या सम्मान होगा मेरे जाने से ?"

"इसका अनुमान आप नहीं लगा सकते। मैं, मेरे पिता तथा अन्य सम्बन्धी इसको ऐसा समझते हैं। इसके अतिरिक्त मेरे ससुर आपको मेरे साथ देखकर बहुत प्रसन्न होंगे।"

"किनके घर बरात जा रही है ?"

"ला० लक्ष्मीचन्द जी मिल वाले हैं। कर्जन रोड पर बरात जाएगी। बरात चढ़ेगी मिंटो क्लब से।"

"परन्तु इतनी बड़ी मुर्गी को कैसे फांस लिया है तुमने ?"

"यह तो ईश्वर की दया से ही हो सका है। ईश्वर कैसे अपने प्रियजनों को लाभ पहुंचाता है, कह नहीं सकते। इसपर भी यह निश्चय है कि जिसपर उसके आशीर्वाद का हाथ पहुंच जाता है, वह भवसागर पार कर जाता है।"

"लक्ष्मीचन्द को मैं जानता हूं। मेरे क्लब के सदस्य हैं और मुझसे भली भांति परिचित हैं। भाई, मैं चलूंगा। कम से कम दावत का मज़ा आ जाएगा।"

रूपकृष्ण ने हाथ जोड़ नमस्ते की और कहने लगा "माता जी को भी साथ लाइएगा। राजेश्वरी भाभी को तो मैं स्वयं निमंत्रण देने आया हूं।"

राजेश्वरी का नाम सुन बैरिस्टर साहब गम्भीर हो गए, रूपकृष्ण समझ रहा था कि कुछ दाल में काला है इससे वह बैरिस्टर साहब के कथन की प्रतीक्षा करता रहा। उन्होंने विचारकर कहा, "अच्छी बात है, उससे मिल लो।"

रूपकृष्ण कोठी के चपरासी की ओर घूमा तो रघुनाथसहाय टैनिस का बल्ला घुमाते हुए मोटर की ओर चले गए।

चपरासी राजेश्वरी को बुलाकर लाया तो वह रूपकृष्ण को ड्राइंग रूम में ले गई। वहां बैठ उसने चाय-पानी के लिए पूछ लिया। रूपकृष्ण ने बताया कि वह घर से चाय पीकर ही चला है। इसपर श्रीमती तथा श्रीमान भूषणकुमार के लिए अपने विवाह का निमंत्रण देकर कहने लगा, "मैं तो स्वयं आपको आमंत्रित करने

आया हूं।"

"बहुत-बहुत बधाई है रूप जी ! आखिर आपको भी कोई मिल गई है !"

"हां भाभी। बड़ों के आशीर्वाद से मेरा भी घर बनने जा रहा है। भाभी, उनको मेरी ओर से विनम्र निवेदन कर देना कि अवश्य आएं।"

"किनको ?"

"राजकुमार के पिता को। और किसको !"

"यहां कहां हैं वे। उनके दर्शन किए आज तीन मास हो गए हैं।"

"सत्य ? तो कहां हैं वे ?"

"मैं उनकी चौकीदारी नहीं करती।"

रूपकृष्ण विस्मय में मुख देखता रह गया। उक्त वाक्य में मन की अति कटुता प्रकट होती थी। रूप ने राजेश्वरी के मुख पर देखा तो उसकी आंखें आंसुओं से भर गई थीं। उसने अपने साड़ी के आंचल से आंखों को पोंछते हुए कहा, "रूप भैया ! अब तुम समझ सकते हो कि मैं आ नहीं सकूंगी।"

"क्यों ?"

"यह निमंत्रण दोनों का है। और मैं यहां अकेली रहती हूं और नहीं जानती कि वे कहां हैं।"

"तो भाभी ! तुम तो आना। तुम यह समझ लेना कि वे कहीं विदेश गए हैं, इस कारण तुम अकेली आ रही हो।"

"तो उनको आमंत्रित करने नहीं जा रहे हो ?"

"उसको ढूंढूंगा और कहीं मिल गया तो निमंत्रण-पत्र का उल्लेख कर दूंगा कि वह यहां भाभी के पास रखा है। मैं कल कालेज पहुंच कह दूंगा। इसपर भी यदि वह नहीं आया तो यही समझ लूंगा कि वह कहीं विदेश में है। पर भाभी, तुम तो यहां हो। तुमको आना चाहिए।"

"मैं आ सकती हूं। परन्तु कहीं वे भी आ गए तो वे नाराज़ भी हो सकते हैं।"

"किससे ? तुमसे अथवा हमसे ?"

"यदि कोई नौर्मल (सामान्य) प्रकृति का व्यक्ति हो तो उसके विषय में अनुमान लगाया जा सकता है कि वह अमुक परिस्थिति में क्या करेगा और क्या नहीं करेगा। वे सामान्य आचार-विचार नहीं रखते। इससे कौन कह सकता है

कि वे कि किससे लड़ेंगे अथवा नहीं लड़ेंगे ?"

"तो भाभी, सुन लो। मैं तो अपने को सामान्य स्वभाव वाला समझता हूं। इस कारण मैं वताता हूं कि उसके झगड़े की प्रतिक्रिया मेरे मन में क्या होगी। यदि वह तुमसे झगड़ा करेगा तो उसको धक्के दे-देकर वाहर निकलवा दूंगा। और यदि मुझसे या घर वालों से झगड़ा करेगा तो उसकी वह खिल्ली उड़ाऊंगा कि वह अपने-आप ही वहां से भाग जाएगा।"

"इसपर भी रूप जी ! चित्त डरता है। मेरे लिए भाई-भाई लड़ पड़ें, कुछ अच्छी वात प्रतीत नहीं होती।"

"भाभी ! तुमको डरने की आवश्यकता नहीं। उसने एक खरावी की है और उसको उस खरावी के प्रकट होने से डरना चाहिए।"

"अच्छा, ऐसा करना। अपनी वूआ को कह देना कि वे मुझको आकर ले जाएं।"

"कह दूंगा। वे आ जाएंगी।'

रूप यही निमन्त्रण-पत्र काहन और उसकी पत्नी को भी देने गया। काहन की पत्नी रूप की मौसी थी। इससे उसका वहां आना-जाना वना था। हंसी-ठट्ठे में रूप काहन को मौसा जी के नाम से सम्वोधन किया करता था और वह इसको वेटा जी कहकर स्मरण किया करता था। अतः जव रूप उसके क्वार्टर में पहुंचा और काहन ने उसको टैक्सी से उतर क्वार्टर में आते देखा तो वाहर आ उसका स्वागत करने लगा।

"आओ रूप वेटा ! कैसे आना हुआ है ?"

"मौसा जी। आप और मौसी के आशीर्वाद की आवश्यकता पड़ गई है।"

"आशीर्वाद की ? तो कुछ साहस का काम करने जा रहे हो ?"

"हां ! विवाह करने।"

"ओह ! आओ ! आओ ! वेटा रूप !" काहन हंसता हुआ उसको भीतर ले गया। उसको क्वार्टर की वैठक में वैठाकर काहन ने अपनी पत्नी को आवाज़ दे दी। "दुर्गारानी ! वाहर तुम्हारा भांजा आया है।"

दुर्गा ने रूप की आवाज़ सुन ली थी। वह पिछले कमरे में वस्त्र वदल रही थी और स्वयं ही वाहर आने वाली थी। वह आई तो उसने रूप को नमस्कार कर पूछ

लिया, "रूप जी ! विवाह की तिथि निश्चय हो गई है क्या ?"

"हां दुर्गा जी ! उसीके सम्बन्ध में आया हूं।" रूप ने निमन्त्रण-पत्र सम्मुख रखते हुए कहा, "यह देने को ही आया हूं।"

"कल वहिन रोहिणी आई थी और कह रही थी कि तुम स्वयं आओगे।"

"दुर्गा जी ! आप तो उस दिन प्रातःकाल ही घर पर आ जाना। काहन भापा तो वरात के समय मिंटो क्लब में आ जाएंगे। तुम माता जी के साथ यहां आ सकोगी ?"

"मैं यह विचार करती हूं कि यदि हम सब घर की औरतें वहां एकत्रित हो गईं तो तुम्हारे घर में बैठने को जगह भी नहीं होगी।"

"दुर्गा मौसी ! और किसीके लिए जगह हो चाहे न हो, पर तुम्हारे लिए तो होगी। तुम मां की छोटी वहिन हो न ? तुम आना। वैसे मैंने अपने पड़ोसियों का मकान खाली करवा लिया है। आप सबके बैठने तथा सोने की भी व्यवस्था होगी। घर की औरतें वहां आएंगी और पुरुषवर्ग सीधे क्लब में आएंगे। ठीक साढ़े छः वजे वरात चढ़ेगी और सात वजे कर्जन रोड पर पहुंचेगी।"

"राजेश्वरी वहिन आएगी क्या ?"

"हां ! पर किसलिए पूछ रही हो ?"

"वैसे ही। भूषण ने उससे दगा किया है न ?"

"क्या दगा किया है ?"

"तो तुमको ज्ञात नहीं ?"

"वस इतना ही विदित है कि वह तीन मास से घर नहीं गया।"

"उसने अपना नया विवाह कर लिया है।"

"अच्छा ! कहां रहता है वह ?"

"कनाट सरकस में, फायर ब्रिगेड के सामने एक फ्लैट पर रहता है।"

"क्या नम्बर है मकान का ?"

"११०/६ है।"

"तो आपसे वह मिलता रहता है ?"

"यहां तो वह आ नहीं सकता। हां, इनसे वह मिलता रहता है। उसकी नवीन पत्नी तो यहां आना चाहती है, परन्तु इन्होंने उसको कभी निमन्त्रण नहीं दिया। वे प्रायः सायंकाल कनाट प्लेस के पार्क में घूमते मिल जाते हैं।"

को भी आमन्त्रित करने के लिए जाना चाहता हूं। हां ! देखो, वह आता है या नहीं।"

"तो उसकी नवीन पत्नी को भी निमन्त्रण दोगे ?"

"यदि विधिवत् विवाह हो गया है तो देना ही पड़ेगा।"

"विधिवत् का क्या अर्थ ?"

"हिन्दू रीति से अथवा कचहरी में जाकर।"

इसपर काहन ने कह दिया, "हिन्दू रीति-रिवाज से तो हुआ नहीं। घर में किसीको भी बुलाया नहीं गया और कोर्ट में हो सकता नहीं। पहली पत्नी के रहते तो उस विधि से विवाह हो सकता नहीं।"

"तब तो समस्या विकट है। इसपर भी मैं उससे मिलने जा रहा हूं।"

१२

रूपकृष्ण भूषण के मकान का नम्बर ढूंढ़ता हुआ वहां पहुंचा तो वह अपनी पत्नी के साथ मकान से उतरता दिखाई पड़ गया। वह भूषण की पत्नी को देख स्तब्ध खड़ा रह गया। भूषण की पत्नी किशनो की लड़की सुमित्रा थी। सुमित्रा ने भी रूप को सीढ़ियों के नीचे खड़े देखा तो ठिठककर खड़ी रह गई। भूषण आगे-आगे उतर रहा था। वह उतरता चला आया। जब तक वह सीढ़ियां उतर भूमि पर पहुंचा, रूप अपने-आपको सतर्क कर चुका था।

"भूषण भापा ! मैं तुमसे मिलने आया हूं परन्तु···।"

सुमित्रा अभी भी दीवार का आश्रय लिए खड़ी थी। इस समय तक भूषण को भी ज्ञान हो गया था कि उसकी पत्नी उसके साथ नहीं, पीछे ही रह गई है। इस समय दोनों सीढ़ियों के ऊपर की ओर जहां सुमित्रा खड़ी थी, देख रहे थे, "सुमित्रा ! आओ न !" भूषण ने आवाज़ दे दी।

सुमित्रा को भी विदित हो गया था कि रूप और उसका पति परस्पर परिचित हैं। इस कारण उसने वहीं सीढ़ियों में बैठते हुए कहा, "मेरी तबीयत ठीक नहीं। मैं आज नहीं आऊंगी।"

भूषण सीढ़ियों पर वापस चढ़ गया। रूप उसके पीछे-पीछे था। दोनों सुमित्रा के समीप जाकर खड़े हुए तो भूषण ने सुमित्रा का परिचय करा दिया, "रूप ! यह

मेरी दूसरी पत्नी सुमित्रादेवी है।"

"ओह ! ठीक है। समझ गया। कुछ कष्ट है सुमित्रा ? यहां क्यों बैठ गई हो ?"

भूषण को कुछ समझ आया कि रूप सुमित्रा से जान-पहचान रखता है। सुमित्रा का मुख पीतवर्ण हो रहा था। उसने बहुत ही धीमी आवाज़ में कहा, "हम सैर करने जा रहे थे परन्तु मुझको कुछ हो गया है। कह नहीं सकती कि क्या हुआ है। टांगों में बिलकुल ताकत नहीं है।"

भूषण ने कह दिया, "तो ठीक है। चलो लौट चलो। ऊपर चलकर आराम करो। रूपकृष्ण मेरा भाई है। मामा का लड़का है। आओ !" भूषण ने आश्रय देने के लिए हाथ बढ़ा दिया।

सुमित्रा ने बांह का आश्रय लिया। वह उठी और धीरे-धीरे ऊपर को चल पड़ी। रूप उसके पीछे-पीछे था। वह सुमित्रा के घर से भाग आने के विषय में भारी चिन्ता अनुभव करने लगा था।

जब घर की बैठक में जाकर बैठे तो रूप ने भूषण से कहा, "भैया ! विवाह किया है अथवा नहीं ?"

"हमारा नैचुरल ढंग से विवाह हो चुका है।"

"विवाह तो नैचुरल होता ही नहीं। विवाह की विधि तो कृत्रिम है। नैचुरल तो समागम होता है। इसपर भी विवाह का विधिवत् होना समाज ने नियत किया है।"

"मैं इसमें समाज के हस्तक्षेप को अनधिकार मानता हूं।"

"भूषण भैया ! तुम तो समाजवादी थे। तुमसे ही समाज की अवहेलना तो समझ नहीं आ रही।"

"तुम हमारी बात छोड़ो। बताओ, कहां से पता पा गए हो मेरा ?"

"राजपुरा रोड पर मैं अपने विवाह का निमन्त्रण देने गया था। निमन्त्रण-पत्र दे आया हूं। मैं तुमको और तुम्हारी पत्नी को बरात में सम्मिलित होने के लिए कह आया हूं। यह तो काहन से मालूम हुआ है कि तुम यहां रहते हो। मन में विचार आया कि तुमको कह दूं कि तुम्हारा निमन्त्रण-पत्र राजपुरा रोड पर रखा है।

"परन्तु यहां तो सुमित्रा को देख चकित ही रह गया हूं।"

"वहां निमंत्रण-पत्र किसको दे आए हो ?"

"राजेश्वरी भाभी को।"

"वह मिली थी ?"

"हां।"

"कुछ कहती थी ?"

"यही कि जब तुम घर पर आओगे तो मेरा संदेश तुमको दे दिया जाएगा।"

"तो उसने यह नहीं बताया कि मैं अब उस घर में नहीं जाता ?"

"उसको कदाचित् तुम्हारे इस घर का और सुमित्रा के यहां होने का ज्ञान नहीं। इस विषय में उसने कुछ नहीं बताया।"

भूषण गम्भीर हो मुख देखता रह गया। वह विचार कर रहा था कि क्या कहे। एकाएक उसके मन में एक विचार आया। उसने रूप से पूछ लिया, "अच्छा रूप! अब तो तुम सब बातें जान गए हो। यदि तुम मुझको अपने विवाह पर बुलाना चाहते हो, तो मुझको मेरी नई पत्नी-सहित पृथक् निमंत्रण दे दो। राजेश्वरी वाला निमंत्रण तो न मुझको मिलेगा और न ही मैं लेने जाऊंगा।"

"भूषण भापा! तुमको तो मैं निमंत्रण दे सकता हूं, परन्तु सुमित्रा को कैसे दूं! तुम्हारा इससे विवाह तो हुआ नहीं।"

"तुम इसको विवाह नहीं मानते परन्तु मैं तो विवाह मानता हूं।"

"तुम मान सकते नहीं। सुमित्रा अभी अल्पवयस्क है। उसके माता-पिता की स्वीकृति प्राप्त कर ली है क्या ?"

"हां। बहुत झगड़ा करना पड़ा है। परन्तु वे मान गए हैं।"

"पता करूंगा।"

"तुम इसको कैसे जानते हो ?"

"मैं इसके माता-पिता को जानता हूं। जिस दिन तुम इसको घर से भगाकर लाए थे, लाला बनवारीलाल मुझसे मालूम करने आया था। इसीसे पूछ रहा हूं कि उनकी स्वीकृति ली है अथवा नहीं ?"

"इसकी मां यहां आकर रहना चाहती थी। परन्तु सुमित्रा ने पसन्द नहीं किया। आखिर वह मान गई है। अब वह कभी-कभी मिलने ही आती है।"

"इस समय मेरे पास छपे निमंत्रण-पत्र तो है नहीं मौखिक रूप में तुम दोनों को आमंत्रित करता हूं। सुमित्रा भाभी! तुम निस्संकोच आ सकती हो। बरात मिंटो क्लब से साढे छः बजे चलेगी।"

"हम आएंगे रूप ! तुम्हारी पत्नी के लिए कुछ भेंट भी लाएंगे।"

"तो इसका धन्यवाद मेरी पत्नी देगी।"

"बरात कहां जाएगी ?"

"कर्जन रोड, लाला लक्ष्मीचन्द की कोठी पर।"

"किनकी लड़की है ?"

"लाला जी की अपनी लड़की है।"

"क्या विशेषता देखी है लाला जी ने तुममें ?"

"यह तो देखने वाले ही बता सकते हैं। हां, एक बात हुई है। बड़ी मां इनके घर गई थीं और बाबा का नाम जादू कर गया प्रतीत होता है।"

"पर अपने बाबा के साथ तुम्हारा क्या सम्बन्ध है ? कहीं झूठ-मूठ बताकर चार सौ बीसी तो नहीं कर रहे ?"

"नहीं भूषण। मेरे श्वसुर मुझको देखने आए थे और फिर अपनी मोटर में बैठा मुझको अपनी कोठी में ले गए थे। मैंने स्वयं उनको अपनी आर्थिक स्थिति बता दी थी। वे कहने लगे, 'सुलक्षणमल के पोते हो और व्यापार में लगे हुए हो। यदि अपने बाबा की व्यावसायिक प्रतिभा का एक अंश भी तुम्हारे में हुआ तो भविष्य उज्वल है।'

"मैंने बताया, 'अजमेरी गेट के मकान पर मैंने साढ़े दस हजार व्यय किया और बीस हजार पर बेच दिया है।'

"वे पूछने लगे, 'कितने महीने में काम समाप्त किया है ?'

"'पांच महीने में।'

"'ठीक है। मतलब हुआ कि तुम अभी भी डेढ़ हजार रुपये से अधिक प्रति मास पैदा कर सकते हो।'

"मैंने बताया कि ग्राउंड रोड पर एक और मकान बनवा रहा हूं। वह भी बेचने के लिए है।

"मेरे इस प्रकार बताने पर उन्होंने मुझको उसी दिन पांच मुहरें देकर बात पक्की कर दी। बातों ही बातों में उन्होंने कह दिया, 'व्यापार तीन टांगों पर चलता है—एक पूंजी, दूसरे व्यावसायिक बुद्धि और तीसरे काल।'

"मेरे में दो बातें तो हैं। तीसरी को एकत्रित कर रहा हूं।"

भूषण ने पूछ लिया, "क्या है और क्या एकत्रित कर रहे हो ?"

"व्यावसायिक बुद्धि तो है। काल के मूल्य का ज्ञान भी है और पूंजी थोड़ी है। शेष एकत्रित कर रहा हूं।"

रूप गया तो भूषण ने सुमित्रा से पूछ लिया, "तुम इसको देख घबरा क्यों गई थीं ?"

"मेरी इनसे सगाई हो चुकी थी फिर न जाने क्या हुआ कि विवाह होने में ही न आया। जब आपसे सम्पर्क बना तो मैं राजी नहीं होती थी। कारण यही था कि मुझको विदित था कि इनसे विवाह होगा। भागने से एक दिन पूर्व मैंने मां से पूछा था कि इनसे विवाह होगा अथवा नहीं ? मां ने बताया कि बात टूट चुकी है तो मैंने आपके साथ भाग जाने का कार्यक्रम बना लिया।"

"तो तुमने रूपकृष्ण को देखा था ?"

"ये कभी-कभी हमारे घर आया करते थे। एक बार जब बात पक्की हो चुकी थी, तो इन्होंने मुझको एक सौ रुपया भी दिया था। एक बार यह सूचना मिली थी कि ये मेरे नाम पचास हज़ार की सम्पत्ति करने वाले हैं। स्वाभाविक रूप में मेरे मन में इनके लिए आदर था।"

"परन्तु इसके पास पचास हज़ार कहां से आया ? इसका पिता दो सौ रुपये महीने का नौकर है। यह बेकार घूमता था। अब यहां चोरों वाला व्यापार करने लगा है।"

"परन्तु इसको स्वसुर तो बहुत बड़े आदमी मिल गए हैं। सेठ लक्ष्मीचन्द तो एक विख्यात व्यक्ति हैं।"

"इन्होंने अवश्य चार सौ बीस खेली है। पीछे जब भेद खुलेगा तो बहुत झगड़ा होगा। सम्भव है कि पति-पत्नी पृथक्-पृथक् हो जाएं।"

"परन्तु चार सौ बीस तो आपने भी खेली है।"

"मैंने ? भला कैसे ?"

"मैं स्मरण कराती हूं। आप एक दिन करौलबाग में बाईसिकल पर जा रहे थे। मैं अपनी मां के साथ तांगे में बैठी घर को जा रही थी। आपकी दृष्टि मुझपर पड़ी और आप हमारे तांगे के पीछे-पीछे हमारे घर तक आए। इस घटना के कई दिन उपरान्त आपने हमारा दरवाज़ा खटखटाया। मैंने झांककर देखा तो आपने कह दिया, 'बनवारीलाल के नाम एक सरकारी चिट्ठी है।' मैं लेने आई तो आप मुझपर डोरे डालने लगे। मां घर पर नहीं थी, इस कारण मेरे मन में भी

आपके प्रति संवेदना उत्पन्न होने लगी, मैं उस सरकारी चिट्ठी के लोभ में बातें सुनती रही।

"आप जाते समय मुझको ये कर्णफूल, जो आज भी मुझको बहुत ही भले प्रतीत होते हैं, भेंट में दे गए।

"बताइए यह चार सौ बीस वाली बात नहीं थी क्या? वह सरकारी चिट्ठी अभी तक भी आपने नहीं दिखाई।"

भूषण हंस पड़ा। हंसते हुए उसने कहा, "तुम अब प्रसन्न हो अथवा नहीं?"

"वह तो सब लड़कियां अपने पति के घर जाकर हो जाती हैं। इसपर मैं समझती हूं कि आपके मामा के लड़के आपसे अधिक सुन्दर और बलिष्ठ दिखाई देते हैं।"

भूषण के मन में एक सन्देह उत्पन्न हो गया। वह मन में विचार करने लगा था कि सुमित्रा की कितनी घनिष्ठता रूप के साथ रही होगी। उसके मन में उठ रहे संशय का सुमित्रा और रूप दोनों के मुख पर परस्पर देखने पर घबराहट से समर्थन होता था। इसपर भी वह अपने मन के संशय को प्रकट करने से डरता था।

जिस दिन सुमित्रा के अपनी मां को पृथक् समझाने के पश्चात् किशनी भूषण को दामाद के रूप में स्वीकार कर बैठी थी, उसने भूषण को एक चेतावनी दी थी। उसने कहा था, "ठीक है। मैं तुमको दामाद के रूप में स्वीकार करती हूं, परन्तु स्मरण रखना कि यदि तुमने इस लड़की को धोखा दिया तो मेरे हाथ बहुत लम्बे हैं। तुम इस संसार में जीवित रह नहीं सकते।"

इससे भूषण सुमित्रा को कुछ कह नहीं सका। इसपर भी रूप के साथ उसका सम्बन्ध एक जांच का विषय बन गया।

उसने पूछ लिया, "चलोगी रूप के विवाह पर?"

"यदि आपको मुझे अपने सम्बन्धियों से मिलाना है तो इससे अच्छा अवसर मिलना कठिन है।"

"ठीक है। तैयार हो जाओ। एक बात के लिए तैयार रहना चाहिए, मेरे सम्बन्धी कदाचित् तुमको अभी वह मान-प्रतिष्ठा न दें जो देनी चाहिए, तुमको कुछ धीरज और संतोष से काम लेना पड़ेगा।"

"आप चिन्ता न करिए। मैं आपकी पहली पत्नी से ही मित्रता बना लूंगी। तब तो सब प्रसन्न हो जाएंगे?"

"देखो। राजेश्वरी के पिता बैरिस्टर हैं, बहुत छंटे हुए दुनियादार हैं। वे सब प्रकार के अड़ंगे लगाएंगे।"

"आखिर एक दिन यह सब कुछ होना है। जितना शीघ्र हो जाए ठीक है।"

दूसरे दिन भूषण को एक निमन्त्रण-पत्र डाक के द्वारा मिल गया। उसपर लिखा था—मिस्टर भूषण एम० ए०, पी-एच० डी० तथा सुमित्रादेवी।

भूषण निमन्त्रण-पत्र पर नाम पढ़ हंस पड़ा। उसने सुमित्रा को बताया, "रूप ने अभी तुमको मेरी पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं किया।"

"जब आपकी पहली पत्नी स्वीकार कर लेगी तो फिर कोई भी आपत्ति नहीं कर सकेगा।"

भूषण समझता था कि सुमित्रा उससे अधिक व्यावहारिक बुद्धि रखती है।

१३

बरात साढ़े छः बजे चलनी थी और पूजा पौने छः बजे ही आरम्भ हो गई थी। सब सम्बन्धी पहले ही आ चुके थे। राम अति प्रसन्न था। रूप का सम्बन्ध दिल्ली के कुछ चोटी के धनियों में से एक के साथ हो रहा था।

रूप ने भूषण के नये विवाह के विषय में घर के सब मुख्य-मुख्य व्यक्तियों को बता रखा था। राम को यह सम्बन्ध बिलकुल पसन्द नहीं था। इसपर भी वह इसमें स्वेच्छा से कुछ कहना नहीं चाहता था। राजेश्वरी को भी सब बात विदित थी और वह अपने पति से ठंडे दिल से मिलने के लिए तैयार होकर आई थी।

भूषण जान-बूझकर बरात के समय से पन्द्रह मिनट पूर्व पहुंचा था। पूजा समाप्त हो चुकी थी और रूप दूल्हा के लिए सजाई गई मोटरगाड़ी में बैठ चुका था। रूप के साथ उसकी मां बैठी थी। सबसे बड़ी बहिन कृपा भी थी। कृपा का विवाह हो चुका था।

राजेश्वरी अपने पिता की मोटर में बैठ बरात में जाने वाली थी। वह उस मोटर की ओर जा रही थी कि भूषण सुमित्रा के साथ सामने आ खड़ा हुआ। राजेश्वरी ने हाथ जोड़ नमस्कार किया तो सुमित्रा ने हाथ जोड़ दिए। राजेश्वरी उसकी अवहेलना करना चाहती थी, मानो वह उसको जानती ही नहीं। वह अपने पति को नमस्कार कर अपने पिता की ओर चल पड़ी। उसके पिता तथा

माता मोटर के पास खड़े उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। इस समय भूषण ने कह दिया, "राजेश्वरी ! मैं इनका परिचय करने के लिए आया हूं।"

राजेश्वरी जाते-जाते खड़ी हो गई। भूषण ने परिचय करा दिया।

"यह है श्रीमती सुमित्रादेवी, मेरी दूसरी पत्नी; और सुमित्रा ! ये हैं श्रीमती राजेश्वरी जी, मेरी पहली पत्नी।"

इसपर सुमित्रा ने मुस्कराते हुए राजेश्वरी से कहा, "आपकी छोटी बहिन हूं, कृपा की पात्रा हूं।"

"यह तो देखना है।" राजेश्वरी ने सतर्कता से उत्तर दिया।

परन्तु सुमित्रा कम सतर्क नहीं थी। "परीक्षा के लिए उपस्थित हूं।"

"परीक्षा का समय नहीं आया। समय पर सब पता चल जाएगा। पानी का पानी और दूध का दूध हो जाएगा।"

"तो परीक्षा के लिए उपस्थित होने की स्वीकृति दीजिए। बहिन जी ! यदि कुछ नम्बर कम रह गए तो ग्रेस मार्क्स (रियायती अंक) देकर तो पास कर ही देना चाहिए।"

इस प्रकार की वार्तालाप में सतर्कता पर राजेश्वरी मुस्कराई और फिर अपने पिता की ओर चल दी।

रघुनाथसहाय ने भी भूषण को एक लड़की के साथ देखा था। उसने राजेश्वरी से पूछ लिया, "यह भूषण के साथ कौन लड़की है।"

यह उनकी नई बीवी है।"

"नई बीवी ? तो तुमने उसको दो-तीन सुनाई क्यों नहीं ?"

"क्या होता सुनाने से ?"

"उसको धक्के दे-देकर यहां से निकलवा देता।"

"रूप ने मुझको कहा था कि यदि इन्होंने किसी प्रकार की असभ्यता का व्यवहार किया तो उसके सम्बन्धी मेरा पक्ष लेंगे। यदि मैं कुछ भी अपनी ओर से झगड़ा करती तो फिर वे क्या करते, आप समझ सकते हैं।"

"मैं समझता हूं कि हमको घर लौट जाना चाहिए।"

"क्यों ?"

"मैं तुमको अपमानित किया गया समझ रहा हूं।"

"मेरा इससे क्या सम्बन्ध है ?"

"वह तुम्हारा पति छीनकर ले गई है।"

"पति पर पत्नी का एकाधिकार मानते हैं आप?"

बैरिस्टर साहब को समझ आ गया कि यह हिन्दुस्तान है और यह हिन्दू समाज है। इसमें पति एक से अधिक विवाह कर सकता है।

बैरिस्टर साहब ने चिन्ता व्यक्त करते हुए कह दिया, "यह तो समाज का अन्याय है और मेरा मन इससे विद्रोह कर रहा है।"

"ठीक है। विद्रोह का उद्देश्य भी तो होना चाहिए।"

"उद्देश्य तो है ही। मैं समाज में से पतितों की इस उच्छृंखलता को निर्मूल करना चाहता हूं।"

"कैसे करिएगा?"

"पहले तो आज ही इस बरात को छोड़कर वापस लौटना चाहता हूं। इसके अनन्तर ला० लक्ष्मीचन्द द्वारा इस परिवार पर दबाव डालकर इस लड़की को निकलवाऊंगा। तीसरे हिन्दू समाज में एक पत्नी के रहते दूसरे विवाह को वर्जित कराने का आन्दोलन खड़ा कर दूंगा।"

"तो अभी तो वापस लौटने की बात है न?"

"हां।"

"तो लौट जाइए। मैं किसी अन्य मोटर में चली जाऊंगी।"

"तो तुम साथ नहीं लौटोगी?"

"नहीं। मैं अपने सुसराल वालों के सहयोग से अपनी समस्या सुलझाना चाहती हूं। उनका उपाय दूसरा है।"

"तो उनसे बात हो चुकी है?"

"जी। इनकी एक मौसी है। नाम है गौरी। घर की सब प्रकार की समस्याओं का समाधान उनकी राय से ही किया जाता है। वे कल मुझको कोठी में मिली थीं और उन्होंने मुझको बताया है कि ठीक ढंग से की हुई तपस्या ही फल लाती है। झगड़ा, आन्दोलन और बहिष्कार तो तपस्या नहीं होते, ये तो उत्तेजनात्मक कार्य होते हैं। इनका प्रभाव विनाशकारी होता है और तपस्या सदा निर्माणात्मक होती है।"

"तो क्या तपस्या बताई है उन्होंने?"

"मौसी का कथन है कि विवाह के उपरान्त इसपर विचार करेंगे। इस

विवाह की बात सबको एक-दो दिन हुए ही ज्ञात हुई है।"

रघुनाथसहाय गम्भीर हो गए। उनको गौरी की बात ठीक प्रकार से समझ नहीं आई। अतएव वे अपनी पत्नी, राजेश्वरी की मां, की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखने लगे। राजेश्वरी की मां ने कह दिया, "बिटिया ठीक कहती है। हमको इस विषय में हस्तक्षेप किए बिना इसकी इच्छानुसार सहायता के लिए तैयार रहना चाहिए।"

रघुनाथसहाय चुप रहे और वे बरात में सम्मिलित हो गए। भूषण को राम ने एक टैक्सी में बैठा दिया। उसके साथ गौरी और गोवर्धनलाल को बैठा दिया। प्रत्येक टैक्सी में चार-चार सवारी बैठाई जा रही थीं।

जब गौरी सुमित्रा के पास बैठ गई तो भूषण ने सुमित्रा का परिचय करा दिया, "मौसी! यह है सुमित्रादेवी।"

"समझ गई हूं।" गौरी ने कह दिया, "तुम्हारी नई बहू। क्यों बहू! क्या गुण देखा है तुमने इस लड़के में? मैंने सुना है कि तुम इसके साथ मां के घर से भाग आई थीं?"

सुमित्रा बात इस प्रकार आरम्भ होने की आशा नहीं करती थी। इसपर भी उत्तर देने में वह तेज़ थी। उसने कह दिया, "जो लड़कियां लड़कों में देखती हैं, किसीके माता-पिता देख लेते हैं। मेरे माता-पिता देख नहीं सके। अतः मुझको स्वयं देखना पड़ गया है।"

"अतः माता-पिता के शीघ्र वर न ढूंढ सकने पर अधीर हो गई थीं? परन्तु मैं तो कह रही हूं कि तुम्हारा चुनाव ठीक नहीं हुआ।"

"क्या दोष पाती हैं आप इनमें?" सुमित्रा का पुनः सतर्क प्रश्न था।

"यह मूर्ख है। यह तर्क करना नहीं जानता, इससे यह अपना बुरा-भला पहचान नहीं सकता। मनुष्य का इस संसार में सबसे बड़ा आश्रय हरि है। हरि जो सबके दुःख और क्लेश हरता है। इसका उसपर विश्वास नहीं, यह कृतघ्न है। इस कारण यह किसीके किए का प्रतिकार नहीं दे सकता..."

बात बीच में ही काटकर भूषण ने कहा, "मेरे मुख पर ही निन्दा कर रही हो मौसी?"

"जो बात मुख पर कही जाए वह निन्दा नहीं होती, वह आलोचना मानी जाती है। निन्दा पीठ-पीछे कही बात को कहते हैं। भूषण! राजेश्वरी ने अपने

जीवन का पूर्ण वृत्तान्त मुझको बताया है और एक ब्राह्मण की कन्या को तुमने किस प्रकार मोह-जाल में फंसाया था, सब कुछ मुझको विदित है। उसके आधार पर तुम्हारे ये गुणानुवाद कर रही हूं।"

भूषण समझ गया कि मौसी के साथ यदि वह विवाद में पड़ गया तो अपनी पत्नी के सम्मुख कुछ अन्य कटु बातें प्रकट हो सकती हैं। इससे उसने कह दिया, "मौसी, तुम बड़ी हो। तुम गाली भी दोगी तो आशीर्वाद ही हो जाएगी। इसलिए मैं बैठा हूं। जो मन में आए कह लो।"

"सुमित्रा ! तुम सुखी हो ?"

"हां मौसी। अभी तक तो कोई कारण दिखाई नहीं दिया है मुझको इनसे असन्तुष्ट होने का।"

"भगवान करे कि तुम सदा सुखी रहो।"

अब सुमित्रा ने अपनी चतुराई का परिचय दे दिया। उसने कह दिया, "मौसी ! कभी आप जैसे वृद्धजनों से शिक्षा लेने के लिए अवसर मिल सके तो आपका आशीर्वाद फलेगा।"

"मैं घर पर मध्याह्न दो बजे से सायंकाल तक रहती हूं।"

"परन्तु आपका घर कैसे ढूंढूंगी और फिर ये घर से अकेली निकलने नहीं देते।"

"भूषण मेरे घर का मार्ग जानता है। सुना है, इसको तीन बजे काम से छुट्टी मिल जाती है।"

इस समय भूषण ने बात बदल दी। उसने सुमित्रा से कह दिया, "सुमित्रा ! ये हैं मौसा जी। इनका नाम है श्रीयुत गोवर्धनलाल जी।"

सुमित्रा ने हाथ जोड़ दिए। बरात चल रही थी। गौरी ने रूप की सगाई की बात बता दी। उसने कहा, "लाला लक्ष्मीचन्द के घर मां गई थीं और उनके कहने से समझो अथवा पिता जी के दान-दक्षिणा की ख्याति के कारण समझो अथवा हमने तीन ट्रस्ट बनाए हैं उनके कल्याणकारी प्रभाव के कारण समझो, लक्ष्मीचन्द के मन पर बहुत प्रभाव हुआ और वह दूसरे दिन ही रूप को मिला, उनको अपने घर ले गया। सब परिवार वालों ने देखा और पसन्द कर लिया। बहुत भाग्यशाली है रूप !"

"मौसी ? लड़की कैसी है ?"

"पढ़ी-लिखी है। घर पर हिन्दी और संस्कृत पढ़ी है, सीनियर कैम्ब्रिज की परीक्षा पास की है। सुना है, सितार अच्छा बजा लेती है।"

"मौसी, मैं यह नहीं पूछ रहा। मैं उसकी रूपरेखा की बात पूछ रहा हूं।"

"रूपरेखा? साधारण है।" गौरी ने टैक्सी के साथ-साथ चल रहे गैस के हंडे के प्रकाश में सुमित्रा की ओर देखकर कह दिया, "तुम्हारी इस बहू के साथ तो किसी अंश में भी तुलना नहीं रखती। राजेश्वरी से भी बहुत साधारण है।"

"तो रूप को यह बताया है आपने?"

"हां। और उसने अस्वीकार नहीं किया।"

"धन के लोभ में मान गया है। मौसी! यह विवाह स्थिर नहीं रहेगा। और यदि रूप की बहू में धनी बाप की बेटी होने का कुछ भी अभिमान विद्यमान हुआ तो यह विवाह एक वर्ष भी नहीं चलेगा।"

"यह सब अपने-अपने भाग्याधीन है। रूप को तो पश्चात्ताप नहीं होना चाहिए। मैंने स्वयं उसको लड़की के सब गुण-अवगुण बताए हैं।"

"और कहीं लक्ष्मीचन्द जी की लड़की को पश्चात्ताप होने लगा तो?"

"तो लड़की को गिला अपने पिता से होना चाहिए। हमने उसके पिता से कुछ नहीं छिपाया।"

बरात का बहुत शानदार स्वागत हुआ। उसी रात विवाह का विधि-विधान पूर्ण हुआ और अगले दिन रूप अपनी पत्नी को लेकर घर आ गया।

उत्तरावस्था

तीसरा परिच्छेद

उक्त घटना सन् १६३६ की थी। इसके पश्चात् परिवर्तन द्रुत गति से हुए। द्वितीय विश्वव्यापी युद्ध आरम्भ हुआ। इसमें जापान मित्रराष्ट्रों के विपरीत युद्ध में सम्मिलित हुआ। रूस मित्रराष्ट्रों की ओर सम्मिलित हो ग ा।

युद्ध की इस अप्रत्याशित करवट ने भारत के इतिहास और आचार-विचार पर भारी प्रभाव डाला। जापान के अमेरिका के विपरीत युद्ध आरम्भ कर देने से अमेरिका युद्ध में संयुधि हो गया। अमेरिका की तकनीकी उन्नति और प्राकृतिक साधन अत्यधिक थे। इससे अन्य मित्रराष्ट्र इंगलैंड, फ्रांस और अमेरिका की वेढंगी बातें मानने पर विवश थे।

रूस कुटिल नीति में अत्यन्त कुशल था। एक ओर सरल चित्त परन्तु शक्तिशाली अमेरिका का प्रधान और दूसरी ओर कूटनीतिज्ञ स्टालिन दुर्बल इंगलैंड और फ्रांस को उंगलियों पर नचाने लगे। भारत इंगलैंड के अधीन होने से इंगलैंड के साथ ही मिल गया।

अमेरिका ने चीन में च्यांग काई शेक को चीन के कम्यूनिस्ट नेताओं से समझौता करने पर विवश कर दिया। परिणाम में कम्यूनिस्ट चीन पर छा गए। अमेरिकन सिपाही भारत की रक्षा के लिए और चीन की सहायता के लिए बहुत बड़ी संख्या में भारत में आए और भारतीयों में नैतिक पतन के कारण हो गए।

स्टालिन के रूस के साथ मित्रराष्ट्रों की सन्धि होने से भारत में कम्यूनिज़्म का व्यापक प्रचार होने का सुभीता हो गया।

युद्ध में सरकार का युद्ध के लिए सामग्री निर्माण कराना तथा व्यापार अपने हाथ में लेने से देश का घोर पतन हुआ। जहां भी शासन ने व्यापार और उद्योग-धन्धों को अपने हाथ में लिया है, वहां ही जनता में अनैतिकता का व्यापक प्रचार हुआ है।

कम्यूनिस्टों अथवा कम्यूनिस्टों के सहचरों का कहना है कि कम्यूनिस्ट देशों में यह नैतिक पतन नहीं हुआ। यह कथन निर्विवाद सत्य नहीं। इसपर भी भारत

में तो युद्धकाल में सरकार के व्यवसाय और उद्योग में हस्तक्षेप से पतन व्यापक हुआ है।

इसके पश्चात् स्वराज्य आया और स्वराज्य आया एक अति प्रभावशाली और दृढ़निष्ठ समाजवादी के हाथ में। इसने रही-सही भारत की नैतिकता का मलिया-मेट कर दिया।

सन् १९५७ आ गया। बाईस वर्ष भारत के नैतिक जीवन में एक महान विनाशकारी प्रभाव उत्पन्न करने वाले हुए। दिल्ली के नैतिक पतन में एक कारण और हो गया। भारत में पाकिस्तान बना। पंजाब के लाखों हिन्दू पाकिस्तान से भागकर हिन्दुस्तान में आए। इनमें अधिकांश लुट-पिटकर आए थे। सन् १९४७ में भारत सरकार इनकी रक्षा नहीं कर सकी। तत्कालीन सरकार पाकिस्तानी लुटेरों की सहायता करती रही। स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् तो सरकार पाकिस्तान की उच्छृंखलता रोकने में अशक्त सिद्ध हुई। काश्मीर पर पाकिस्तान ने आक्रमण किया और भारत सरकार ने पाकिस्तान से युद्ध विराम-सन्धि कर ली। इससे सरकार की राजनीतिक दुर्बलता स्पष्ट हो गई। सन् १९५०-५१ में पुनः पूर्वी पाकिस्तान से हिन्दू भगाए गए।

सरकार भारतीय नागरिकों की न बर्मा में, न ही लंका में, न तिब्बत में, न ही दक्षिणी अफ्रीका में रक्षा कर सकी।

सरकार की मित्रता गलत राष्ट्रों से रही थी। देश के आभ्यन्तरिक विषयों में भी सरकार समाजवादी होने से युद्धकाल के बेईमान प्रशासकों के हाथों में खेलने लगी।

इसका प्रभाव दिल्ली में देश के अन्य भागों से अधिक हुआ। इस समय लाला सुलक्षणमल का परिवार छिन्न-भिन्न हो चुका था। गौरी और गोवर्धनलाल सब कुछ छोड़-छाड़ संन्यासी हो कहीं हिमालय में जा चुके थे। उनके विषय में कोई नहीं जानता था कि कहां हैं। शिवकुमार और गोपालकुमार का देहान्त हो चुका था। शिवकुमार का लड़का निरंजन शिवकुमार की गद्दी पर बैठता था, परन्तु दुकान की साख (प्रतिष्ठा) मिट्टी में मिल चुकी थी। अब दुकान का विश्वास पहले से शतांश भी नहीं रहा था। ग्राहकों से झगड़े होते थे। फिर मुकदमे होते थे। कभी दुकान जीतती थी, कभी ग्राहक जीतते थे और बदनामी दोनों अवस्थाओं में दुकान की होती थी।

रामकुमार अब वृद्ध होने के कारण काम-काज कुछ नहीं करता था। उसका लड़का रूप एक बहुत बड़ा ठेकेदार बन गया था। घर में रुपया बरसता था और रूप की पत्नी सुभद्रा देवी घर पर शासन करती थी। इस शासन में सबसे बुरी दशा रूप की मां रोहिणी की थी।

परिवार में तीन व्यक्ति अभी भी परस्पर मेल-मुलाकात रखते थे—रूप, काहन और भूषण। रूप ठेकेदार होने से सबसे अधिक समृद्ध था। काहन अब बहुत बड़ा अफसर बन गया था और दुर्गा से सात बच्चों का पिता बन, सुख और चैन का जीवन व्यतीत करता था। वह एक बार 'रिटायर' होकर पुनः 'आडीटर जनरल' के दफ्तर में काम पर ले लिया गया था। भूषण ने यूनिवर्सिटी छोड़ दी थी और भारत सरकार के उद्योग मन्त्रालय में सार्वजनिक उद्योग यंत्र का एक मुख्याधिकारी बन गया था।

भूषण की दूसरी पत्नी सुमित्रा भूषण को छोड़ गई थी। राजेश्वरी भूषण से पृथक् अपने लड़के राजकुमार के साथ रहती थी। उसकी लड़की राजकुमारी तो विवाह कर अपने पति के साथ अमेरिका चली गई थी। भूषण के घर में एक शिमला के समीप के गांव की स्त्री नौकरानी के रूप में रहती थी और वह घर पर राज्य करती थी।

भूषण महादेव रोड पर एक सरकारी बंगले में रहता था। भूषण की सेविका सुन्दरी भूषण से मिलने के लिए आने वालों के साथ ऐसा व्यवहार करती थी, जैसे वह उसकी प्राइवेट सैक्रेटरी हो। लाखों रुपयों का काम उसके द्वारा हो जाता था और भूषण दिन-प्रतिदिन मोटा होता जाता था।

सुन्दरी का साहस दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता था और वह मिलने वालों से पृथक् में भेंट करती थी और अनेकों बार बिना भूषण की जानकारी के भी वचन दे देती थी और उसके लिए अग्रिम रिश्वत ले लेती थी।

यह सब काम उस समय होता था, जब भूषण मन्त्रालय में गया होता था। एक दिन भूषण आया तो सदा की भांति वह सुन्दरी के कमरे में चला गया। सुन्दरी के सामने बीयर की बोतल और गिलास रखा था। भूषण आया तो उसने उसे भी निमन्त्रण दे दिया, "आइए। आज तो बाहर लू चल रही है। कुछ चित्त ठंडा कर लीजिए।"

"बाहर तो लू चल रही है परन्तु भीतर कूलर लगा है।"

"भीतर रुपये की गर्मी है।"

"तो आज कोई बड़ी-सी मुर्गी हलाल की है ?"

"मुर्गी नहीं, मुर्गा है। रूप का लड़का प्रबोध आया था। वह दस हजार दे गया है।"

"किस मतलब के लिए ?"

"उसको इमारती स्टील का परमिट चाहिए था।"

"कितने स्टील का ?"

"दस हज़ार टन का।"

"ओह ! इतना स्टील है कहां ?"

"क्यों ? सरकारी तीन लोहे के कारखानों में कितना प्रतिदिन तैयार होता है ?"

"परन्तु सुन्दरी ! अकेला मैं ही तो नहीं हूं इसका वितरण करने वाला। और भी हैं। फिर मैं मंत्री नहीं हूं। एक अण्डर सैक्रेटरी-मात्र हूं। मैंने पहले ही बहुत परमिट स्वीकार करवाए हैं।"

"रूप का काम तो करना ही होगा।"

"ठीक है। यत्न करूंगा।"

"जी नहीं, मैंने उससे यह वचन लिया है कि सौ रुपया प्रति टन वह हमको देगा। इसमें से पचास रुपया प्रति टन तो आप जिसको चाहें दे दें, शेष हमारा होगा। देखिए, दस हज़ार टन का मतलब है पांच लाख रुपया। यह माल एक वर्ष के भीतर देना है। इतना तो आप कर ही सकेंगे। यह अग्रिम दस हज़ार रुपया तो उक्त गणना से बाहर है।"

भूषण गम्भीर हो गया। देर तक वह गम्भीर हो मौन बैठा रहा। एकाएक उसको विचार आया कि आज पहली बार रूप उसके पास किसी काम के लिए आया है और पहली ही बार उसने दस हज़ार रुपया उससे ऐंठ लिया है। वह मन में क्या सोचेगा। रूप उसके मामा का लड़का है। इसपर उसने बहुत धीरे से कह दिया, "रूप से रिश्वत लेकर तुमने ठीक नहीं किया।"

"क्यों ?"

"वह मेरे मामा का लड़का है।"

"मां गई तो मामा भी गया।"

"तो क्या रिश्ता भी टूट गया ?"

"मैंने तो आपकी उससे नवीन रिश्तेदारी पैदा कर दी है। आप नहीं जानते, परन्तु मैं जानती हूं कि इस रिश्तेदारी से आपको बहुत लाभ होने वाला है।"

"इस घूस की रिश्तेदारी की बात कर रही हो न ?"

"हां, मैं समझती हूं कि यह अधिक सुदृढ़ होगी।"

"इसके पश्चात् मुझको रूप के सामने आंखें करते लज्जा लगा करेगी।"

"इस प्रकार लज्जा करने लगे तो बस बात हो चुकी !"

"तुम आज कुछ अधिक पी गई प्रतीत होती हो।"

"जी नहीं। अभी तो आधी बोतल भी खाली नहीं हुई।"

"प्रबोध रुपया नोटों में दे गया है ?"

"तो और किस में देता ?"

"छोटे नोट हैं ?"

"सब दस-दस के हैं।"

"कहां रखे हैं ?"

"तहखाने में रख आई हूं।"

"देख लिए हैं ?"

"सब ठीक हैं ?"

चाय पीने के पश्चात् भूषण तहखाने में चला गया। यह उसने बिना सरकारी अधिकारियों को बताए अपने 'लम्बर रूम' (माल गोदाम) में से खुदवा लिया था और उसपर लोहे का ढकना लगवा दिया था। रुपया, भूषण, जवाहरात, सोना, जिसको वह बैंक में नहीं रख सकता था, उसमें रखा रहता था। कोठी में नौकर थे, परन्तु उन नौकरों को भी इस तहखाने की बात विदित नहीं थी। कभी कोई नौकर इस गोदाम में घुसने नहीं दिया जाता था।

आज भूषण उस तहखाने में उतर गया और अपनी चोरी से रखी सम्पत्ति का निरीक्षण करने लगा। सुन्दरी उसके समीप खड़ी थी। सब कुछ ठीक-ठाक देख, वह बाहर निकल आया। लोहे का ढकना द्वार पर चढ़ा दिया गया। वह ढकना ऐसा प्रतीत होता था, मानो मार्बल चिप्स की सिल हो। वास्तव में लोहे के ऊपर मार्बल चिप्स-सीमेंट की तह चढ़ाई हुई थी और रखने पर वह तह वैसी ही प्रतीत होती थी, जैसा उस कमरे का शेष फर्श था।

लगभग तहखाने में पचास लाख रुपये का सामान रखा था। भूषण गम्भीरता-पूर्वक विचार कर रहा था कि वह इस माल को किस प्रकार अपने प्रयोग में लाएगा। उसको कोई उपाय नहीं सूझ रहा था।

आज उसको यही चिन्ता लग रही थी। आज रात का खाना खाते समय उसका लड़का राजकुमार आया। वह दसवीं श्रेणी में पढ़ते-पढ़ते पढ़ाई छोड़, घर पर भाषाओं का अभ्यास करने लगा था। उसके शिक्षक ने उसको संस्कृत भाषा पढ़ने के लिए कहा और पांच वर्ष में वह दुनिया की सात प्रमुख भाषाओं का ज्ञाता हो गया। वह भाषा-विज्ञान का विशेषज्ञ बन गया। वह सरकारी विदेश विभाग में अनुवादक के रूप में ठेके पर काम किया करता था।

आज उसको आया देख भूषण बितर-बितर मुख देखता रह गया। वह पहले कभी भी अपने पिता से मिलने नहीं आया था। और सुन्दरी ने उसको कभी नहीं देखा था।

"क्या मैं भीतर आ सकता हूं ?"

"कौन ?" सुन्दरी का प्रश्न था।

भूषण ने डाईनिंग हाल के द्वार पर खड़े देख पहचान लिया था। इस पर उसने कह दिया, "हां ! आ जाओ। सुनाओ, किसलिए आए हो ?"

"आप मुझको पहचानते हैं क्या ?" राजकुमार ने भीतर आ एक कुर्सी पर बैठते हुए पूछ लिया।

"मैं समझता हूं कि तुम राजेश्वरी के लड़के राजकुमार हो। क्या मैं ठीक कह रहा हूं ?"

"ठीक है। मद्य-सेवन पर भी आपकी बुद्धि में कुछ तो निर्मलता है। मैं आज बीस वर्ष बाद आपके घर पर आया हूं। यूं तो चलते-फिरते आपके दर्शन कई बार किए हैं।"

"किसलिए आए हो ?"

"अपनी मां के कहने पर अपने पिता का श्राद्ध करने।"

"पर मैं अभी मरा नहीं। जीवित हूं। तभी तो तुमसे बातचीत कर रहा हूं।"

"आर्यसमाज के सिद्धान्तानुसार जीवित पितरों के श्राद्ध में विश्वास रखता हूं। इच्छा तो नहीं थी, परन्तु मां के मस्तिष्क में अभी भी कुछ हिन्दू संस्कार शेष

हैं। इस कारण उन्होंने कह दिया कि जाओ और अपनी ओर से श्रद्धाञ्जलि दे आओ।"

"हां, तो बरखुरदार! यह पुण्य-लाभ भी कर लो।"

"मां ने कहा है कि मैं आपको कह दूं कि आप शीघ्रातिशीघ्र अधिक से अधिक सम्पत्ति लेकर यहां से लापता हो जाएं। यदि सम्भव हो तो विदेश चले जाएं।"

"पर क्यों?"

"आपका इस देश में तथा दिल्ली में रहना भय से रहित नहीं।"

"यह तुमको किसने कहा है?"

"यह मैं नहीं बताऊंगा।"

"उसको यह सूचना कहां से मिली है?"

"यह मैं जानता नहीं।"

"तो बूढ़े जीवित बाप को मरने के लिए कहने आए हो।"

"मैं तो आपके जीने-मरने में रुचि नहीं रखता। यह तो मां है, जो आप जैसे निकम्मे पति के होते भी अपने को सधवा मानती हैं और अपना सुहाग बनाए रखने के लिए मुझको भेज दिया है।"

"बस या और कुछ?"

"इस सुन्दरी को भी साथ ले जाइए। इसकी भी खैर नहीं यहां।"

"अब तुम जा सकते हो।"

राजकुमार उठकर जाने लगा तो सुन्दरी ने कह दिया, "राजकुमार! भोजन तो कर जाओ।"

"मां ने भोजन कराकर भेजा है।"

"तुम्हारा विवाह नहीं हुआ?"

"हो चुका है। पत्नी प्रसव करने मां के घर गई हुई है।"

"यह कौन-सी सन्तान होगी?"

"पहली।"

"बहनों का क्या हाल है?"

"एक तो अमेरिका में है और दूसरी संस्कृत अध्ययन कर रही है।"

सुन्दरी हंसी और बोली, "अच्छा, भोजन नहीं करना तो जाओ। रात के समय पुत्र को घर के बाहर गए जान मां का दिल धड़कता होगा।"

राजकुमार ने दोनों को नमस्कार किया और चला गया। उसकी टैक्सी के जाने का शब्द सुना तो भूषण ने सुन्दरी से पूछ लिया।

"क्या समझी हो इसका अर्थ ?"

"मैं समझी हूं कि इसकी मां को कोई बुरा स्वप्न आया है। वह भयभीत है। इसपर भी मेरा विचार है कि कल आप दो महीने की छुट्टी ले लें मैडिकल सर्टिफिकेट पर, मैं आपको पहाड़ पर ले चलूंगी। वहां आराम से बैठकर विचार कर लेंगे।"

"यदि कोई गड़बड़ कल ही हो गई तो ?"

"कुछ नहीं होगा। वह आपको व्यर्थ में डरा गया।"

भूषण को संतोष नहीं हुआ। जब से रूप का दस हज़ार रुपया उसके कोष में आया था, उसको किसी प्रकार का अज्ञात भय लग रहा था, इसपर भी वह अपने मन का भय सुन्दरी को बता नहीं सका।

रात-भर भूषण करवटें लेता रहा। प्रातः चार बजे उसको नींद आई। सुन्दरी तो गहरी नींद सोती रही थी। दोनों देरी से उठने के अभ्यस्त थे। इस कारण वे आठ बजे उठे। दोनों ने बैरा के लिए घण्टी बजाई तो बैरा आया और चाय पलंगों के पास रख बोला, "बाहर आपसे कोई मिलने आया है।"

"कौन है ?"

"मैंने उससे नाम पूछा है और कार्ड मांगा है। उसने कहा है कि आप बाहर आएंगे तो पहचान जाएंगे। नाम-धाम बताने की आवश्यकता नहीं।"

"अच्छा चलो। उनको बैठाओ। मैं कपड़े पहन आता हूं।"

बैरा गया तो भूषण ने समझा कि कोई परमिट इत्यादि लेने वाला आया है और अपना नाम बैरे को बताना नहीं चाहता। इससे वह चाय पी, शौच गया और हजामत बना, स्नान कर, कपड़े पहन आधे घण्टे में ही बाहर आ सका।

बहुत बढ़िया कपड़े पहने दो भद्र पुरुष ड्राइंग-रूम में बैठे थे। दोनों अपरिचित थे। भूषण ने सामने आते ही कह दिया, "मैं भूषणदेव हूं।"

"डाक्टर साहब ! मैं पुलिस विभाग का मुख्याधिकारी बना हूं। कदाचित् आपने नाम सुना होगा।"

"नहीं सुना ! मैं क्या सेवा कर सकता हूं आपकी ?"

"आप चलने के लिए तैयार हो जाइए। आपको पुलिस थाने में ले चलना है।

साथ ही आपके इस घर की तलाशी लेनी है।"

भूषण को राजकुमार की रात की बातचीत स्मरण हो आई। वह हतोत्साह हो, वहां ही बैठ गया। उस पुलिस अधिकारी ने आवाज़ दी, "बैरा! बैरा!"

बैरा भागा हुआ आया तो मिस्टर बत्रा ने कहा, "साहब के लिए जल्दी ठंडा पानी लाओ।"

बैरा भागा हुआ गया और 'फ्रिज' में से ठंडे पानी का गिलास भरकर ले आया। भूषण ने जल पिया। उसकी धड़कन कम हुई तो उसने कहा, "आपके पास वारंट है?"

"हां।" बत्रा के पास बैठे दूसरे आदमी ने कह दिया। उसने अपने थैले में से एक कागज़ निकाला। उसपर हस्ताक्षर कर वह कागज़ बत्रा को दिखा दिया। भूषण ने पढ़ा। लिखा था, "प्रारम्भिक जांच पर यह पता चला है कि डाक्टर भूषण के विरुद्ध रिश्वत लेने के पर्याप्त प्रमाण हैं। मैं मिस्टर के० अग्निहोत्री मिस्टर भूषण, अण्डर सेक्रेटरी, केन्द्रीय मंत्रालय, को पकड़कर जांच के लिए हवालात में रखने की आज्ञा देता हूं और उनके घर की तलाशी की आज्ञा देता हूं।" इस समय दो पुलिस के सिपाही सुन्दरी को बांह से पकड़े हुए भीतर ले आए। एक कान्स्टेबल ने बताया, "हुज़ूर! यह औरत कोठी के बाहर जा रही थी। हमने इसको जाने से मना किया तो यह नहीं मानी। हमने रोका तो यह भाग खड़ी हुई। इस कारण इसको पकड़ लाए हैं।"

मजिस्ट्रेट ने आज्ञा दे दी, "बैठ जाओ! तुम्हारे बयान होने हैं।"

इस समय तक लगभग दो दर्जन सिपाही जो कोठी को घेरा डाले हुए थे, कोठी के अहाते में घुस आए और सब नौकरों को एक कमरे में एकत्रित कर लिया।

२

सुन्दरी के बयान हुए। उसने बताया, "मैं भूषणदेव की 'हाउस कीपर' हूं। मुझको रोटी-कपड़ा और दो सौ रुपया महीना वेतन मिलता है। मैं नौकर-चाकरों से काम लेती हूं और खाने-पीने का प्रबन्ध रखती हूं। मैं मिस्टर भूषण जी के अन्य किसी काम इत्यादि के विषय में कुछ नहीं जानती।"

"तुम मिस्टर भूषणदेव की रखेल हो अथवा विवाहित पत्नी?"

"दोनों में से कुछ नहीं।"

"तुम शादीशुदा हो?"

"मैं विधवा हूं।"

"यह सब सामान, जो तहखाने से निकला है, तुम्हारी जानकारी में था क्या?"

"मैं इसके विषय में कुछ नहीं जानती।"

"तुम यहां से भाग क्यों रही थीं?"

"पुलिस की वर्दी देख मुझको डर लग गया था।"

"तुम्हारा यहां कोई जामिन है?"

"नहीं।"

"तो एक हज़ार रुपये का मुचलका भर दो। तुम अपना पता पुलिस वालों को दे दोगी और बुलाने पर हाज़िर हो जाओगी।"

लाखों रुपयों का सामान सील कर, और बहुत-से कागज़-पत्र अधिकार में ले सुन्दरी को छोड़ पुलिस भूषण को साथ ले गई। जाते-जाते मध्याह्न के दो बज गए थे। उनके चले जाने पर सुन्दरी ने भोजन किया और अपने शयनागार में लेट विचार करने लगी। उसको समझ आया कि यदि वह रूप के घर पहुंच, घटना की बात बताए तो पता चलेगा कि वह इसमें कारण है अथवा नहीं। यदि वह कारण नहीं तो निःसंदेह वह सहायता करेगा।

अतः वह सायंकाल की चाय पी रूप की कोठी, जो श्रीराम रोड पर थी, जा पहुंची।

रूप घर पर था। वह सुभद्रा के साथ लॉन में बैठा चाय पी रहा था। रूप ने सुन्दरी को देख पूछ लिया, "सुनाओ किसलिए आई हो यहां?"

"भूषण जी आज पकड़ लिए गए हैं।"

"मुझको विदित है।"

"तो आपने पकड़वाया है?"

"नहीं! यह शरारत प्रबोध ने की है। परन्तु सुन्दरी, तुमको भी तो उनसे रुपये लेने में संकोच नहीं हुआ।"

"वह कल दो बजे आया था। मैंने रुपया मांगा नहीं था। उसने स्वेच्छा से ही नोटों का ढेर मेरे सामने लगा दिया। इतना रुपया सामने देख, मैं लोभ में फंस गई

थी। मुझसे बहुत भूल हुई है। मैं क्षमा मांगने आई हूं।"

"किससे ?"

"आपसे और प्रबोध से भी।"

"प्रबोध से क्षमा मांग लो। मैंने तो इसमें कुछ किया नहीं।"

"आपने किया है अथवा नहीं किया, मैं इसमें कुछ नहीं कहती। मैं यह कहने आई हूं कि इसमें आप बहुत कुछ कर सकते हैं।"

"क्या कर सकता हूं ?"

"अपने भाई को छुड़ा सकते हैं।"

यह सुन रूप ने कह दिया, "सुन्दरी, चाय पियोगी ?"

सुन्दरी चाय पीकर आई थी, परन्तु वह जानती थी कि इन्कार करने से काम बिगड़ेगा। इस कारण वह चुप रही। सुभद्रा ने बैरा को बुलाया और चाय लाने के लिए कह दिया।

जब चाय आई और सुभद्रा ने एक प्याला उसके लिए बना दिया तो वह पीने लगी।

इतनी देर में रूप ने मन में पूर्ण योजना विचार कर ली। उसने पूछ लिया, "सुन्दरी, भूषण को छुड़ाने के लिए कितना कुछ खर्च करने के लिए तैयार हो ?"

"आप कितना उचित समझते हैं ?"

"तुम्हारे पास कितना है ?"

"जो कुछ कोठी से निकला है, वह तो जाएगा ही। उसके अतिरिक्त पचास हज़ार और है।"

"तो मैं प्रबोध को कह दूंगा और कदाचित् वह तैयार भी हो जाएगा।"

"इतना कुछ हो जाएगा।"

"तो ठहरो। एक घण्टे तक प्रबोध आने वाला है। उससे बात कर लो।"

सुभद्रा के चार बच्चे थे। प्रबोध सबसे बड़ा था। वह इस समय उन्नीस वर्ष का हो गया था। पिता का कारोबार वह संभालने लगा था। रात के आठ बजे प्रबोध आया और सुन्दरी को वहां देख हंस पड़ा, "क्यों ताई ! अब बुद्धि ठिकाने हुई है अथवा नहीं ?"

"ठिकाने कब नहीं थी, प्रबोध ?"

"उस दिन, इम्पीरियल में, चाय-पार्टी में क्या कहा था तुमने ?"

कुछ विचारकर वह बोली, "ओह ! मिस्टर सरकार से जो कह रही थी ?"

"हां । वह मेरा मित्र है । तुमने कहा था, 'यह समाजवादी देश है । यहां सब कुछ समाज के लिए है । सरकारी कर्मचारी समाज के हाथ-पांव हैं । इस कारण जो कुछ उनके पास जाता है, वह समाज के पास ही जाता है ।'

" 'ताई, इसमें मतभेद हो गया है । हाथ उसको कहते हैं, जो धन पैदा करता है । अतः उद्योग-धन्धों में लगे हुए लोग समाज के हाथ-पांव हैं । कर्मचारी तो मुख और पेट हैं । इस कारण जो धन मुख ने दांतों तले दबाया हुआ था, वह हाथों की उंगलियों ने मुख से निकाल लिया है । "

"निकाल लिया है न ? मैं अपने कथन के लिए क्षमा मांगने आई हूं ।"

प्रबोध ने अपने पिता की ओर देखा । रूप ने पूछ लिया, "प्रबोध, कुछ कर सकते हो अब ?"

"हां, कर तो सब कुछ सकता हूं, कीमत बहुत देनी पड़ेगी ।"

"बता दो, कितना चाहते हो ?"

"मैं कल बता सकता हूं ।"

तीन दिन की भाग-दौड़ के पश्चात् भूषण हवालात से छूटकर कोठी में आ गया । सुन्दरी उसके स्वागत के लिए बरामदे में खड़ी थी ।

नई दिल्ली कोतवाली से टेलीफोन आया था, "मोटर भेज दो । मैं आ रहा हूं ।"

सुन्दरी ने तुरन्त मोटर भेज दी और भूषण की प्रतीक्षा करने लगी । प्रबोध ने दस हज़ार रुपया खर्चे की प्रथम किश्त मांगी थी, वह दे दी गई थी । प्रबोध ने रुपया पानी की तरह बहाया और डाक्टर भूषण की एक लाख रुपये की ज़मानत हो गई । मुकदमा नहीं उठाया गया ।

भूषण आया तो साथ प्रबोध भी था । डाक्टर ने स्नान किया, कपड़े बदले और चाय पर आ बैठा । प्रबोध ने सुन्दरी को बताया, "तुम्हारे द्वारा दिया गया दस हज़ार रुपया सब व्यय हो गया है । अभी मुकदमे में वे नोट ही दाखिल किए गए हैं, जो मैंने तुम्हें दिए थे और जिनमें से कई के पीछे मजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर थे । अन्य सामान, जो तहखाने से निकला है, उसकी दो सूचियां बनी हैं और दोनों पर गवाहों के हस्ताक्षर हैं । एक सूची में तो केवल दस वस्तुएं हैं, जिनका दाम लगभग पांच सौ रुपया है । दूसरी में सब वस्तुएं दर्ज हैं और सबका मूल्य उनचास लाख आंका जाता है । अब ताया जी बताइए, आप कौन-सी सूची

उपस्थित की जानी पसन्द करते हैं ?"

"मैं तो पहली पांच सौ रुपयों के दाम की वस्तुओं की सूची उपस्थित की जानी पसन्द करता हूं।"

"यह हो सकता है। परन्तु वह सब सामान पुलिस के लोग और आपके कार्यालय के अधिकारी परस्पर बांट लेंगे। उसमें से अब आपको कुछ नहीं मिलेगा।"

"परन्तु।" सुन्दरी ने कह दिया, "यदि 'नोट' मुकदमे में उपस्थित किए गए तो डाक्टर जी को दण्ड तो मिल ही जाएगा।"

"उस दण्ड को कम कराने अथवा उसके लिए कोई बहाना बनाना काम रह जाएगा। परन्तु यह पचास लाख का सामान आपके पास कहां से आया, बताना असम्भव हो जाएगा।"

सुन्दरी और डाक्टर भूषण टुकर-टुकर मुख देखते रह गए। चाय पीते हुए प्रबोध ने डाक्टर को कहा, "मान लो कि आपकी सिफारिश लग जाए, अर्थात् आपको नोटों के मुआमिले में छुड़ा भी लिया जाए, तो भी इस लाखों रुपयों की सम्पत्ति की सफाई तो दी नहीं जा सकेगी।"

सुन्दरी ने कहा, "प्रबोध भैया ! बात तो बनी नहीं । रिश्वत तो रिश्वत ही है। दस हजार की क्या और दस लाख की क्या ?"

"पर देखो ताई। मैं परमात्मा तो हूं नहीं। मैं ताया जी महाराज को छुड़ाने का यत्न कर रहा हूं। मैंने यह कुछ किया है। शेष के लिए यत्न कर रहा हूं। पिता जी ने एक लाख रुपये की ज़मानत भी दी है। इतना कुछ भी तो कोई दूसरा करने को तैयार नहीं था।"

सुन्दरी समझ गई कि अवस्था इतनी बिगड़ गई है कि अपने को प्रबोध की दया पर छोड़ने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा नहीं। इसपर भी अब डाक्टर मुक्त था और घूम-फिरकर अपने छूटने का यत्न कर सकता था। अतः उसने कह दिया, "इस समय तो हमारा भी मस्तिष्क काम नहीं करता। मैं समझती हूं कि आप कल आ जाएं और कुछ शान्त होकर विचार करेंगे कि क्या हो सकता है।"

इस प्रकार प्रबोध को चाय-पानी पिलाकर अपनी मोटर में विदा कर दिया।

जब प्रबोध चला गया तो भूषण ने कहा, "यह धन कहां से दिया है तुमने ?"

"सैण्ट्रल बैंक के लौकर में था। वह लौकर मेरे नाम था।"

"कितना और रखा है, उसमें ?"

"तीस-चालीस के लगभग होगा। कुछ गांव में भूमि में गाड़ा हुआ रखा है। वह सोना है और रत्नादिक हैं।"

"मैं तो बिलकुल उजड़ गया हूं। यह सब जो तुम्हारे पास है और जो कुछ मेरे पास भी गुप्त रखा है, मिल-मिलाकर डेढ़-दो लाख से अधिक नहीं होगा। यदि इस ढंग से चलने लगे, जैसे प्रबोध ने आज धन लुटाया है तो मैं सर्वथा अकिंचन हो जाऊंगा। साथ ही मैं कैद से बच सकूंगा अथवा नहीं संदिग्ध है।"

"मैं सोचती हूं कि राजकुमार को यह सब कैसे पता चल गया था? हम भी कितने मूर्ख थे कि उसकी बात को हंसी-ठट्ठा समझते रहे थे।"

"अवश्य वह प्रबोध से मिला होगा और प्रबोध से ही उसने कुछ सुनकर अपना अनुमान लगाया होगा।"

"यदि आप कहें तो मैं राजकुमार और उनकी मां को मिलकर बात करूं।"

"क्या बात करोगी?"

"देखूंगी कि वे आपके लिए प्रबोध और अन्य किसीपर क्या दबाव डाल सकेंगे?"

"देख लो करके। मुझको आशा नहीं कि कुछ भी हो सके। मेरा विचार है कि तुम रूप के पिता राम जी के पास चली जाओ। वह बूढ़ा वकील कुछ सहायता करना चाहे तो बहुत कुछ कर सकता है।"

सुन्दरी मोटर के लौटकर आते ही उसमें पहले तो राजेश्वरी के घर और फिर राम से मिलने के लिए चल पड़ी।

राजेश्वरी घर पर नहीं थी। वह राजकुमार की पत्नी से मिलने उसकी मां के घर गई हुई थी। राजकुमार अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में बैठा एक पुस्तक का अनुवाद कर रहा था। सुन्दरी आई तो राजकुमार अपने कमरे से उठकर बैठक में चला आया। वह अपनी मां के साथ हैमिल्टन रोड पर रहता था।

बैठक में बैठाकर राजकुमार ने पूछ लिया, "हां, अब बताओ क्या चाहती हो।"

"कुमार! हम तुम्हारी सम्मति पर आचरण करने का विचार कर रहे थे कि यह दुर्घटना घट गई। तुमने समाचारपत्र में पढ़ लिया होगा। तुम्हारे पिता पकड़ लिए गए और अब प्रबोध के पिता द्वारा एक लाख रुपये की जमानत पर छूटकर आए हैं।"

"यह सव मुझको विदित है। मैंने तो यह पूछा है कि मेरे यहां किसलिए आई हो।"

"तुमसे राय करने कि कैसे उनको वचाया जा सकता है।"

"जो कुछ कर सकता था, मैंने कर दिया था। यदि उनमें कुछ वुद्धि होती तो वे उसी समय सव सामान, उठाने योग्य सम्पत्ति लेकर भाग जाते। मैंने कहा था—शीघ्रातिशीघ्र; परन्तु आप रात-भर वहां पड़े रहे। आपकी कोठी का तो प्रातः तीन वजे घेरा डाला गया था और मैं रात के आठ वजे आपके पास पहुंचा था। सात घण्टे आपके पास थे। इन सात घण्टों में आप यदि चाहते तो देश से भी वाहर जा सकते थे।"

"भूल यह हुई कि तुम्हारे शीघ्रातिशीघ्र का अर्थ हम घण्टों और मिनटों में नहीं लगा सके। हम दिनों और सप्ताहों में लगा वैठे थे। कुमार! अव वताओ, क्या किया जा सकता है। जहां से तुमको इस घटना की सूचना मिली थी, क्या उस स्थान से किसी प्रकार की सहायता नहीं हो सकती?"

"क्या सहायता चाहती हैं आप?"

"मुकदमा वापस ले लिया जाए।"

"मैं देश का प्रधानमन्त्री नहीं हूं। प्रधानमन्त्री भी इसमें कुछ कर सकेगा, मुझको सन्देह है।"

"परन्तु तुमको यह सव सूचना कहां से मिली थी?"

"यह वताने का न तो मेरा अधिकार है और न ही इच्छा।"

"इच्छा क्यों नहीं?"

"यह अव आपकी इस कठिनाई की घड़ी में वताऊंगा नहीं। मैं एक गरीव मां का वेटा, मेहनत-मजदूरी से जीवन-यापन करने वाला, भला आप जैसे श्रीमानों की क्या सहायता कर सकता हूं?"

"मैं तुमको भी श्रीमान वनाने की सामर्थ्य रखती हूं।"

"मुझको उसमें रुचि नहीं। मौसी! मैं सत्य कहता हूं कि आप लोगों की सहायता करता, यदि मेरी सामर्थ्य में कुछ भी होता। हां! एक राय दे सकता हूं। परन्तु मैं जानता हूं कि तुम मानोगी नहीं।"

"क्या, वता दो।"

"ईमानदारी से सव रुपया सरकार के पास जमा करा दो और अपनी स्मृति

के अनुसार, जो-जो, जिस-जिससे आज तक अनुचित रूप में प्राप्त किया है, लिखा दो और अपने किए के प्रायश्चित्त के रूप में अपने को सर्वथा भिखारी के रूप में जज की दया पर छोड़ दो।"

"कौन मानेगा इसको ?"

"एक परमात्मा ही सबके हृदय की बात जानता है और वह सच्चे हृदय से पश्चात्ताप करने वालों की सहायता करता है।"

इस मुसीबत की घड़ी में भी सुन्दरी की हंसी निकल गई। इस समय राजेश्वरी आ पहुंची और वह सुन्दरी को बैठा देख आश्चर्य से देखती रह गई।

"मां ! क्या हाल है ?" राजकुमार ने अपनी पत्नी के विषय में पूछ लिया।

"लड़का हुआ है।"

"तो मां ! तुम दादी बन गई हो ?"

"पर संतोष को बहुत कष्ट हुआ है। कुछ काट-छांट भी करनी पड़ी है। हलका औपरेशन हुआ है। डाक्टर कहता है कि चिन्ता की बात नहीं, परन्तु कष्ट की बात तो है ही।"

"मां, मैं जाता हूं।"

"तुम क्या करोगे जाकर ?"

"जाकर उसके पास बैठूंगा।"

"अच्छा जाओ। देख आओ। परन्तु बैठने की आवश्यकता नहीं होगी। संतोष की मां रहेगी, और तुम चले आना।"

३

राजकुमार को भूषण के विपरीत किए गए षड्यन्त्र का ज्ञान विदेश मंत्रालय से हुआ था। वहां उसका अधिकारी, जो विदेशों से आने वाली चिट्ठी-पत्री का अनुवाद कराया करता था, कह बैठा, "आज एक बहुत बड़ी मुर्गी पकड़ी जाने वाली है।"

"कौन है ?"

"एक भूषणदेव है। एम० ए० है, पी-एच० डी० है। मद्रे में प्रोफेसरी

करता-करता राम-नाम की लूट में हिस्सा लेने के लिए उद्योग मंत्रालय में आ गया। समाजवादी विचार रखने के कारण नौकरी मिल गई और लगे समाज-वाद का प्रचार करने।"

"परन्तु क्या किया है उसने?" राजकुमार ने बताया नहीं कि वह उसका पिता ही है।

अधिकारी ने बताया, "मैं अभी-अभी एक स्थान से आ रहा हूं और वहां नई दिल्ली के पुलिस अधिकारी बैठे योजना बना रहे थे।"

राजकुमार से रहस्य न खोलने की सौगन्ध ली हुई थी। इससे उसके विभाग का अधिकारी निश्चित हो बता रहा था। उसने बताया, "आज रात ही उसको पकड़ लेने का प्रबन्ध किया जा चुका है।"

राजकुमार सायं छः बजे घर पहुंचा तो उसने उक्त सूचना मां को दे दी। मां ने कह दिया, "यह तो बहुत बुरा होगा।"

"मां! हम क्या कर सकते हैं इसमें?"

"हम उनको सूचना दे सकते हैं कि वे अपनी रक्षा का प्रबन्ध कर लें।"

"क्यों?"

"राज! वे तुम्हारे पिता हैं।"

"पर मां, वे बहुत दुष्ट हैं।"

"बेटा! दुष्ट माता-पिता का भी तो श्राद्ध किया जाता है।"

"मैं अपने कार्यालय से प्राप्त रहस्य किसीको बता नहीं सकता।"

"ठीक है। एक तो यह तुम्हारे दफ्तर की बात नहीं है। दूसरे तुमको न तो दफ्तर का नाम लेना है, न ही पूर्ण विवरण बताना है। तुमको तो केवल यह कहना चाहिए कि उनका जीवन और सब कुछ खतरे में है और उनको शीघ्रातिशीघ्र भाग जाना चाहिए।"

"मां! यह तो तुम एक महादुष्ट को सहायता कर रही हो।"

"राज! वह मेरा पति है। मैंने उसके साथ जीवन की कुछ सुख की घड़ियां व्यतीत की हैं और यह अंतिम भेंट उसकी स्मृति में है।"

राजकुमार समझ गया कि मां ने उसके लिए जो कुछ किया है, यह तो उसका एक बहुत ही तुच्छ प्रतिकार है। वह बिना किसी हील-हुज्जत के वहां से चल पड़ा। उसने टैक्सी की और महादेव रोड पर जा पहुंचा।

अगले दिन वह कार्यालय में पहुंचा तो उसके अधिकारी ने भूषण की सारी सूचना दे दी। उसने बताया, "इस पूर्ण विषय की कार्रवाई मेरे एक सम्बन्धी पुलिस विभाग में हैं, वे कर रहे हैं। उनका कहना है कि लाखों की सम्पत्ति मिली है। साथ ही कुछ नोट मिले हैं, जिनपर मजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर कराए गए थे।"

"किनके नोट थे?"

"एक रूपकृष्ण ठेकेदार है, उसके लड़के प्रबोध ने मुखबरी की थी और वास्तव में उसने ही यत्न कर इस पाजी डाक्टर को पकड़वाया है।"

राजकुमार कभी-कभी प्रबोध इत्यादि से मिलने जाया करता था। उस दिन शेष समाचार लेने के लिए वह उनकी कोठी पर जा पहुंचा। वहां पर पहले ही भूषण की चर्चा हो रही थी। वहां से उसको यह पता चला कि उस घर में दो दल हैं। एक में रामकुमार और उसकी पत्नी रोहिणी थी। वे भूषण को छुड़ाने के पक्ष में थे। प्रबोध अभी अविवाहित था। वह और उसकी मां सुभद्रा, भूषण को फांसी पर लटकवा देने के पक्ष में थे। रूपकृष्ण तटस्थ था। वह दोनों में वाद-विवाद सुन आनन्द ले रहा था।

राजकुमार पहुंचा तो रूप ने ही उसको भी इस वाद-विवाद में सम्मिलित कर लिया, उसने कहा, "लो राज! तुम भी अपने को बहुत बड़ा विद्वान मानते हो। बताओ, इसमें क्या करना चाहिए?"

राज ने नहीं बताया कि वह भूषण ताया के विषय में कुछ भी जानता है। इससे वह चुप प्रश्नभरी दृष्टि से प्रबोध के पिता के मुख पर देखता रहा। कहानी प्रबोध ने सुनाई। उसने इसमें अपनी कारगुजारी सुनाई तो राज ने पूछ लिया, "अब क्या होगा?"

"होगा यह कि ताया जी महाराज को सात वर्ष का कठोर कैद का दण्ड मिलेगा। मैं चाहता हूं कि जो कुछ अभी उस बदकार औरत सुन्दरी के पास छुपा-कर रखा है, वह खर्च हो जाए, और वह चांदनी चौक में खड़ी भीख मांगने लगे तो चित्त को शान्ति मिले।"

राम हंस पड़ा और हंसता हुआ कहने लगा, "प्रबोध, तुम भाग्यविधाता कब से बने हो?"

"जब से आपके घर में जन्म लिया है।"

"बेटा! अपनी समेटो, दूसरों से द्वेष कुछ अच्छी बात नहीं।"

"भापा ! मुझको दो वातों का रोप है। एक यह कि भूपण समाजवादी वना घूमता था। वह अपनी मां को हमारे परनाना की सम्पत्ति मिलने पर कहता था कि हराम की कमाई है। अपने वड़ों को गाली देने का मजा चखाना चाहता हूं। पिता जी को भी तो वह कहा करता था, जुएं की आय की लाग है। एक दिन कहता था, सव सम्पत्ति सरकार की है। इत्यादि। वगल में छुरी और मुख में राम-राम। सव भेद प्रकट हो गयाहै।"

राम ने गम्भीर हो कहा, "देखो वेटा प्रवोध ! हम सव परमात्मा के अधीन हैं और जो कुछ होता है अपने कर्मफल से होता है। सुख, सम्पदा, पुत्र, कलत्र, भोग, ऐश्वर्य सव कुछ पूर्वजन्म के नेक कर्मों के कारण से ही मिलते हैं और फिर जव कोई दुर्घटना होती है तो उन पुण्य कर्मों का फल समाप्त हो जाने पर ही होती है। इससे मत समझो कि यह हो तो वह करूं और वह करूंगा तो यह होगा। यह सव व्यर्थ का अभिमान है। तुम अपने कर्मों को देखो और अपने दिनों की वात विचार करो। कौन जाने क्या होने वाला है।"

राम के मन में अभी भी गौरी वहिन की शिक्षा का प्रभाव था। यूं तो रूप भी गौरी का चेला था और वह अपने पिता की वात को ठीक समझता था, परन्तु उसकी पत्नी सुभद्रा अपने लड़के प्रवोध का पक्ष ले रही थी और रूप का साहस नहीं होता था कि उसका विरोध कर सके। वह एक अतिधनी वाप की वेटी होने से सदा अपने पति पर और उसके माता-पिता पर शासन करती रही थी। उसने एक वात कही, "क्या पुण्य है और क्या पाप है इसका निर्णय तो आज तक कोई नहीं कर सका। न ही इस वात का ज्ञान पूर्ण है कि परमात्मा कहां है, और क्या करता रहता है। इस कारण अपनी वुद्धि से विचार कर ही तो वात की जा सकती है। मेरा मन कहता है कि इन ठग समाजवादियों को निःशेष करने के लिए पूर्ण यत्न करना चाहिए। मैं जानती हूं कि यदि इन समाजवादियों का वस चल गया तो ये सभी मित्रता, रिश्तेदारी और किए का एहसान भूलकर पैसे वालों की हड्डियां तक पीस डालेंगे। इन्होंने, सव कम्यूनिस्ट देशों में, यही कुछ किया है। अतएव, इनको तो पानी भी पीने नहीं देना चाहिए।"

"परन्तु वेटा !" राम ने कह दिया, "यह भूषण तो कागज़ी पहलवान है। यह नाम का समाजवादी है। इसकी हत्या कर तो समाजवाद समाप्त नहीं होगा।"

इसपर राजकुमार वोल उठा, "भापा ! मैं भूपण की सिफारिश नहीं करना

चाहता, परन्तु एक बात का भ्रम निवारण करने के लिए कहता हूं। इन समाजवादियों की बात ही कहता हूं। समाजवाद हो चाहे पूंजीवाद हो, कुछ भी बिना धन के चल नहीं सकता। यह सोना, जवाहरात इत्यादि तो धन का मूर्तरूप ही है। समाजवादी भी इसको एकत्रित करते हैं और फिर इनमें भी जो नेता बन जाते हैं, वह उस एकत्रित धन का अपनी नेतागीरी स्थिर रखने के लिए प्रयोग करते हैं।"

"आप पैसे वालों से एक बात उनमें अधिक है। आप तो केवल सोना-चांदी को ही धन मानते हैं और वे इसके भी स्रोत मानव-परिश्रम को धन समझ चुके हैं। जहां आप सोने-चांदी के टुकड़ों को तिजोरियों में जमा रखना चाहते हैं, वहां वे इसके स्रोत मानव-परिश्रम को भी अपने अधिकार में रखना चाहते हैं।

"वास्तव में समाज का हित न इनके पास है न आपके पास। यदि उनको निःशेष करना है तो आपको क्यों नहीं?"

"तो समाजवाद ढोंग है?"

"बिलकुल। वास्तव में यदि कोई वाद इस संसार में चलना चाहिए तो वह धर्मवाद है। धर्म है सबसे वह व्यवहार करना जो कोई अपने से किया जाना पसन्द करता हो। एक क्षण के लिए अपने को दूसरे के स्थान पर बैठा और उसीकी स्थिति में पड़ा हुआ समझ लो और जो कुछ तुम अपने साथ दूसरों से आशा और इच्छा करते हो, वही तुम स्वयं उसके साथ करो।"

सुभद्रा समझ रही थी कि राजकुमार अपने पिता की अति योग्यता से सिफारिश कर रहा है। इस कारण उसने उसको गलत सिद्ध करने के लिए पूछ लिया, "यदि तुम हमारी स्थिति में होते तो क्या करते?"

"मैं तो उनके पीछे पड़ने के स्थान पर अपने को धर्मपथ पर आरूढ़ करने का यत्न करता। मैं न कभी बेईमानी करता और न कभी किसी भी बेईमान की भांति अपराधियों के कठघरे में खड़ा होने के योग्य होता। शेष पुलिस वालों के करने के लिए छोड़ देता।"

"तो तुम समझते हो कि हम बेईमान हैं?"

"चाची, मैंने चाचा जी के बही-खाते देखे नहीं। इससे मैं कुछ नहीं जानता और मैंने आपके विपरीत कुछ नहीं कहा। मैंने तो एक सिद्धान्तात्मक बात कही है। यदि आप समझती हैं कि यहां पर दाल में काला नहीं है और आप कभी उन कठघरे में खड़े हो सकते ही नहीं तो आपका अधिकार है कि दूसरों को फंसाने में

सहयोग दें।"

"हम अपने को ऐसा ही समझते हैं।"

"तो ठीक है।"

रूप ने अंतिम निर्णय दे दिया, "राज की बात सोलह आने ठीक है। प्रबोध! यदि तुम सत्य हृदय से समझते हो कि तुमने कभी कोई ऐसी बात नहीं की, जिससे तुम अपराधी के कठघरे में खड़े किए जा सकते हो, तो तुम भूषण को फांसी चढ़वा सकते हो।"

राम ने बात बदल दी, "राज! वह कैसी है?"

"एक-दो दिन में मां बनने वाली है।"

"भगवान करे तुम्हारे घर में भी बच्चों की चूं-पीं होने लगे।"

"और काहन ताया की भांति आधी दर्जन बच्चे घर में टट्टी-पेशाब करते फिरें।" प्रबोध ने हंसते हुए कहा।

सब हंसने लगे।

अगले दिन राजकुमार को पता चल गया कि लाखों रुपयों का माल जो भूषण के घर से मिला था, वह कुछ लोगों ने परस्पर बांट लिया है। और तलाशी में मिली वस्तुओं में नहीं लिखा गया। तीसरे दिन सुन्दरी राजकुमार से मिलने आई।

राजकुमार अपनी राय देकर अपने ससुराल, जो निकलसन रोड पर थी, चला गया। राजेश्वरी ने सुन्दरी की बात सुनी तो कह दिया, "बहिन! रूपकृष्ण के पास जाओ। वह सब करने की सामर्थ्य रखता है।"

"परन्तु बहिन! वह तो हमको इस प्रकार निचोड़ लेना चाहता है, जैसे रस निकालने वाले नींबू को निचोड़ लेते हैं।"

"कुछ भी हो। यदि अब इस घर में किसीके मन में दया है तो रूपकृष्ण के ही है और यदि वह भी तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता, तो फिर समझो कि कुछ नहीं हो सकेगा।"

सुन्दरी वहां से राम के पास जा पहुंची। राम तो सर्वथा अपने पुत्र और बहू के आश्रित था, इससे उसने सुन्दरी की बात सुनी तो रूप को बुला बैठा। उस समय सुभद्रा अपने मां के घर गई हुई थी और प्रबोध अभी घर आया नहीं था। रूप के अन्य बच्चे अभी छोटे थे। अतः राम ने रूप को स्वतन्त्रतापूर्वक बात करने के लिए सुन्दरी के सामने बुला लिया।

"रूप। यह भूषण की श्रीमती आई हैं।"

"भापा ! व्यर्थ है। मैं कुछ नहीं कर सकता। तुम जानते हो कि सुभद्रा और प्रबोध मेरी एक नहीं चलने देते।"

"पर मैं पूछता हूं, तुम सुभद्रा के दास हो ? तुममें आत्मसम्मान कुछ भी है तो अपने मन की बात करो।

"पहले यह बताओ कि तुम क्या करना चाहते हो ?"

"भापा ! मैंने भूषण दादा की जमानत भी अपनी इच्छा से दी है। सुभद्रा तो इसके लिए भी राय नहीं देती थी। मैंने जमानत इसीलिए दी थी कि दादा मुझसे मिलकर योजना बनाएंगे। वे स्वयं तो आए नहीं और भेज दिया है इसको। इससे मैं बात नहीं करना चाहता।"

"मैंने क्या पाप किया है ?"

"तुमने मति भ्रष्ट की है दादा की। तुम मद्य का सेवन करती हो और तुम ही उसका सब लेन-देन करती हो।"

"परन्तु रूप जी ! क्या मैं उनकी इच्छा के बिना कुछ भी कर सकती थी ?"

"मैं तो सब खराबियों का मूल सुन्दर औरत को समझता हूं।"

इसपर राम ने कह दिया, "परन्तु रूप ! तुम्हारी पत्नी तो बहुत सुन्दर नहीं है।"

"भापा ! उसमें एक अन्य दोष है। वह धनी बाप की बेटी है। यह दोष शारीरिक सौंदर्य से तो कम है, इसपर भी बहुत प्रबल है। रूप, धन, यौवन सब पाप की जड़ हैं।"

राम हंस पड़ा। हंसकर बोला, "रूप ! अपनी मां का सौंदर्य स्मरण है ?"

"हां भापा !"

"परन्तु मेरी मति तो भ्रष्ट हुई नहीं थी, उसके कारण।"

"हुई तो थी। उस जमाने में जितनी आपकी सामर्थ्य थी, उसके अनुरूप ही तो खराबी हो सकती थी।"

"कैसी अनर्गल बात करते हो रूप ? मैं सौ-डेढ़ सौ रुपया महीना कमाने वाला वकील तुमको एम० ए० तक पढ़ा सका था। तुम्हारी चारों बहिनों को पढ़ा-लिखाकर अच्छे घरों में विवाह कर दिया था। तुम्हारा विवाह भी ईश्वर की कृपा से बहुत अच्छे परिवार में हुआ था। मेरे पर तो तुम्हारी मां के सौन्दर्य का

कोई बुरा प्रभाव हुआ नहीं।

"और तुम्हारी धनी बाप की बेटी, पत्नी ने तुम्हारे बड़े लड़के को दसवीं जमायत तक पढ़ाकर बस कर दिया। तुम्हारी दोनों लड़कियां प्रतिवर्ष मास्टर रख-रखकर पास होती हैं और कमल तो नीम-पागल ही हुआ है।"

रूप इस सब वस्तुस्थिति को जानता था, परन्तु इसका कारण नहीं समझता था। उसने आज बात चली तो पूछ लिया, "पर भापा! मैं समझ नहीं सका कि इसमें कारण क्या है। सुभद्रा स्वयं तो बहुत समझदार और पढ़ने-लिखने में बहुत तेज़ है।"

"कारण मैं बताता हूं।" राम ने आंखें मूंदकर विचार करते हुए कह दिया, "इसमें एक कारण सुभद्रा का धनी होना है। वह घी बहुत ज़्यादा खाती है। वह मिठाई, दूध-मलाई की बहुत शौकीन है। यही बात है, उसके सब बच्चों की रुचि चिकनी वस्तुएं खाने में है। इसीसे सबके मस्तिष्क में चर्बी बैठ गई है। धनी होने से एक और दोष उनमें उत्पन्न हो गया है। वे समझने लगी हैं कि संसार में सब काम धन से निकल सकते हैं। पाप, पुण्य, आत्मा, परमात्मा सब धन से सीधे हो जाते हैं। मेरे ज़माने में भैया शिव परमात्मा से डरता था। वह गौ की झूठी सौगन्ध न खाकर लाखों रुपये छोड़ने के लिए राज़ी हो गया था।

"परन्तु तुम्हारी इस अवस्था का एक दूसरा कारण भी है। वह परिवार में परस्पर सहानुभूति और सहायता नहीं रही जो हमारे ज़माने में थी। तुम सब लोग 'सैल्फ सेन्टर्ड' (निपट स्वार्थी) हो गए हो।

"इन दोनों कारणों के अतिरिक्त एक अन्य बड़ा कारण भी है। वह है कि तुम बैल हो। यदि तुममें आत्मबल होता तो तुम उक्त दोनों कारणों को सीमा से बढ़ने न देते।"

"मैं क्या करता और क्या करूं?"

"मेरा कहा मानो। भूषण की सहायता करो। मैं सत्य कहता हूं कि भूषण के व्यवहार को पसन्द नहीं करता, और यह उसको कहो कि अपना व्यवहार ठीक रखे। परन्तु वह तुम्हारी बुआ का लड़का है। उसकी यथासम्भव सहायता करो।"

"तो सुन्दरी।" रूप ने सुन्दरी को कह दिया, "भूषण जी को कहना। कल प्रातः मुझसे मिले। यहां इस कोठी में नहीं। मैं कुदसिया बाग में आ जाऊंगा, वे भी वहां आ जाएं। हम पृथक् में बैठ बातचीत करेंगे। उसको कहना, मैं ठीक छः बजे

वहां पहुंचूंगा ।"

अगले दिन रूप समय पर कुदसिया बाग में जा पहुंचा तो भूषण भी आ गया। रूप ने बताया, " मैं इस समय प्रातः भ्रमण के लिए यहां आया करता हूं और मैं चाहता हूं कि इस समय ही हम मिला करें तो ठीक रहेगा।

" बताओ इस कठिनाई से बचने के लिए क्या त्याग करना चाहते हो ? "

"मैं तहखाने से निकला पूर्ण धन देने के लिए तैयार हूं।"

"भूषण जी ! वह तो गया। उसके पच्चीस भाग होकर बंट गया है। एक मुख्याधिकारी को पच्चीस प्रतिशत गया है। पच्चीस प्रतिशत रूप और मजिस्ट्रेट अग्निहोत्री के पास आया है। शेष पचास प्रतिशत लगभग बीस आदमियों में बंटा है और उसका खुर-खोज भी नहीं रहा।"

"और तो मेरे पास कुछ है नहीं।"

"भूषण दादा ! ऐसी बात मत करो। देखो, मैंने रात-भर एक योजना विचार की है। तुम अब बिल्कुल बच तो सकते नहीं। कुछ न कुछ दण्ड अवश्य मिलेगा। वह सम्पत्ति जो तहखाने में से निकली है, मिल सकती नहीं। इससे मैं दो दिशाओं पर विचार करता हूं। एक यह कि तुमको कम से कम दण्ड मिले, जिससे तुम जीवित ही जेल से बाहर आ सको और दूसरे जो शेष तुम्हारे पास बचा है, उसका कम से कम खर्च हो। मुझको तुम्हारे दस हजार का, जो पिछले तीन-चार दिन में व्यय हुआ है, भारी दुःख है।

" सुनो। तुमको न्यायालय में पेश किया जाए तो तुम बयान दे दो कि तुम लोभ में आकर यह दस हजार रुपया, जो प्रबोध ने दिया था, ले बैठे थे। इससे पहले तुमको इस प्रकार के काम करने का न तो अभ्यास था न ही रुचि। तुमसे भूल हुई है। तुम अपने को जज की दया पर छोड़ते हो। भविष्य में ऐसा न करने का वचन देते हो।

"वह सब धन जो तुम्हारे पास है, वह सुन्दरी को दे दो। उसको मैं एक बहुत योग्य वकील कर दूंगा। यह यत्न किया जाएगा कि तुमको कम से कम दण्ड हो। तुम उसकी अपील मत करना और कैद के दिनों में तुम्हारे धन से तुमको अधिक से अधिक सुख-सुविधा जेल में पहुंचाने का यत्न किया जाएगा।

"जब तुम आओगे तो फिर तुम किसी पहाड़ी सस्ते-से स्थान पर रहकर जीवन व्यतीत कर सकोगे। देखो, मैं तुम्हारी सदा सहायता करूंगा, परन्तु मानो

पत्नी और प्रबोध से चोरी-चोरी।"

"वे मेरे विरुद्ध क्यों हैं ?"

"क्या करोगे जानकर ? यदि बात स्वीकार हो तो कल यहां इसी समय आ जाना। मैं तुमको एक परिचित वकील के पास ले चलूंगा और उसको अपना दृष्टिकोण समझा दूंगा। वह तुम्हारा बयान लिख देगा। तुम वह निश्चित तिथि को न्यायाधीश के सामने स्वयं उपस्थित कर देना। इसके विषय में सुन्दरी के अतिरिक्त किसीको मत बताना। यदि तुम्हारे विरोधियों को पता चल गया तो वे तुम्हारे बयान को, कि तुमने यह पहली रिश्वत ली है, झूठी सिद्ध कर देंगे।"

घर जाकर भूषण ने सुन्दरी से बात की और उसकी सहमति से वह अगले दिन रूपकृष्ण से मिला और वहां मिस्टर खन्ना से बातचीत हुई तो वह मुकदमा लेने पर तैयार हो गया।

निश्चित तिथि को भूषण ने अपना लिखित बयान दे दिया। उसमें उसने अपना दोष मान लिया। अब प्रबोध को समझ आई कि तहखाने वाला धन बांट लेने से और उसको मुकदमे का अंश न बनाने से भूषण के खिलाफ मुकद्दमा दुर्बल पड़ गया है।

मजिस्ट्रेट ने पुलिस से कहा, "इस बयान पर क्या आपत्ति है ?" सरकारी वकील इसके लिए तैयार न था। उसने केवल यह कहा, "हमारा केवल यही कहना है कि इस व्यक्ति को कड़ा से कड़ा दण्ड मिलना चाहिए, जिससे अन्य रिश्वत लेने वालों को सबक मिले।"

मजिस्ट्रेट ने फैसले की तारीख नियत कर दी। उस दिन मजिस्ट्रेट ने स्पष्ट कह दिया, "अपराधी के अपने अपराध मान लेने और आगे से ऐसा न करने का वचन देने से मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि छः मास के कठोर दण्ड से न्याय का उद्देश्य पूर्ण होता है। पुलिस के अपने बयान से यह सिद्ध होता है कि अपराधी स्वभाव से अपराध करने वाला नहीं।"

४

न्यायालय में मजिस्ट्रेट का निर्णय सुनने के लिए घर के कई प्राणी गए हुए थे। सुन्दरी तो थी ही, साथ ही राम, रूप, प्रबोध, राजकुमार, काहन और उसका

सबसे बड़ा लड़का विश्वम्भर भी था। वह पहली पत्नी से था। वह इस समय बाईस वर्ष का हो गया था। काहन ने उसको विदेश मंत्रालय में नौकर करा दिया था और राजकुमार से उसकी बहुत घनिष्ठ मैत्री थी।

राजकुमार ने निर्णय हो जाने के पश्चात् भूषण के समीप आकर कहा, "पिता जी ! ईश्वर का धन्यवाद है कि सहज ही छूट गए हैं।'

"राजकुमार ! सुन्दरी को अपने घर ले जा सकोगे ?"

"घर माता जी का है। उनसे पूछकर ही बता सकता हूं।"

"उसको एक सप्ताह के भीतर मकान खाली करना है। वह तो रूप की कोठी में जाना चाहती है। परन्तु मैं पसन्द नहीं करता।"

"क्यों ?"

"प्रबोध के कारण। वह अच्छा लड़का नहीं।"

"वह कोई मकान भाड़े पर लेकर रह सकती है।"

भूषण चुप रहा। राजकुमार इसमें किसी प्रकार की रुचि नहीं रखता था। साथ ही वह जानता था, उसकी मां इस मद्य-सेवी औरत को घर पर नहीं आने देगी।

जब भूषण पुलिस वैन में चला गया तो राम ने प्रबोध से कहा, "क्यों बेटा प्रबोध ! बहुत डींग हांक रहे थे न कि इसे सात वर्ष की कैद कराकर सांस लोगे !"

"मैं यत्न करूंगा कि पुलिस अपील कर दे।"

इसपर रूप ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "ठीक है बरखुरदार ! अब पुलिस के मुकदमे ही लड़ा करो। कुछ काम-धन्धे करने की क्या आवश्यकता है ?"

"पिता जी ! काम तो किया है। कर रहा हूं। एक महीने में नकद छः लाख रुपये का लाभ हुआ है।"

इस समय सब अपनी-अपनी मोटर के पास आकर खड़े हो गए थे। सुन्दरी ने राजकुमार को कहा, "आओ राजकुमार, मैं तुमको घर छोड़ दूंगी।"

"मौसी ! बहुत चक्कर पड़ेगा तुमको।"

"नहीं। मैं तुम्हारी मां से मिलने जा रही हूं।"

राजकुमार को यह समझ आया कि उसकी मां के घर में रहने की बात करने जा रही है, इससे वह उसके साथ जाना नहीं चाहता था, जिससे मां उसको स्वतन्त्रतापूर्वक रखने अथवा न रखने का विचार कर सके।

उसने कह दिया, "मुझको अपने दफ्तर में कुछ काम है। मैं बस में सीधा वहां जाऊंगा।"

इस प्रकार वह उसे टाल गया। जब सुन्दरी अपनी गाड़ी पर चलने लगी तो रूप ने आगे आ पूछ लिया, "अब तो सरकारी बंगला खाली करना पड़ेगा।"

"जी! आशा कर रही हूं कि एक सप्ताह के भीतर खाली कर दूंगी।"

"तो कहां जा रही हो?"

"मैं दिल्ली से बाहर जाना नहीं चाहती। कहीं भाड़े का मकान देखना चाहती हूं।"

"मकान तो मैं दे सकता हूं। मगर···।"

"हां! हां!! मगर क्या?"

"घर वालों से चोरी···"

सुन्दरी ने मुस्कराकर पूछा, "घर वालों से अथवा घर वाली से?"

"एक ही बात है।"

"तो कब दिखाइएगा मकान?"

"तुम कोठी पर कब मिलोगी?"

"आप अपनी सुविधा का समय बताइए। मैं तो आजकल बेकार हूं।"

"तो रात के खाना खाने के समय आऊंगा।"

इतना कह रूपकृष्ण अपने लड़के प्रबोध के पास चला। उनके साथ मोटर में बैठकर वह श्रीराम रोड को चल पड़ा। मार्ग में राम ने पूछ लिया, "क्या कहती थी वह औरत?"

"यही कि उसको किसी मकान की आवश्यकता है।"

"तो तुमने क्या कहा है?"

"मैंने कहा है, प्रबोध के पास बहुत जगह खाली है।"

"बहुत मूर्ख हो, रूप!"

"क्यों भापा! क्या मूर्खता की है?"

"प्रबोध के पास कौन-सी जगह खाली है?"

"क्यों प्रबोध? कोई मकान खाली नहीं है क्या?"

"मकान तो पिता जी कई खाली हैं। परन्तु मैं इस औरत से किसी भी प्रकार का सम्पर्क रखना नहीं चाहता।"

"क्यों ? इसमें क्या खराबी है ?"

"तो आपको वह एक भली औरत दिखाई देती है ?"

इसपर राम ने कह दिया, "प्रबोध ठीक कहता है। गन्दगी में हाथ डालने से कुछ कल्याण की आशा नहीं की जा सकती।"

रूप चुप रहा। घर पहुंच, सायंकाल की चाय पी गई। प्रबोध ने कह दिया, "मां आज सिनेमा देखने जा रही है।"

"साथ कौन-कौन जा रहा है ?"

"मैं और कमल। सोमा और दिति बहिन घर पर स्कूल का काम करेंगी।"

"उनको साथ क्यों नहीं ले जा रहे ?" राम ने पूछ लिया।

"पिता जी ! वे आपके साथ जाएंगी।"

"पर मैं तो सिनेमा देखने जाता नहीं।"

"तो वे भापा जी के साथ चली जाएंगी।"

बात समाप्त हो गई। रूप उठकर कोठी में चला गया। वह अभी ड्राइंग रूम में बैठा था कि सोमा और दिति आ गईं और बोलीं, "पिता जी ! मां को कह दीजिए, हमको भी सिनेमा देखने ले चलें।"

"मां को बुलाओ।"

सोमा गई और मां को बुला लाई। सुभद्रा ने आते ही कह दिया, "सोमा दो बार नौवीं श्रेणी में फेल हो चुकी है। जब तक वह परीक्षा पास नहीं करेगी, उसको मैं साथ नहीं ले जाऊंगी।"

"और कमल को क्यों ले जा रही हो ! उसने भी तो तीसरी जमायत दो वर्ष में पास की है और वह भी मास्टर की सहायता से।"

"यह तो दो वर्ष में भी पास नहीं कर सकी।"

"और प्रबोध तो तीन बार फेल होकर पढ़ना ही छोड़ चुका है।"

"परन्तु वह तो व्यवसाय में लग गया है। लाखों कमाकर लाने लगा है।"

"अच्छा सोमा !" राम ने कह दिया, "तुम भी कल से पढ़ाई बन्द कर दो तो तुमको भी तुम्हारी मां सिनेमा देखने ले जाएगी।"

"चोटी मरोड़ दूंगी। यदि ऐसा किया तो।" सुभद्रा का कहना था।

रूप देख रहा था कि यह भूमि ही खराब है।

सोमा और दिति मन मसोसकर अपने कमरे में जा पढ़ने लगीं।

सुभद्रा अपने दोनों लड़कों के साथ प्लाज़ा में एक पिक्चर देखने चली गई। रूप ने टैक्सी मंगवाई और चल दिया। सुभद्रा इत्यादि सब सिनेमा से लौटे तो रूप वापस नहीं आया था। सुभद्रा ने अपनी सास से पूछा तो उसने बता दिया, "प्रबोध के बाबा को बताकर गया होगा।"

"और वे कहां हैं?"

"राजकुमार के साथ कहीं गए हैं।"

सुभद्रा बाप-बेटा दोनों के व्यवहार को पसन्द नहीं करती थी। उसने कह दिया, "इस अवस्था में रात के समय सड़कों पर भटकना तो बिलकुल बेहूदी बात है।"

"बहू! आ जाएंगे। चिन्ता किस बात की कर रही हो?"

रूप रात के बारह बजे लौटा। सुभद्रा अपने पति की प्रतीक्षा कर रही थी। रूप ने आते ही पूछ लिया, "तुम सोईं नहीं?"

"मुझको आज भय लग रहा है।"

"भय किस बात का?"

"आप कहां रहे हैं इतनी देर तक?"

"मैं भी पिक्चर देखने गया था। साढ़े नौ बजे के शो में।"

"कौन पिक्चर देखने गए थे?"

"ताज!"

"मुझको पसन्द नहीं है।"

"परन्तु तुम देख चुकी हो क्या?"

"हां। एक दिन गई थी।"

"तुमने बताया नहीं।"

"मैंने आवश्यकता नहीं समझी।"

"अच्छा! आज क्या देखकर आई हो?"

"टू मिलियन ईयर्स एगो?"

"कैसी है यह पिक्चर?"

"सप्लेंडिड। हमने इसको बहुत पसन्द किया है।"

"अच्छा! अब सो जाओ।"

"भोजन कहां किया है?"

"गेलार्ड में।"

"हमने वेंगर में खाया है।"

दोनों सो गए। अगले दिन पुनः रूप काम पर जाने के समय से बहुत पहले ही घर से चला गया था।

राम को पिछली रात राजकुमार अपने घर ले गया था। राजेश्वरी ने राय करने के लिए बुला भेजा था। राजेश्वरी ने बताया, "भूषण की उपपत्नी सुन्दरी आई थी और इस घर में रहने की स्वीकृति चाहती थी। मैंने उससे कारण पूछा तो कहने लगी कि राजकुमार के पिता उसको यहां रहने के लिए कह गए हैं।"

राम ने पूछ लिया, "तुमने क्या कहा है?"

"मैंने यही कहा है कि वह मद्य का सेवन करती है। इससे उसको यहां कष्ट होगा।

"इसपर उसने कहा है कि वह इस घर में रहती हुई मद्य का सेवन नहीं करेगी। वह सदा मेरे अनुशासन में रहेगी।"

"देख लो। मैं समझता हूं कि उसको यहां रखना नहीं चाहिए।"

"तब ठीक है। वह कल आने के लिए कह गई है। मैं उसको कोई पृथक् मकान लेने में सहायता कर दूंगी।"

"हां, क्यों राजकुमार! तुम्हारा क्या विचार है?"

"यही बात मैंने मां से कही है।"

"राजेश्वरी! इसमें मुझसे राय क्यों कर रही हो?"

"इस समय घर में पुरखा आप हैं। कदाचित् राज के पिता आपसे कुछ कह गए हों। इससे मैंने आपसे राय करनी ठीक समझी है।"

"देखो राजेश्वरी! अब न घर है न घर का कोई पुरखा है। यूं तो लाला सुलक्षणमल की सन्तान दूर-दूर तक फैल गई है। हम सैकड़ों की संख्या में हैं। परन्तु परस्पर वह मेल-मुलाकात भी नहीं रही, जो किसी पड़ोसी से भी होती थी। लाला जी का मन्दिर लाला गोवर्धनलाल के संन्यास लेते ही दादा महेश के अधिकार में चला गया है और पाकिस्तान बनने के समय से अब तक वह भाड़े पर चढ़ा रहता है। उसके हिसाब-किताब का कहीं पता भी नहीं चलता। घर का कोई प्राणी उससे पूछता ही नहीं। महेश किसीकी सुनता भी नहीं।"

राजेश्वरी चुप रही। राम घर लौट आया और अपने कमरे में जाकर सो

रहा। सुन्दरी पुनः राजेश्वरी से मिलने नहीं आई। एक-दो दिन तक राजेश्वरी उसकी प्रतीक्षा करती रही और फिर उसको भूल गई।

राजकुमार की पत्नी प्रसव के पश्चात् अपने घर में आ गई और जीवन सामान्य रूप में चलने लगा।

५

भूषण जेल से नियत समय से दो दिन पूर्व ही छूटकर आ गया। वह बीमार हो गया था और डाक्टर की सम्मति से उसकी कैद की दो दिन की छूट अधिक कर दी गई थी। भूषण ने जेल से छूटते ही टेलीफोन कर टैक्सी मंगवा ली और सीधा राजकुमार के घर जा पहुंचा। राजकुमार अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में बैठा काम कर रहा था। मकान के द्वार पर लगी घण्टी बजी तो उसने खिड़की में से झांककर देखा। पिता जी को टैक्सी के समीप खड़े देख, वह लपककर नीचे आया और टैक्सी का भाड़ा दे, उनको ऊपर ले गया। भूषण ने पूछ लिया, "कहां है तुम्हारी मां?"

"वह अपनी बहू के साथ उसकी मां के घर गई है।"

"क्या है वहां?"

"ऐसे ही संतोष का चित्त मां से मिलने को किया था और वह मां जी को साथ ले गई है।"

"और सुन्दरी?"

"उसके विषय में हम नहीं जानते।"

"नहीं जानते? तो कहां चली गई है वह?"

"पिता जी! मैंने अन्तिम बार उसको उसी दिन न्यायालय में देखा था, जिस दिन आपको दण्ड सुनाया गया था।"

भूषण देर तक टुकर-टुकर राजकुमार का मुख देखता रहा। फिर कहने लगा, "मैं साढ़े चार मास तक जेल में रहा हूं और इस समय में वह तीन बार मुझको मिलने आई है। तीनों बार वह यही बताती रही है कि तुम्हारी मां के साथ रहती है। तुम्हारा और तुम्हारे लड़के का भी सुख-समाचार बताती रही है। और तुम कहते हो कि तुमने उसको देखा तक नहीं।"

"जी, वह यहां नहीं रहती।"

भूषण गम्भीर विचार में लीन बैठा ही था कि राजेश्वरी और संतोष आ गई। राजेश्वरी ने हाथ जोड़ नमस्कार किया और पूछ लिया, "कब आए हैं आप ?"

"बस, चला ही आ रहा हूं। मैं सुन्दरी से मिलने आया था।"

राजेश्वरी ने मुस्कराते हुए कह दिया, "जी, मैंने भी यही समझा है। मैं यह समझने की धृष्टता नहीं कर सकती कि आप मुझको दर्शन देने आए हैं।"

"तो वह कहां है ? राज कह रहा है कि उसने उसको कभी देखा नहीं।"

" वह आपके मुकदमे के निर्णय के दिन सायंकाल यहां आई थी। मुझसे यहां रहने की स्वीकृति चाहती थी।

" वह मेरी शर्त, कि मद्य-सेवन नहीं करेगी, मान गई थी और मैंने उनसे राज से पूछकर यहां रखने की बात कही थी। वह अगले दिन आने की बात कह गई थी। उस दिन के पश्चात् वह नहीं आई और उससे किसी प्रकार का सम्पर्क नहीं रहा।"

"बहुत विचित्र है। वह मुझको इसके विपरीत बताती रही है।"

"तो ऐसा करिए। इस समय स्नानादि कर अल्पाहार लीजिए और फिर अन्य कहीं पर उसकी खोज करिए। यहां तो वह है नहीं।"

इतना कह राजेश्वरी अपनी बहू के पीछे-पीछे चली गई। भूषण स्नानागार में चला गया। वह अपने साथ जेल में अपने सूटकेस में दो पोशाकें ले गया था, जो उसको वहां पहनने की आवश्यकता नहीं पड़ी थी। वहां से आते समय उसको कपड़े वापस मिल गए थे।

उनमें से एक पोशाक पहन, वह राजकुमार के साथ अल्पाहार लेने, खाने के कमरे में चला गया। भोजन कर उसने राजकुमार से दस रुपये उधार लिए और सुन्दरी की खोज में निकल पड़ा।

राजेश्वरी के मकान से वह रूपकृष्ण के घर पर जा पहुंचा। वहां राम सिगरेट फूंकता हुआ मिल गया। राम की पत्नी उसके समीप बैठी रूप के विषय में ही बतला रही थी। वह कह रही थी, "सुभद्रा ने आज मुझको यह अंतिम चेतावनी दी है कि यदि रूप ने अपना व्यवहार ठीक न किया तो वह अपने बच्चों के साथ यह घर छोड़ जाएगी।"

"तो फिर क्या होगा ?"

"होगा यह कि प्रबोध का कारोबार रूप से पृथक् हो जाएगा।"

"मुझको तो यह ज्ञात है कि रूप पहले ही पृथक् कार्य करता है। दोनों के कार्य के पृथक्-पृथक् रजिस्टर हैं।"

"परन्तु घर पर तो वे इकट्ठे रहते हैं।"

"इससे क्या होता है ? वह नया घर बना लेगा। आजकल घर बनाने में कुछ भी कठिनाई नहीं है।"

"तो आप भी यही ठीक समझते हैं ?"

"नहीं रोहिणी ! मैं तो यह कह रहा हूं कि इस घर को छोड़ने से किसको अन्तर पड़ेगा ? सुभद्रा पति से वंचित हो जाएगी। उसका मूर्ख लड़का मूर्खता करने में और भी स्वतन्त्र हो जाएगा और वह दिवाला निकालने के समीप हो जाएगा।"

"तो इससे हमको हानि नहीं होगी क्या ?"

"मैं समझता हूं कि मुझको सुभीता हो जाएगा। रूप मेरा और तुम्हारा लड़का है। उसको हमारे से अधिक सहानुभूति है। सुभद्रा और उसके लाड़ले प्रबोध ने तो हमको कैदी बना रखा है। हर रोज़ दो रुपये खाने-पीने के लिए दे जाता है, जिससे डेढ़ रुपया तो सिगरेट पीने में चला जाता है।"

"परन्तु वह रूप की शिकायतें जो करती है।"

"क्या करती है ?"

"रूप मद्य का सेवन करने लगा है। वह रात को बारह बजे और कभी उससे भी देरी कर आता है। पिछले पांच महीने से उसने अपनी पत्नी के पलंग पर पांव नहीं रखा और वह अपने 'एकाउण्ट' की किताब 'सेफ' में बन्द कर रखता है। वह घर पर भोजन नहीं करता। प्रातः काम पर जाता है और रात को बारह बजे लौटता है।"

"सत्य ही यह बुरी बात है, परन्तु इसका इलाज सुभद्रा का घर छोड़ जाना नहीं। परमात्मा ने उसको कुरूप बनाया है, परन्तु वह इस अवगुण से हुई त्रुटि की पूर्ति अपने प्रेममय व्यवहार से कर सकती थी। वह उसने की नहीं। मुझको भय है कि उसने अभी भी अपना नया घर बना लिया है।"

"आप दोनों में सुलह करा दीजिए।"

इस समय भूषण आ गया। राम ने देखा तो प्रसन्नता में बोल उठा, "भूषण, आओ बैठो। कब आए?"

"बस आ ही रहा हूं। अभी तो राजेश्वरी के मकान में ठहरा हूं। सुन्दरी वहां रहती है क्या?"

"नहीं। वह यहां नहीं। इसपर भी इतना ज्ञात है कि वह दिल्ली में ही है।"

"कैसे पता चला?"

"एक दिन प्रबोध कह रहा था कि उसने उसे रेसकोर्स में देखा था।"

"क्या करते हुए?"

"किसी घोड़े पर 'बिड' करते हुए।"

"ओह। पर भापा, क्या वह अकेली थी?"

"हां।"

"और उसने पूछा नहीं कि वह कहां रहती है?"

"प्रबोध एक मूर्ख लड़का है। वह सुन्दरी से घृणा करता है और मन के इस आवेश में उसने जानना आवश्यक नहीं समझा।"

"प्रबोध पुनः कभी नहीं गया रेसकोर्स में?"

"यह तो मुझको विदित नहीं। वह इस समय काम पर गया हुआ है। मध्याह्न भोजन के समय आएगा। तब पूछ लेना।"

"अच्छी बात है। मैं भोजन के समय आ जाऊंगा। यदि आप मुझको निमंत्रण दें तो भोजन यहां ही करूंगा।"

"भूषण, तुम मेरी बहिन के लड़के हो। इससे मेरे भी अज़ीज़ हो। तुम चाहे कितनी भी खराबी करो पर तुम अपने हो। इससे तुम निःसंकोच और अनिमन्त्रित भी आ सकते हो। जैसी रूखी-सूखी मैं खाता हूं, वैसी तुमको भी मिल जाएगी।"

भूषण वहां से चला आया। वह पैदल ही कश्मीरी गेट की ओर चल पड़ा। वहां से वह लालकिले की ओर चलता हुआ चांदनी चौक में घूम गया। इस समय वह थका हुआ अनुभव करने लगा था। उसने घड़ी में समय देखा। अभी साढ़े ग्यारह बजे थे। वह लौट पड़ा और पैदल चलता हुआ श्री राम रोड पर ठीक बारह बजे जा पहुंचा। रूप की कोठी में ड्राइंग रूम में पहुंचा तो सुभद्रा वहां बैठी

एक उपन्यास पढ़ रही थी। उसने भूषण को वहां आते देखा तो विस्मय में उठ खड़ी हुई और अनायास ही उसके मुख से निकल गया, "कब आए हो?"

"आज ही आया हूं।"

सुभद्रा न तो बैठी, न ही उसने भूषण को बैठने के लिए कहा। वह पूछने लगी, "यहां किसलिए आए हो?"

भूषण अढ़ाई घण्टा-भर पैदल चलने के कारण थका हुआ अनुभव कर रहा था। अतः उसने एक सोफा पर बैठते हुए कहा, "इसलिए कि पैदल चलते-चलते थक गया हूं और भूख से व्याकुल हो रहा हूं।"

"तो यहां होटल समझ रहे हैं आप?"

"नहीं भाभी! इसको अपने मामा का मकान समझ आया हूं।"

"आपके मामा तो यहां हैं नहीं।"

"कहां गए हैं?"

"अपने कमरे में हैं।"

"तो वे मामी के साथ होंगे। मैं उनकी यहीं प्रतीक्षा करूंगा।"

"और मामी काटती है क्या?"

भूषण को यह बिलकुल अशिष्टता प्रतीत हुई थी। इसपर भी मरता क्या नहीं करता। वह बैठ तो गया था, परन्तु सुभद्रा की इस अशिष्टता का प्रतिकार करना चाहता था। इसलिए उसने कह दिया, "नहीं भाभी! मामी काटती नहीं परन्तु मामी की संगत से भाभी की संगत अधिक रसमय प्रतीत हो रही है।"

"ओह! यह सब जेल से सीख आए हैं!"

"भाभी, बैठ जाओ न? खड़े-खड़े सुनने में क्या मज़ा आ सकता है!"

"मैं चाहती हूं कि आप यहां से चले जाएं।"

"क्यों?"

"मैं कहती हूं।"

"तुम कौन हो? जब तक तुम्हारा पति जीवित है, तब तक घर उसका है और वह मेरा भाई है। मैं उसके घर में हूं।"

"यह घर मेरा है।"

"होगा। न्यायालय निर्णय कर देगा।"

इस समय प्रबोध आ गया और भूषण को बैठा देख और मां को खड़े-खड़े ही

लाल-पीली होते देख, पूछने लगा, "ताया जी ! कैसे आना हुआ है ?"

"मैं तुम्हारे बाबा और अपने मामा रामकुमार जी के निमंत्रण पर भोजन करने आया हूं।"

"तो वे तुमको किसी होटल में ले जाएं अथवा हलवाई की दुकान पर ले जाएं। यह घर उनका नहीं है।"

भूषण इस बात को सुन स्तब्ध रह गया। वह अवाक् बैठा रह गया। उसे चुप देख, प्रबोध ने कह दिया, "क्यों ताया जी महाराज ! समझ आई बात अथवा नहीं ? आप यहां से तशरीफ ले जाइए, नहीं तो बलपूर्वक यहां से निकाल दूंगा।"

भूषण समझ गया कि यह तो अपमान की पराकाष्ठा है। वास्तव में वह अपने मुकदमे में पूर्ण परिवार की अपने साथ सहानुभूति देख, इनके घर आने की भूल कर बैठा था। राम तो उससे सदा सहानुभूति रखता था और उसने रूप को कहकर मुकदमे में उसका ठीक मार्गदर्शन कराया था।

इस अपमान से उसकी आंखों में आंसू छलक आए थे। वह उठा और ड्राइंग-रूम से बाहर निकल आया। कोठी के बरामदे में खड़ा, वह राजेश्वरी के मकान को लौट जाने का विचार कर ही रहा था कि राम और रोहिणी अपने कमरे से आते हुए दिखाई दे गए। राम ने दूर से ही आवाज दे दी, "तो आ गए हो भूषण ?"

भूषण ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह खड़ा रहा और अपने आंसू भीतर ही भीतर पी जाने का यत्न करने लगा। रोहिणी ने भूषण की तरल आंखें देखीं तो चिन्ता व्यक्त करते हुए पूछ लिया, "क्यों, क्या हुआ है ?"

"मुझको धक्के देकर कोठी से निकाल देने की धमकी दी गई है। मामा जी! मैं तो इसको आपका मकान समझ आया था। यहां ये कह रहे हैं कि मकान सुभद्रा और प्रबोध का है।"

"भागो नहीं भूषण ! इधर आओ।" राम ड्राइंग रूम में चला गया था, परन्तु सुभद्रा अभी भी वहां खड़ी थी। राम ने ड्राइंग रूम में जाकर आवाज दे दी, "भूषण आओ।"

रोहिणी भूषण की पीठ पर हाथ रखे हुए उसे भीतर ले आई। सुभद्रा इस कृत्य से आग-बबूला हो रही थी। इसपर भी वह बिना कुछ कहे यह नाटक देख रही थी। राम ने भूषण को अपने समीप एक सोफे पर बिठा लिया, सुभद्रा सामने

खड़ी थी। राम ने एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "सुभद्रा जी बैठ जाओ।"

"मां जी ! आप यह बात अनधिकार कर रही हैं।"

"अरी पगली ! मां बनाकर भी अधिकार-अनधिकार की बात कर रही हो! इधर आओ। आज रूप को आने दो, उसके कान पकड़कर तुमसे सुलह करा दूंगी।"

"नहीं ! मैं यह सहन नहीं कर सकती।"

इसपर राम ने कह दिया, "जाओ। फ्रिज से निकालकर एक कोकाकोला पी लो। जब चित्त शान्त हो जाए तो आ जाना। मैं तुम्हारे लिए एक बहुत अच्छा सन्देशा लेकर आया हूं।"

भूषण समझ रहा था कि यद्यपि राम आजकल वकालत का काम नहीं करता था, परन्तु उसमें एक अच्छे वकील का बीज उपस्थित है। वह अब अधिक विश्वास से बैठा था। रोहिणी ने सोफा-सैट से लगी घंटी का बटन दबाया तो बैरा भीतर आ गया। रोहिणी ने बैरा को कहा, "बुद्धू मियां। एक ठंडा कोका-कोला ले आओ।"

रोहणी विद्रोह के किनारे पर पहुंच चुकी थी। परन्तु वह जानती थी कि अब प्रबोध भी धमकी नहीं दे सकेगा, जो उसने भूषण को दी थी। इसलिए वह विचार कर रही थी कि कैसे बात करे।

बैरा कोकाकोला गिलास में डालकर ले आया। उसने गिलास रोहिणी के आगे किया तो उसने कह दिया, "बहू को दे दो।"

कोई मार्ग न पाकर सुभद्रा एक कुर्सी पर बैठ गई और गिलास लेकर चुस्कियां भरने लगी। अब राम ने बैरा को कह दिया, "बुद्धू ! खाने के कमरे में दो के लिए खाना लगा दो और यहां तीन के लिए खाना लगा दो।"

बैरा इसका अर्थ नहीं समझा। इसपर राम ने तनिक डांटकर कहा, "शीघ्र करो। हमें खाने के तुरन्त पश्चात् ही कहीं जाना है।"

बैरा चला गया। राम ने सुभद्रा को सम्बोधन कर कहा, "अब तुम शान्त हो गई तो सुनो। रूप ने अभी-अभी एक पत्र भेजा है। वह तुमको पढ़कर सुना देता हूं।"

राम ने अपनी जेब से एक लिफाफा निकाला। लिफाफा खुला था। उसने उसमें से पत्र निकाला और पढ़ने लगा। लिखा था, " पिता जी, आज मुझको पता

चला है कि भूषण छूट गया है। मुझको यह विदित हुआ है कि वह राजेश्वरी भाभी के घर गया है। मुझको यह जानकर बहुत हर्ष हुआ है। मैं आज किसी समय उससे मिलना चाहूंगा और उसके भविष्य के विषय में सुझाव उपस्थित करूंगा।

"अब मैं कुछ अपने विषय में लिखना चाहता हूं। मैंने अपना एक नया घर बना लिया है। वहां मैं अपनी नई पत्नी के साथ रहता हूं। अभी तक तो मैं नित्य रात के समय आपके घर आ जाया करता था, परन्तु आज से नहीं आऊंगा। मैं आपको श्रीराम रोड वाली कोठी नम्बर ३३ रहने के लिए देता हूं। सुभद्रा यदि उसमें रहना चाहे तो कृपया रहने दीजिए। यदि न रहना चाहे तो जहां चाहे जा सकती है। यही बात प्रबोध और उसकी बहिनों के विषय में है। कोठी का सब फर्नीचर मेरा है और मैं आपको दे रहा हूं। आप जैसा चाहे करें।

"मैं अभी नये मकान का पता नहीं दे रहा। मैं इसको तब तक गुप्त रखना चाहता हूं, जब तक पता न चल जाए कि सुभद्रा अब क्या करना चाहती है। मैं उससे ऊब गया हूं। यदि प्रबोध काम-धन्धे के विषय में कोई बात करना चाहता है तो उसको कहिएगा मुझको मेरे काम पर कल बारह बजे मिल ले।"

चिट्ठी के नीचे लिखा था, "अपनी मां से सुभद्रा के अभद्र व्यवहार के लिए क्षमा चाहता हूं। आपका नालायक पुत्र रूपकृष्ण।"

सुभद्रा ने पत्र सुना और उठकर डाइनिंग हाल में चली गई। प्रबोध वहां बैठा प्रतीक्षा कर रहा था।

राम ने भूषण को कहा, "तुम भोजन कर राजेश्वरी के मकान में चले जाना। मैं समझता हूं कि रूप तुमको जीवन में स्थिर होने में सहायता देगा।"

"तो रूप यहां नहीं आ रहा है?"

"मध्याह्न के समय तो वह कई महीने से नहीं आता।"

भोजन आया तो वे तीनों खाने लगे।

६

डाइनिंग हाल में सुभद्रा और उसका लड़का प्रबोध इस नई परिस्थिति पर विचार कर रहे थे। प्रबोध ने कहा था, "मां! मैंने तो ताया जी को धमकाकर मना लिया था। मगर पापा जी ने सब काम बिगाड़ दिया है।"

"नहीं प्रबोध ! यह तुम्हारे भापा जी ने काम नहीं बिगाड़ा। यह तुम्हारे पिता जी की करनी का फल है। उन्होंने एक पत्र आज भापा जी को लिखा है, जिसमें इस कोठी का मालिक उनको लिख दिया है।"

"और हम ?"

"हम भी चाहें तो उनकी स्वीकृति से यहां रह सकते हैं। इसी पत्र ने उनको शेर बना दिया है; अन्यथा उनका कभी साहस नहीं हुआ कि मेरे सामने बोल भी सकें।"

"यह तो पिता जी ने बहुत बुरा किया है।"

"केवल इतना ही नहीं, अपितु यह भी कि उन्होंने अपना एक नया घर बना लिया है। घर का मतलब है, उन्होंने एक नई पत्नी बना ली है।"

"कहां है वह ?"

"यह उन्होंने बताया नहीं।"

"तो अब क्या होगा ?"

"मैं अभी बता नहीं सकती। अभी तो यहां पर रहूंगी। आगे स्थिति कैसे बदलती है, उसके अनुकूल ही मैं अपना व्यवहार निश्चय करूंगी। तुम अपने काम की बात बताओ। कितना रुपया उसमें लगा है और कितना रुपया पिता के काम में है ?"

"हमारी दो कम्पनियां हैं। एक है 'अग्रवाल कम्बाइन।' यह पिता जी की है। इसमें वे स्वयं मुखिया हैं। दो प्रतिशत का हिस्सेदार राजकुमार है और दो प्रतिशत की राज की बहिन राजकुमारी। बस, ये तीन पत्तीदार हैं। एक कम्पनी है, 'राजधानी निर्माण संस्थान।' इसमें मेरे दस हिस्से हैं। शेष तुम्हारे तथा मामा जी के हैं। मां ! मेरे और तुम्हारे मिलाकर नब्बे प्रतिशत हिस्से हैं। इस कम्पनी का सरमाया है बीस लाख और पिता जी की कम्पनी का है पचीस लाख। पिछले वर्ष तक तो लाभ की कुल राशि मिला लेते थे। मेरा अभिप्राय है दोनों कम्पनियों की। इस वर्ष मैंने नहीं दिया और सब प्रकार के कर देकर मेरे पास बचा है, साढ़े तीन लाख।"

" यह तो तुमने बहुत बुद्धिमत्ता की है। अब कौड़ी नहीं देनी उनको।

" एक बात और है। आज किसी समय तुम्हारे पिता भूषण से मिलने राजेश्वरी के घर आने वाले हैं। मेरा कहना है कि भोजन कर वहां चले जाओ और अपने ताया जी को मोटर में बैठाकर राजेश्वरी के घर ले जाओ। वहीं उससे चिपटे रहो।

मीठी-मीठी बातें कर उससे पिछली बातों का प्रायश्चित्त कर लो और यह जान आओ कि तुम्हारे पिता क्या चाहते हैं भूषण से और तुमसे भी। वह तुमसे भी मिलना चाहते हैं।"

प्रबोध बाहर आया तो भूषण और राम बाहर ड्राइंग रूम में बैठे हुए कॉफी पी रहे थे। खाने की प्लेटें बैरा उठाकर ले गया था। रोहिणी आराम करने अपने कमरे में चली गई थी। प्रबोध आया तो राम ने प्रश्न-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा। प्रबोध ने आते ही बात आरम्भ कर दी, "भापा! यह कोठी पिता जी ने आपको दे दी है?"

"हां, रहने के लिए।"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि इसको मैं दूसरे को न तो दान में दे सकता हूं, न ही इसको बेच सकता हूं।"

"और हमारे विषय में उन्होंने क्या लिखा है?"

"यही कि यदि तुम्हारी माता, तुम और तुम्हारी बहिनें चाहें तो मैं उनको रहने दूं।"

"और आप न चाहें तो?"

"मेरे चाहने न चाहने की बात नहीं है, यह तुमपर छोड़ा है।"

"कुछ तो हमारा भी विचार आया है पिता जी को!"

"हां। तुम और तुम्हारी मां से वह अधिक नेक और समझदार है। आखिर रामकुमार का बेटा है। उसने अपने बाबा और भापा को देखा है। वे धर्मात्मा जीव थे। एक बार दस-बीस लाख का मुकदमा था। तुम्हारे एक बड़े फूफा थे गोवर्धन जी, जो साधु हो गए हैं। उन्होंने कह दिया, 'शिव! गोमाता की सौगन्ध खाकर कह दो कि तुम्हारा दावा सच्चा है, तो सब कुछ तुमको छोड़ दूंगा।'

"मुझको स्मरण है। शिव के माथे से पसीने की बूंदें टपकने लगी थीं। उसने गाय की सौगन्ध नहीं खाई और बीस लाख से ऊपर की सम्पत्ति छोड़ दी थी और तुम ऐसे बरखुरदार निकले हो कि अपने ताया जी की कमाई के दस-बारह लाख रुपये चुपचाप हजम कर गए हो।"

"भापा जी, वह तो बेईमानी की कमाई थी!"

"उस बेईमानी के पच्चीस प्रतिशत के तुम भागीदार बन गए हो।"

"होगा। मैंने उस सम्पत्ति को वम्वई में वेच, साढ़े नौ लाख वसूल कर, वहां ही एक वहुत वड़ी सम्पत्ति खरीद ली है और उसकी साठ हज़ार वार्षिक से ऊपर आय होने लगी है। ऐसी वेईमानी, जिसका पचीस प्रतिशत भी इतना लाभ दे रहा है, वहुत अच्छी है।"

"नौका भरकर डूवती है, वेटा!"

"भापा जी! आप हमारी चिन्ता न करें। आप इस नौका में मत वैठिए। इससे आपको डूवने का भय नहीं रहेगा। वैसे तो आज कलयुग है। इसमें सत्य तो झूठ हो रहा है और ईमानदारी का नाम वेईमानी हो गया है।"

राम हंस पड़ा। भूषण इस जीवन-मीमांसा का स्वयं उपासक रहा था। उसने कह दिया, "प्रवोध की वात एक दृष्टिकोण से ठीक ही है। सदा, धर्म वह रहा है जो राजा नियत करे। अतः राज के नियम के अनुसार रहकर जो कुछ भी पैदा किया जाए, वह धर्म की कमाई है।

"आज के राजा इतने अल्पवुद्धि हैं कि वे जो भी कानून वनाते हैं, उसमें छिद्र रह जाते हैं और व्यापारी उन छिद्रों में से निकल जाते हैं।"

"तो भापा! मैं, मां और वहिनें इस कोठी में रह सकती हैं न?" प्रवोध ने पुनः वात वदल दी।

"हां, जव तक तुम चाहो।"

"मामा जी!" भूषण ने कह दिया, "क्या इस कोठी में मुझको भी एक कमरा मिल सकेगा? जव तक सुन्दरी का पता नहीं चलता, मैं मकान भाड़े पर ले नहीं सकूंगा। मैं राजकुमार के घर जाकर रहना नहीं चाहता।"

"क्यों?"

"वहां मेरी उन्नति में वाधाएं ही हैं। मैं उनसे पृथक् रहकर ही अपना मार्ग वनाना चाहता हूं।"

"कहो तो तुमको पृथक् मकान दिलवा सकता हूं।"

"मामा! यह तो तुम्हारी अत्यन्त कृपा है, परन्तु मकान के अतिरिक्त भोजन की भी तो समस्या है। मेरे पास तो फूटी कौड़ी भी नहीं है। सव कुछ सुन्दरी के पास ही था। उसके मिलने तक की वात कहता हूं। मैं समझता हूं कि यह दो-तीन दिन की ही वात है। कदाचित् रूप उसके विषय में जानता हो।"

इसपर प्रवोध ने वता दिया, "ताया जी! मैंने उसे एक दिन कनाट प्लेस में

भोलाराम एण्ड सन्ज़ की दुकान से कुछ खरीदते हुए देखा था।"

"उसको मद्य-सेवन की आदत है और वही खरीदने गई होगी वहां!"

"मुझको यही समझ आया था। आजकल अंग्रेज़ी शराब बहुत महंगी हो गई है। मैं विस्मय करता था कि वह इतना धन व्यय करने की सामर्थ्य रखती है क्या?"

"उसके पास पर्याप्त धन था, परन्तु मेरी अनुपस्थिति में उसको मितव्ययिता से रहना चाहिए था।"

इसपर प्रबोध ने पूछ लिया, "आप तो राजकुमार के घर जा रहे हैं न?"

"हां, वहां मेरा सूटकेस रखा है। इस समय मेरे पास केवल दो 'सूट' हैं। यदि शीघ्र ही सुन्दरी न मिली तो यह भी कठिनाई उपस्थित हो जाएगी।"

"मैं भी आपके साथ चल रहा हूं।"

"क्यों?"

"सुना है, पिता जी वहां आ रहे हैं और मुझको उन्होंने मिलने के लिए बुलाया है।"

"ठीक है।" राम ने कह दिया, "मैं भी चल रहा हूं। तुम मोटर निकलवा लो और हम सब इकट्ठे ही चल देंगे।"

ये मध्याह्नोत्तर तीन बजे वहां पहुंचे। राजकुमार अपने काम पर गया हुआ था। राजेश्वरी अपने पोते को खेला रही थी और उसकी बहू सन्तोष घर की सफाई कर रही थी।

राम ने बहू को बैठक झाड़ते हुए देखा था। इससे उसने सन्तोष को कह दिया, "बहू, कोई नौकरानी नहीं रखी हुई?"

"भापा! मैं जो नौकरानी हूं। कहीं दो नौकरानियां घर में हो गईं तो नित्य का झगड़ा हो जाएगा।"

"ऐसा क्यों होगा? क्या तुम नौकरों से काम लेना नहीं जानतीं?"

इनकी आवाज़ सुन राजेश्वरी बैठक घर में आ गई थी। राम की बात का उत्तर उसने दे दिया, "भापा! हम तुम्हारी भांति धनवान नहीं हैं। आज दिल्ली जैसे नगर में नौकर रखना [illegible] नहीं।"

राजेश्वरी की गो[illegible] ज का लड़का था। बहू ने उसको गोद में से लिया और वह दूसरे [illegible] ई। राजेश्वरी ने सबको बैठाते हुए पूछ लिया,

"आज यह दलबल-सहित इस घर पर चढ़ाई क्यों कर दी है ?"

"राजेश्वरी ! यह भूषण यहां ठहरा हुआ है और इसका ज्ञान रूप को हो गया है। वह बहुत प्रातःकाल से काम पर गया हुआ है। काम पर से उसने चिट्ठी लिखी है कि वह भूषण से मिलने यहां आ रहा है। मैं और प्रबोध भी उससे शीघ्रातिशीघ्र मिलना चाहते थे। इस कारण यहां चले आए हैं।"

"रूप को राज मिला होगा। उसीने बताया होगा कि ये यहां ठहरे हैं।"

"हां ! कुछ यही प्रतीत होता है।"

राजेश्वरी ने बात बदल दी, "भापा ! सुभद्रा को भी ले आते। कितने ही काल से उसके दर्शन नहीं हुए।"

"परन्तु तुम भी तो उसको कभी मिलने नहीं आईं। राजकुमार तो कभी-कभी आता रहता है।"

"मैं उसको आग्रह करती रहती हूं कि वह अपने सम्बन्धियों से मेल-मुलाकात रखे। राज कहता है कि सुभद्रा चाची तो उससे कभी बात भी नहीं करतीं। उसका साधारण पहिराव देखकर नाक चढ़ा लिया करती हैं। इसलिए मुझको तो डर रहता है कि वह मुझसे कहीं उल्टा व्यवहार न कर दे, परन्तु यदि वह आ जाती तो मेरे मन का संशय और भय मिट जाता।"

"क्यों प्रबोध ! यह ठीक है क्या ?"

"बात यह है भापा ! मां रिश्तेदारी के कुछ अर्थ नहीं समझती। उसकी दृष्टि में अर्थ है पोज़ीशन का। वह अपनी जैसी अवस्था वालों से ही सम्बन्ध रखना चाहती है।"

राम हंस पड़ा। हंसकर उसने पूछ लिया, "कितनी बड़ी पोज़ीशन है तुम्हारी और तुम्हारी मां की ?"

"भापा ! मैं अपनी बात नहीं कहता। परन्तु मां समझती है कि वे लाखोंपति की लड़की, लाखोंपति की पत्नी और लाखों के मालिक की मां है।"

"तब तो सत्य ही वह बहुत बड़ी औरत है। यही कारण है कि उसने आज तक तुम्हारी दादी को नौकरानी समझ रखा था। अच्छा बेटा ! अब हम भी राजेश्वरी बिटिया की भांति उससे भय किया करेंगे।"

रूपकृष्ण सुन्दरी के साथ वहां आ पहुंचा। सुन्दरी को उसके साथ देख, सबके मन में संशय हुआ। रूप ने अपने पत्र में लिखा था कि उसने अपना नया घर

बना लिया है। इससे राम, भूषण और प्रबोध को यह सूझ गया कि रूप का नया घर बनाने वाली सुन्दरी ही हो सकती है। इसपर भी भूषण ने मन के संशय को दबाते हुए पूछ लिया, "पर सुन्दरी ! मैं तो तुमको ढूंढ़ता हुआ ही यहां आया था ? तुम कहां हो ?"

"बैठिए बताती हूं।"

सब बैठ गए। राजेश्वरी ने सबके लिए चाय बनाने के लिए राज की बहू को कह दिया। और वह बच्चे को अपनी सास की गोदी में दे रसोईघर में चली गई।

रूप ने बात कह दी, "दस बजे के लगभग मैं सेक्रेटेरिएट में से निकल रहा था कि राजकुमार मिल गया। उसने ही भूषण दादा के छूट जाने की बात बताई। मैंने वहां से ही एक पत्र लिखा और अपने ड्राइवर के हाथ भापा जी को भेज दिया। जो कुछ उस पत्र के अन्दर लिखा था, वह भूषण दादा के आने पर ही लिखने का निर्णय था।

"भापा ! वह पत्र सबको सुना देते तो ठीक रहता।"

"मैंने वह भूषण को सुना दिया है। प्रबोध और उसकी मां को भी उस पत्र का ज्ञान है।"

"मैं दादा के राजेश्वरी भाभी के घर आने से बहुत प्रसन्न हूं और मैं हृदय से चाहता हूं कि अब तो इनको अपने घर में रहना चाहिए।"

भूषण ने हंसते हुए कह दिया,"जैसे तुम रहना चाहते हो ?"

"देखो दादा ! राजेश्वरी भाभी और प्रबोध की मां में कोई तुलना नहीं। न ही प्रबोध और राजकुमार में किसी प्रकार की समानता है। राजेश्वरी, प्रबोध की मां से सैकड़ों गुणा श्रेष्ठ और सुन्दर हैं। मैंने तो अब अपना घर सुन्दरी के साथ बना लिया है।"

"ओह !" भूषण के मुख से अनायास ही निकल गया, "पर सुन्दरी ! तुमने यह बताया नहीं। अभी पंद्रह दिन हुए तुम जेल में मुलाकात करने आई थी, और बताया था कि तुम राजेश्वरी के साथ रहती हो।"

"मैं आपको जेल में दुःखी करना नहीं चाहती थी। वैसे तो हमने इस नये घर की बात उसी सायंकाल निश्चय कर ली थी, जिस दिन आपको दंड हुआ था।"

"सत्य !"

"जी ! मैं भी आपसे यह ही कहूंगी कि आप राजेश्वरी बहिन से सुलह कर

लें। आखिर इसमें क्या खरावी है?"

"और तुमने मुझमें क्या खरावी देखी है?"

"खरावी की वात तो मैं मानती नहीं। हां, यह कह सकती हूं कि आपके विचारों का अनुकरण ही कर रही हूं। आप वताया करते थे कि यह प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है कि अपनी अवस्था को सुधारने का यत्न करे। राजनियम के अन्तर्गत रहते हुए मैंने भी अपनी अवस्था को सुधारने का यत्न किया है।"

"क्या सुधार किया है तुमने अपना!"

"प्रवोव के पिता, राजकुमार के पिता से आयु में कम हैं। वे सौन्दर्य में, वन-सम्पदा में और संतुलित मन रखने में श्रेष्ठ समझ आए हैं।"

"तो?"

"वस यही कि मैं उनके साथ रहना पसन्द करती हूं।"

"और मेरी सम्पदा?"

"वह दोनों ने मिलकर पैदा की थी। आप अपने भाग से वहुत अधिक व्यय कर चुके हैं। अव शेप में आपका कुछ भी भाग नहीं है।"

इसपर रूप ने कह दिया, "दादा! तुम तो समाजवादी हो न? वन-दौलत तो किसी व्यक्ति की मल्कियत नहीं होनी चाहिए। तो फिर तुम्हारी सम्पदा का प्रश्न कहां से आ गया? सव सम्पदा समाज अर्थात् राज्य की है। अतः यह सुन्दरी और राज्य के वीच की वात है कि कितनी किसके पास रहे। जहां तक तुम्हारा सम्वन्ध है, तुम मेहनत करो और भोजन-वस्त्र मिल जाएगा।"

भूपण इस नई परिस्थिति के विषय में कुछ भी समझ नहीं सका। उसे चुप देख, रूप ने कह दिया, "मैंने भापा को अपने पत्र में लिखा है कि भूपण जी को भविष्य के विपय में कुछ सुझाव उपस्थित करूंगा। सो दादा! मेरा सुझाव है कि यदि तुम राजेश्वरी भाभी के साथ रहना पसन्द करो तो मैं तुमको दो सौ रुपया महीना पेंशन के रूप में दे सकूंगा।"

इस समय चाय आ गई थी। संतोप ने तिपाही सवके वीच में रख, वर्तन लगा दिए और सवके लिए चाय वनाने लगी। राजेश्वरी ने मिठाई खाने के लिए रखते हुए रूप की वात का प्रतिकार कर दिया, "रूप भैया! तुम्हारी अपने प्रति सहानुभूति देख मैं आभारी हूं परन्तु मैं कहूंगी कि अपने भाई की सहायता में मुझको वलि मत चढ़ाओ। मेरे इनसे सम्वन्ध की वात दो सौ रुपये से अविक मूल्य की और

जटिल है। मैंने अभी इनको यहां रखने का निर्णय किया नहीं। कदाचित् मैं कर सकती भी नहीं। इसका सम्बन्ध राजकुमार और संतोष से भी है।"

"राजेश्वरी ! तुमको इस विषय में कहने की आवश्यकता भी नहीं। मैं स्वयं ही यहां रहना पसन्द नहीं करूंगा।

"क्यों भापा ! मैंने तुम्हारी कोठी में एक कमरा मांगा है ? अब तो मेरे लिए वह ही एक आश्रय रह गया है।"

"यह घर चलकर विचार करेंगे। क्यों रूप ? कहां रहोगे अब ?"

"मैंने अपना पक्का मकान नहीं बनाया। अभी सुन्दरी एक अस्थायी स्थान पर रहती है। यदि सुभद्रा श्रीराम रोड वाली कोठी में रहेगी तो मैं सुन्दरी के लिए एक पक्के रूप में मकान का प्रबन्ध कर दूंगा। यदि वह उस कोठी को छोड़ कहीं अन्यत्र चली गई तो मैं कोठी में लौट आने के विषय में विचार कर लूंगा।"

"पिता जी !" प्रबोध ने कह दिया, "हम अभी तो उस कोठी में ही रहने की इच्छा रखते हैं।"

"तो मैं सुन्दरी के लिए प्रबन्ध करूंगा।"

"देखो रूप। न तो मैं अपनी कोठी में सुन्दरी और भूषण को इकट्ठा रहने दूंगा और न ही सुन्दरी और सुभद्रा को। औरतों की प्रकृति को मैं जानता हूं। न तो दो तलवार एक म्यान में रह सकती है और न ही एक तलवार दो म्यानों में।"

"और दादा भूषण, अब तुम क्या करने का विचार करते हो ?"

"मैं कल से अपने लिए कोई काम ढूंढ़ने का यत्न करूंगा। जब इस लायक काम मिल गया कि मैं अकेली जान के लिए पैदा कर सकूं तो मकान भी ढूंढ़ लूंगा।"

"जैसा मन आए करो। मैंने अपना प्रस्ताव बता दिया है। एक बार हमारे ताया शिव जी ने तुम्हारी मां की सहायता की थी। दो सौ रुपया मासिक का काम देकर। मैं परिवार के प्रति अपना ऋण उतारने के लिए आपको भी एक काम बता कर दो सौ रुपये का प्रस्ताव कर रहा हूं।"

"और काम यह है कि मैं राजेश्वरी जी का पति बनूं, बिना उनकी इच्छा के।"

"मेरा मतलब यह है कि आप यत्न करें कि आप में सुलह हो जाए।"

"मैं समझता हूं कि यह हो नहीं सकेगी।"

रूप ने कन्धों का झटका देकर असंतोष प्रकट किया और उठ खड़ा हुआ। सुन्दरी भी उठ खड़ी हुई। भूषण को समझ आया कि सुन्दरी पहले से भी सुन्दर होती जा रही है। वास्तव में वह हीरक-जड़ित कर्णफूल पहने थी और उनकी चमक ने सुन्दरी के सौन्दर्य को द्विगुण कर रखा था।

राम इस अप्रत्याशित परिस्थिति में समझ नहीं रहा था कि क्या करे और क्या कहे। वह रूप और सुन्दरी को जाते देखता रह गया।

रूप ने जाने से पूर्व प्रबोध को सम्बोधन कर कह दिया, "देखो प्रबोध, तुम्हारी कम्पनी की आय तुम्हारी है। उसमें तुम अपनी मां का तथा बहिनों का भाग भी समझ लेना। इस कोठी में तुम तब तक रह सकते हो, जब तक भापा जी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं दोगे।

"आज से तुम अपना 'किचन' और नौकर पृथक् कर लो। भापा!" उसने अपने पिता को सम्बोधन कर कहा, "आपसे कोठी के प्रबन्ध और खाने-पीने के सम्बन्ध के लिए मैं रात को कोठी में मिलूंगा।"

इतना कह वह चला गया। भूषण राजकुमार के कमरे में गया और अपना सूटकेस उठा लाया। राम ने राजेश्वरी को भूषण के मुख पर ही कह दिया, "राजेश्वरी! मैं तुम्हारे व्यवहार से अति प्रसन्न हूं। तुम अब परिवार के निर्माण में लग जाओ। भूषण इस योग्य नहीं कि तुम उसके लिए मन में विचार भी करो।"

राजकुमार के आने तक राम, प्रबोध इत्यादि वहां बैठे रहे। राजकुमार ने भी जब यह सुना कि रूपकृष्ण और सुन्दरी इकट्ठे रहते हैं तो हंस पड़ा। हंसते हुए कह दिया, "चाचा जी से मुझको यह आशा नहीं थी। इसपर भी मैं समझता हूं कि अच्छा हुआ है। पिता जी की जान छूटी।"

राम भी इससे हंसने लगा। भूषण जान छूटी की बात समझ नहीं सका। वह तो यह समझ रहा था कि सुन्दरी के सब धन लेकर उसको छोड़ जाने से उसकी जान मुसीबत में पड़ गई है। वह जेल में इसी धन के बलबूते पर बड़ी-बड़ी योजनाएं बनाता रहा था। वे सब योजनाएं बालू की भीत के समान ढह गई थीं।

राजकुमार ने राम और प्रबोध को कहा, "प्रबोध भैया! अब क्या कार्यक्रम है?"

"कुछ नहीं। कुछ भी चिन्ता की बात नहीं। मैं तो पहले ही अपने पिता से

पृथक् हो चुका था। अब इस नई परिस्थिति में तो उनके साथ रहना असंभव हो गया है।"

७

रामकुमार भूषण को कोठी में रखने के पक्ष में नहीं था। उसने इस बात का संकेत भूषण को दे भी दिया था। भूषण को कोठी में आकर टिके हुए तीन दिन हो चुके थे। वह भोजन प्रबोध तथा सुभद्रा के साथ करता था और उनके कक्ष में ही एक कमरे में रहता था। पिछले दिन तो वह प्रबोध के साथ उसके काम पर भी गया था। अतः रामकुमार ने उसके विचार जानने के लिए भूषण को बुलाकर कह दिया, "भूषण! मैं समझता हूं, कि तुमको अपनी जीविका के विषय में कुछ तो विचार करना चाहिए।"

"कर रहा हूं पापा।"

"किसके साथ विचार कर रहे हो और क्या विचार कर रहे हो?"

"विचार तो अपने मन से कर रहा हूं। प्रबोध मुझको अपनी कम्पनी का जनरल मैनेजर नियुक्त करना चाहता है। मैंने अभी अपनी अनुमति नहीं दी।"

"क्या वेतन देगा प्रबोध, तुमको?"

"वेतन मैं पसन्द नहीं करता। मैं तो उनकी कम्पनी में कुछ हिस्से के रूप में अपना पारिश्रमिक चाहता हूं।"

"कब तक विचार कर लोगे?"

"आज रात सुभद्रा से बातचीत करनी है। मैं समझता हूं कि बात बन जाएगी।"

"ठीक है। मेरी सम्मति यह है कि तुमको प्रबोध से कुछ पेशगी ले लेनी चाहिए और कोई मकान भाड़े पर ले लेना चाहिए।"

"मेरे यहां रहने से आपको कुछ कष्ट है?"

"मुझको क्या कष्ट होना है। इस पर भी मैं यही उचित समझता हूं।"

"रात रूप आपसे मिलने आया था। कुछ वह कह गया है क्या?"

"नहीं। वह तुममें रुचि नहीं रखता। उससे तुम्हारे विषय में कुछ बात नहीं हुई।"

"मैं चाहता हूं, भापा ! कि तुम मुझको एक-दो मास तक यहां रहने दो। तव तक मैं किसी अच्छे मकान को लेने की अपने में सामर्थ्य उत्पन्न कर लूंगा।"

"तुमको शीघ्रातिशीघ्र प्रवन्ध कर लेना चाहिए।"

उस दिन मध्याह्नोत्तर चाय के समय प्रवोध अपने वावा से आकर पूछने लगा, "भापा ! आपने भूषण ताया को कोठी छोड़ने के लिए कह दिया है ?"

"मैंने यह कहा कि उसे शीघ्रातिशीघ्र कहीं अन्यत्र रहने का प्रवन्ध कर लेना चाहिए।"

"यहां उनसे किसीको कष्ट है क्या ?"

"हां ! तुम्हारी वहिनों को कष्ट प्रतीत होता है।"

"क्या कष्ट हो सकता हैं उनको ?"

"यह मैं क्या वताऊं ? दिति कुछ कह रही थी तुम्हारी दादी से।"

"भापा ! दादी व्यर्थ में संदेह किया करती है। इसी कारण मां और दादी में वनती नहीं।"

"देख लो। परन्तु तुमको क्या रुचि है भूषण को यहां रखने में ?"

"मैं उनको अपनी कम्पनी का जनरल मैनेजर वनाना चाहता हूं। यदि वे वन गए तो उनको हमारे समीप ही रहना भारी सुभीते की वात होगी।"

"इतनी आवश्यक पदवी पर मां से पूछकर उसको नियुक्त कर रहे हो ?"

"वे ही तो मुझको कह रही हैं कि मैं उसको रख लूं।"

"उनकी क्या रुचि है इसमें ? किसी अन्य को रखने के लिए क्यों नहीं कहतीं ?"

"यह तो वे ही वता सकती हैं। वैसे मेरे काम में वे सहायक तव ही हो सकते हैं, जव यहां रहें।"

"मुझको दोनों वातों में किसी प्रकार का भी सम्वन्ध प्रतीत नहीं होता।"

वात पुनः रात को चली। सुभद्रा ने अपने स्वसुर के पास आकर कह दिया, "भूषण जी यहां रहेंगे। यदि आपको कोई आपत्ति हो तो वताइए।"

"यह तुम्हारा निश्चित मत है ?"

"जी ! प्रवोध के पिता के चले जाने से प्रवोध के कारोवार में जो अवकाश उत्पन्न हो गया है, मैं उसकी पूर्ति के लिए यत्न कर रही हूं।"

"यदि रूप ने इसमें आपत्ति की तो वहुत कठिनाई उत्पन्न हो जाएगी।"

"तो मैं भी इस कोठी को छोड़ जाऊंगी।"

"ठीक है। मैं बात को इतनी दूर तक ले जाने की इच्छा नहीं रखता। फिर भी यदि तुम जाती हो तो मैं क्या कर सकता हूं।"

सुभद्रा अपने शयनागार में चली गई। रूप से राम ने इस परिस्थिति का वर्णन किया तो उसने कह दिया, "भापा! मुझको इन धनिकों की लड़की के भले-बुरे में किसी प्रकार की रुचि नहीं।"

"देखो रूप, मैं तुम्हारी पत्नी के विषय में चिन्ता नहीं कर रहा हूं, मैं तो तुम्हारी लड़कियों की बात कह रहा हूं। तीन दिन हुए तुम्हारी छोटी लड़की तुम्हारी मां को बता रही थी कि भूषण भोजनोपरान्त मद्य का सेवन करता है और उस दिन वह सोमा को कह रहा था, 'जरा चखकर तो देखो।'"

"भापा! वे आक के पेड़ ही हैं जो ऊसर भूमि में उत्पन्न होते हैं। मैंने अपना सम्बन्ध विच्छेद इनसे कर लिया है।"

"परन्तु यहां दुराचार फैलने लगा तो मुझसे सहन नहीं हो सकेगा।"

"उस अवस्था में पुलिस मंगवाकर खेत को निराह देना चाहिए। यह अधिकार मैं आपको देता हूं।"

दिति के मन में सोमा को मद्य पिलाने का यत्न अखरा था और उसने अपनी दादी को इसे बताया था, केवल बताने के लिए। उसके पश्चात् पुनः रोहिणी के पास किसी प्रकार की बुरी सूचना नहीं आई। रूप ने पांच सौ रुपया मासिक अपने पिता को कोठी को साफ-सुथरा, बगीचे को हरा-भरा और नौकर-चाकर से युक्त रखने के लिए देना आरम्भ कर दिया था और स्वयं उसने कोठी में आना छोड़ दिया था।

इस प्रकार छः मास शान्ति से व्यतीत हो गए। रुपये-पैसे की कमी नहीं थी। और किसी प्रकार की जीवन में कठिनाई उपस्थित नहीं हो रही थी। कोठी में दो स्थान पर भोजन बनता था और दो स्थान पर बैठकर खाया जाता था। आधी कोठी रामकुमार के अधीन थी और आधी प्रबोध और उसकी मां के अधीन। दोनों कक्षों में रहने वाले प्राणी परस्पर मिलते नहीं थे।

दोनों कक्षों में सम्बन्ध बनाने वाला एक सूत्र था। वह थी लड़की दिति। वह अपनी दादी से विशेष स्नेह रखती थी और प्रायः नित्य उसके पास आकर बैठा करती थी।

दिति की मां ने एक दिन उससे पूछा भी था, "दिति, उस बुढ़िया के पास क्या लेने जाती हो ?"

"कौन बुढ़िया ? मां !"

"वही तुम्हारी दादी।"

"ओह ! वे मुझको कुछ देतीं नहीं। केवल पुराने ज़माने की बातें बताया करती हैं।"

"मत जाया करो उसके पास।"

"क्यों ?"

"तुम भी उसकी भांति मूर्ख हो जाओगी।"

"पर मां ! वे मूर्ख हैं क्या ?"

"हां।"

"मां, वे कहानी तो बहुत बढ़िया कहती हैं।"

"यही तो मूर्खता के लक्षण हैं।"

दिति को मूर्खता के इन लक्षणों पर विश्वास नहीं आया और वह मां के मना करने पर भी जाती थी।

एक दिन वह स्कूल से लौटी, तो सीधे दादी के कमरे में चली गई। रोहिणी अपने पति के साथ मध्याह्नोत्तर की चाय ले रही थी। रोहिणी ने दिति को चाय लेने के लिए कहा तो उसने कह दिया, "मां ! मैं कल रात की एक बात बताने आई हूं।"

"क्या ?"

"भैया ने मां को बहुत पीटा था।"

"क्यों ?"

"पता नहीं।"

"तुमने देखा था पीटते हुए ?"

"हां ! मुझको मां के कमरे में खटाखट वस्तुओं के गिरने का शब्द सुनाई दिया तो मैं भागी हुई गई। भैया मां को घूंसों और मुक्कों से पीट रहे थे। मैंने भैया को मना किया तो उसने मां को छोड़ दिया और यह कह वहां से चला गया, 'मां ! तुम्हारी हत्या कर दूंगा और स्वयं फांसी चढ़ जाऊंगा।'

"जब वह चला गया तो मैंने मां से पूछा, 'क्या बात थी मां ?'

" इसपर मां ने कह दिया, 'जाओ ! जाकर सो रहो। तुम्हारे भैया ने मद्य पी ली है और उसके नशे में मुझको पीट रहा था।'

" परन्तु बड़ी मां ! मुझको मां के मुख से मद्य की गन्ध आ रही थी। "

"अच्छा दिति ! तुमको डर लगे तो तुम मेरे पास आकर सो रहा करो। कल उस समय सोमा कहां थी ?"

"वह आजकल विश्वम्भर दादा के घर जाती है और प्रायः भोजन उनके घर खाकर आती है।"

"यह विश्वम्भर हमसे मिलने नहीं आता ?"

'मैंने एक दिन पूछा था तो कहने लगा कि आप सो जाते हैं, इस कारण आपकी नींद खराब करना नहीं चाहता।"

दिति ने चाय नहीं पी और अपनी मां के पास चली गई। उसी रात राम ने प्रबोध को नौकर भेज बुला लिया। प्रबोध आया तो उसने कुशल-समाचार पूछा, व्यापार का हाल-चाल पूछ लिया।

"भापा ! काम चल रहा है। आय दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है, परन्तु खर्चा उससे भी अधिक बढ़ रहा है।"

"क्यों बढ़ रहा है ?"

" एक सहस्र रुपये प्रतिमास की तो शराब ही आ जाती है। पांच सौ रुपया भूषण अपने खर्चे के लिए निकाल लेता है और एक मोटर उसने अपने पास और आराम के लिए रख ली है।

" मैं मां को इस बढ़ रहे खर्चे के विषय में बताने गया था परन्तु मां शराब पी गुट्ट हो रही थी।

" मैंने शराब का खर्चा बताया तो कहने लगी, 'और तुम्हारा दिवाला निकल रहा है इससे ?'

" मैंने बताया कि दिवाला तो नहीं, इसपर भी खर्चा बहुत बढ़ रहा है। पांच-चार हजार प्रति मास उड़ जाता है।

" 'तो क्या किया जाए। हमारी इतनी आय है, तभी तो इतना खर्चा हो रहा है। नहीं होगी तो खर्चा स्वयमेव कम हो जाएगा।'

" मैंने बताया कि भूषण ताया अकेला पांच-छः सौ रुपये की मद्य पी जाता है।

" इसपर वह बोली, 'भूषण जी के विषय में मत बातचीत करो। वे इस घर में विशेष व्यक्ति हैं।'

" 'क्या विशेषता है उनमें ?'

" 'प्रबोध ! इस विषय में तुमको कुछ कहने का अधिकार नहीं।'

" 'क्यों ? क्या मैं इस धन के उपार्जन में परिश्रम नहीं करता ?'

" 'एक मूर्ख के परिश्रम का मूल्य ही क्या है। तुम दसवीं श्रेणी तो पास नहीं कर सके और समझते हो कि लाखों की आय तुम कर रहे हो ?'

" 'मैं नहीं कर रहा तो यह भूषण ताया कर रहा है ?'

" 'यह मैं कर रही हूं। तुम्हारे पिता भी, जब मैं विवाह कर इस घर में आई थी तो, चार-पांच सौ रुपया महीना से अधिक पैदा नहीं कर सकते थे। यह मेरी युक्ति और प्रतिभा का परिणाम था कि वे लाखों पैदा करने लगे। तुम भी जब अपने पिता से पृथक् काम करने लगे थे तो दसवीं श्रेणी में तीन बार अनुत्तीर्ण हो चुके थे। तुम्हारे पिता ने तो कह दिया था कि प्रबोध को घर के किसी कुत्ते, बिल्ली की भांति रोटी खिला दिया करो। वास्तव में यह मैं हूं, जो कार्य कर रही हूं।

" 'अब तुम्हारे ताया जी मेरी राय से कार्य करते हैं तो इस कार्य की उन्नति में सहायक हो रहे हैं।'

" भापा ! इसपर मैंने पूछ लिया, 'तो फिर उनमें विशेषता क्या है ?'

" 'वे इस समय तुम्हारे पिता के स्थानापन्न हैं।'

" पहले तो मैं समझा नहीं परन्तु पीछे मुझको कुछ सन्देह हुआ तो मैंने पूछ लिया, 'तो तुम भूषण ताया की पत्नी बन गई हो ?'

" 'यह मेरी निज की बात है। इसमें तुमको पूछने का अधिकार नहीं।'

" भापा जी ! मुझको क्रोध आ गया और मैंने मां की खूब मरम्मत की। खाने के पश्चात् वह आधी बोतल शराब पी जाया करती है। और उस शराब का नशा उतारने में खूब पीटना पड़ा। उसी समय दिति मां के कमरे में आ गई। वह शोर मचाने ही वाली थी कि मैं वहां से चला आया।

"आज भूषण जी ने मुझको मां के पीटने पर डांटना आरम्भ कर दिया। यह मध्याह्न के भोजन के समय की बात है। मैंने उनको कहा कि यदि उन्होंने अपने को सीमा के भीतर नहीं रखा तो उनको धक्के दे-देकर घर से निकाल दूंगा।

"इसपर भूपण जी ने मुझको वताया है कि मैं तो कम्पनी में दस प्रतिशत हिस्से का मालिक हूं। शेप तो सुभद्रा जी के और उसके ही हिस्से हैं।

"मैंने पूछा, 'और मामा जी के ?'

"'वे सव मैंने खरीद लिए हैं। इसलिए मां के अधीन होकर रहो, नहीं तो घर से तुम निकाले जाओगे, मैं नहीं।'

"भापा ! मैं आज मामा जी के पास गया था। उन्होंने वताया है कि उनके पंद्रह प्रतिशत हिस्से थे परन्तु वहिन के कहने पर वे उन्होंने भूपण के नाम कर दिए थे। मैंने उनको मां के विपय में वस्तुस्थिति वताई तो वे कहने लगे कि मैं विवाह कर मां से पृथक् हो जाऊं। इन विपयों में किसीकी वातों में दूसरों को झांकने की न तो आवश्यकता है न ही उचित।

"अव आप वताइए कि मैं क्या करूं ?"

राम कितनी देरी तक विचार करता रहा और वह भी उसी परिणाम पर पहुंचा, जिसपर राम का मामा पहुंचा था। उसने कह दिया, "अपने लिए और अपनी वहिनों के लिए ठीक वात यही है कि तुम विवाह कर लो और अपनी वहिनों को लेकर पृथक् जा रहो।"

"तो भापा ! वड़ी मां से कहकर मेरे विवाह का प्रवन्ध कर दो।"

"मैं आज उससे वात करूंगा। विरादरी में थोड़ा घूमना पड़ेगा। मेरी राय मानो, तुम अपने पिता से मिलो और उनसे भी राय कर लो।"

८

भूपण और सुभद्रा के सम्बन्धों की वात प्रवोध पर प्रकट हो जाने के पश्चात् तो थोड़ा-सा पर्दा जो वह उससे रखे हुए थे वह भी उतर गया और अव भूपण सुभद्रा के शयनागार में सोने लगा। यह वात सोमा और दिति से भी छुपी नहीं रह सकी। रूप का सवसे छोटा लड़का कमल इस समय ग्यारह वर्प का था। वह घर की वदल रही अवस्था से अपरिचित था। प्रवोध तो वहिनों से वात करता नहीं था। न ही वहिनें प्रवोध से अपने मन की वातें करती थीं।

कुछ दिनों से सोमा और विश्वम्भर, काहन के लड़के, में मेल-जोल वढ़ रहा था और वह स्कूल से सीधी काहन के घर चली जाती थी। विश्वम्भर कालिज में

आता तो सोमारानी को ले घूमने निकल जाता और रात को उसे उसकी मां के घर में छोड़ जाता था।

जिस दिन प्रवोध ने मां को पीटा था और दिति ने उसे पीटते तथा मार डालने की धमकी देते देखा था, उसी रात सोमारानी आई तो दिति ने उसे पूर्ण घटना, जैसा वह समझी थी, बता दी। सोमा विश्वम्भर की संगत में घूमने से पुरुष-स्त्री के सम्बन्धों को जानने लगी थी। उसने दिति को कह दिया, "इस सबमें भैया का दोष है। उसको मां को पीटना नहीं चाहिए था।"

"यह तो मैं भी समझी हूं परन्तु भैया ने मां को पीटा क्यों और वे मां को मार डालने की बात किसलिए कहते हैं ? मां ने क्या किया है ?"

"कुछ भी किया हो। भैया का मां को पीटना क्षम्य नहीं।"

"तो फिर क्या करें ? मां को मार डाला तो वह फांसी चढ़ जाएगा। और हम कहां जाएंगी ?"

"हम विवाह कर अपने पतियों के घर चली जाएंगी।"

"कौन करेगा हमारा विवाह और कैसे करेगा ?"

"भापा और बड़ी मां कर देंगी।"

सोमा के इस कहने पर ही अगले दिन दिति अपनी दादी से मां के पीटे जाने की बात बताने आई थी। दादी ने कह दिया था कि उसको डर लगे तो वह उसके साथ आकर सो जाया करे। इससे दिति को संतोष नहीं हुआ। रात फिर सोमा देरी से आई। दिति ने भोजन किया और मां के साथ-साथ उसके शयनागार की ओर जाते हुए पूछने लगी, "मां, भैया तुमसे नाराज़ क्यों हैं ?"

"वह मद्य पी गया था और मद्य पीकर उसकी मति ठिकाने नहीं रही।"

"वह तो मां, तुम भी पीती हो ?"

"मुझको वह अचेत नहीं करती।"

"पर तुम पीती क्यों हो ?"

"तुम्हारे पिता जी के चले जाने से जो दुख हुआ है उसको भूलने के लिए।"

इस समय वे दोनों शयनागार के बाहर जा पहुंचीं। कमरे के बाहर से ही मां ने दिति को कह दिया, "अब तुम जाओ ! स्कूल की पढ़ाई करो। इस वर्ष तो पास हो जाना चाहिए।"

"मैं पास नहीं हूंगी, मां !"

"क्यों ?"

"मुझको स्कूल में नींद आई रहती है। स्कूल की बहिन जी कहती हैं कि मैं घर पर ट्यूशन रख लूं। अन्यथा मैं पास नहीं हो सकती।"

"तो उसी मास्टराइन से पूछ लो। वह तुमको पढ़ाया करे। क्या वेतन लेगी ?"

"मैंने पूछा है। कहती थी, दो घण्टे नित्य पढ़ाया करेगी और एक सौ रुपया महीना लेगी।"

"तो कल से उसको आने के लिए कह देना।"

सुभद्रा ने लड़की को अपने कमरे में जाने नहीं दिया। उसको बाहर से ही अपने कमरे में भेज दिया।

रात सोमा आई तो ग्यारह बज रहे थे। दिति ने पूछ लिया, "तुम इतनी देरी से क्यों आती हो ?"

"दादा विश्वम्भर के साथ इण्डिया गेट पर घूमने गई थी। बातें करते-करते इतनी देरी हो गई है।"

"तुम्हारी परीक्षा कब होगी ?"

इसपर सोमारानी ने मुस्कराते हुए अपनी बहिन की आंखों में देखते हुए कहा, "मैंने स्कूल छोड़ दिया है।"

"क्यों ?"

"मैं अब अपना विवाह करूंगी।"

"कैसे करोगी ?"

"एक दिन यहां से सुसराल चली जाऊंगी।"

"बस ? बरात, फेरे, डोली, दावत इत्यादि कुछ नहीं ?"

"यह सब तो मां को करना है। उनसे पूछ लेना।"

"तो अभी पूछ लूं ?"

"हां। पूछ सकती हो।"

दिति उठकर मां के कमरे को चली गई। कमरा भीतर से बन्द था। भीतर प्रकाश हो रहा था। दिति ने दरवाज़ा खटखटाया तो भीतर से उसकी मां ने पूछ लिया, "कौन ?"

"मैं, दिति।"

"क्या कहती हो ?" भीतर से आवाज़ आई।

"कुछ पूछना है।"

"सुबह आना। मुझको नींद आ रही है।"

दिति विचार करने लगी कि बाहर से ही बहिन के विवाह की बात बता दे अथवा न। वह अभी विचार ही कर थी कि भीतर से दो के बातें करने की आवाज़ आ गई। एक ने कहा, "चली गई है ?"

"कह नहीं सकती।" यह उसकी मां ने धीरे से कहा था।

"तो चुप रहो, चली जाएगी।"

दिति को कुछ-कुछ समझ आने लगा था, दूसरी आवाज़ किसी पुरुष की थी।

दिति के मन में भय समा गया। वह भागी हुई अपने कमरे में आई तो उसकी बहिन कपड़े बदल सोने की तैयारी कर रही थी। दिति आई तो उसने पूछ लिया, "पूछा है ?'

"नहीं।"

"क्यों ?"

वह अपने मन की बात बता न सकी। सोमा दिति से अधिक समझती थी। उसने पूछ लिया, "दरवाज़ा बन्द था ?"

दिति ने सिर हिलाकर 'हां' में उत्तर दिया। इसपर बड़ी बहिन ने कह दिया, "तो सो जाओ। कल प्रातःकाल बात करेंगे।"

दिति सो नहीं सकी। वह मन में विचार कर रही थी कि बड़ी मां के पास सोने चली जाए क्या ?

अगले दिन सोमा उठी और उसने छोटी बहिन को जागते हुए देख पूछ लिया, "उठोगी नहीं ?"

"सोई ही नहीं तो उठूंगी क्या ?"

"सोई क्यों नहीं ?"

इसपर उसने बड़ी बहिन को मां के कमरे के भीतर की बात बता दी।

"तो फिर क्या हुआ ?"

अब इस 'क्या हुआ ?' की बात तो दिति समझ नहीं सकी। वह चुप रही।

प्रातः के अल्पाहार के समय दिति ने वही बात, जो वह रात के समय मां को बताने गई थी, बता दी। उसने कहा, "मां ! सोमा बहिन कहती है कि उसने स्कूल छोड़ दिया है।"

"क्यों ?"

उस समय सोमा, प्रबोध और भूषण भी वहां बैठे थे। दिति ने अपनी बहिन की ओर देखा। वह चाहती थी कि सोमा अपनी बात कहे। सोमा चुप रही। इस पर प्रबोध ने डांट के भाव में पूछ लिया, "बताओ सोमा !"

"क्या बताऊं भैया ? तुमने भी तो बिना पास किए पढ़ाई छोड़ दी थी। मुझसे भी पढ़ाई नहीं होती, मैं भी छोड़ बैठी हूं।"

अब मां ने पूछ लिया, "छोड़ बैठी हो ? कब से ?"

"आज से दो महीने हो गए। मुझसे पढ़ाई नहीं होती।"

"तो फिर क्या करोगी ?" प्रबोध का प्रश्न था।

"जो लड़कियां करती हैं। विवाह कर ससुराल चली जाऊंगी।"

इसपर भूषण ने कह दिया, "ससुराल ढूंढ़ने में तो समय लगेगा। तब तक तो स्कूल जाती रहा करो।"

"मैंने ढूंढ़ ली है !"

"क्या ढूंढ़ ली है ?" प्रबोध के माथे पर त्योरी पड़ गई थी।

"जिसके ढूंढ़ने में समय लगने की बात कर रहे हैं।"

"कहां ढूंढ़ ली है ?"

"विश्वम्भर जी से विवाह होगा मेरा।"

"यह कैसे हो सकता है ! वह तो तुम्हारा भाई लगता है !"

"मां-जाया तो है नहीं।"

"तो विश्वम्भर से पूछ लिया है ?" भूषण ने पूछ लिया।

"हां। वह भी कहता है कि आप लोग पुराने विचार के हैं। मानेंगे नहीं। इसलिए हमको स्वयमेव विवाह कर लेना चाहिए और हमने निश्चय कर लिया है।"

इस घोषणा से तो सब टुकुर-टुकुर मुख देखते रह गए। सबसे पहले सुभद्रा को मार्ग सूझा तो उसने कहा, "अच्छा, विश्वम्भर को आज सायं चाय पर यहां ले आना। यदि वह स्वीकार करेगा तो तुमको पृथक् घर बना देंगे।"

"मैंने पूछा था। वह कहता था कि हम पृथक् मकान बनाकर रहेंगे।"

"कितना वेतन है उसका ?"

"पौने तीन सौ रुपये मिलते हैं। भैया राजकुमार उसको कुछ काम घर पर

करने के लिए बता देते हैं और उससे सौ रुपये के लगभग अतिरिक्त आय हो जाती है।"

"यह आय पर्याप्त नहीं। उसकी आय-वृद्धि के लिए विचार कर लेंगे।"

सोमारानी इससे संतोष अनुभव करती थी। प्रबोध को यह सम्बन्ध पसन्द नहीं था। इस सब अव्यवस्था को देख, उसको अपने बाबा की बात पसन्द आई कि उसको अपने पिता से मिलकर बात करनी चाहिए।

अल्पाहार के पश्चात् उसने मोटर निकलवाई और अपने काम पर चला गया। इमारतों के निर्माण का कार्य बहुत वेग से चल रहा था और प्रबोध की कम्पनी ने पांच काम लिए हुए थे। पांचों पर पांच जमादार, जो ओवरसीयर की योग्यता रखते थे, नियुक्त थे। इन जमादारों का काम जहां कारीगर और मज़दूर एकत्रित कर काम चलाना था, वहां काम को नक्शे के अनुसार तैयार करवाना था। पांचों कामों पर एक इंजीनियर की योग्यता का आदमी रखा हुआ था। वह केवल काम की श्रेष्ठता का ध्यान रखता था। भूषण हिसाब-किताब रखता था। प्रबोध पांचों कामों पर सबको काम में संलग्न देखता रहता था।

प्रबोध मोटर लेकर दो-तीन घण्टों में सब कामों पर घूम और अपने पिता को ढूंढ़ने चल पड़ा। उसको रूपकृष्ण अपने घर में मिल गया।

रूप कनाट प्लेस में एक फ्लैट पर सुन्दरी के साथ रहता था। मध्याह्न भोजन का समय था और दोनों खाने पर बैठे हुए थे।

प्रबोध को आया देख दोनों प्रश्नभरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगे। प्रबोध ने स्वयमेव कुर्सी पर बैठते हुए कह दिया, "पिता जी! आपसे एक अत्यावश्यक विषय पर परामर्श करने आया हूं।"

"विवाह कर रहे हो अपना?"

"वह तो आपने करना है। मैं कैसे कर लूंगा?"

"तो और कौन-सी अत्यावश्यक बात है, जिसके लिए यहां भागे हुए चले आए हो?"

"आप भोजन कर लें तो बताता हूं।"

"क्यों? अभी क्यों नहीं? मैं कानों से तो खा नहीं रहा।"

"परन्तु सुन्दरी के सामने ही बता दूं?"

"बताओ सुन्दरी! तुम प्रबोध की अत्यावश्यक बात सुनना चाहती हो अथवा

नहीं ?"

"यह सुनाएगा तो सुन लूंगी।"

"तो बेटा, कह डालो। इसको भी सुन लेने दो।"

"पिता जी, वह मां के विषय में है।"

"क्या हुआ तुम्हारी मां को ?"

"वह···।"

"हां ! हां !! कहो न रुक क्यों गए ? वह घर से भाग गई है क्या ?"

"घर से नहीं भागी परन्तु उसने भूषण ताया जी से विवाह कर लिया है।"

"कैसे विवाह कर लिया है ?"

"जैसे आपने सुन्दरी से कर लिया है।" इसपर रूप और सुन्दरी हंसने लगे।

"मैं समझता हूं।" रूप ने कुछ विचार कर कहा, "तुम भी विवाह कर लो।"

"किससे कर लूं ?"

"यहां बहुत घूमती-फिरती हैं। कोई पकड़ लाओ।"

"मेरा साहस नहीं होता।"

"तो अपनी दादी से कहो। वह कोई ढूंढ़ देंगी। देखो। प्रातःकाल उनके चरण-स्पर्श किया करो। उनको तुमने और तुम्हारी मां ने बहुत कष्ट दिया था। उसके लिए क्षमा मांगा करो। जब वे प्रसन्न हो जाएंगी तब तुम्हारे लिए कोई लड़की ढूंढ़कर बाजे-गाजे के साथ विवाह कर देंगी।"

"पर पिता जी। सोमा कहती है कि उसने विश्वम्भर से विवाह करने का निर्णय कर लिया है।"

"बहुत बदमाश है वह ?"

"जी, जी।"

"तो तुम्हारी मां क्या कहती है ?"

"उसने विश्वम्भर को बुलाया है।"

"ठीक है। यदि काहन स्वीकार करे तो विवाह कर दो।"

"काहन स्वीकार नहीं करेगा।"

"कैसे कहते हो ?"

"वह आपका भाई है न?"

"हां। वह भाई था जब हम पुराने काल के विचार रखते थे। तब भाई-भाई में बहुत स्नेह होता था। परिवार की बहुत महिमा थी। एक के लिए परिवार के सब लोग रक्त बहा देते थे। धनवान भाई निर्धन की सहायता करता था। और निर्धन परिवार की मान-प्रतिष्ठा के लिए अपना जीवन तक दे देता था।

"परन्तु अब ज़माना बदल रहा है। बेटा, हम सभ्य हो रहे हैं। कल मेरे पास काहन की सगी बहिन का लड़का दाताराम आया था। उसने किसी प्रकार का व्यापार किया था और उसमें घाटा पड़ने से उसका दिवाला पिट गया है। लेनदारों ने उसपर धोखा करने का मुकदमा दायर कर दिया है। उसके वारंट निकाले गए और उसको बीस हज़ार का कोई ज़ामिन चाहिए था। वह पुलिस से छुपा हुआ अपना ज़ामिन ढूंढ रहा था। परिवार के सब सदस्यों पर हो आया था और कोई उसकी ज़मानत देने को तैयार नहीं हुआ।

"मुझको ख्याल आ गया कि चाचा की लड़की तो बहिन ही हुई। उसका लड़का ज़मानत के लिए परेशान हो, लज्जा की बात है। अतः मैं न्यायालय में गया और बीस हज़ार की ज़मानत दे आया। न्यायालय से लौट रहा था कि शिव ताया जी का लड़का निरंजन मिल गया। जब मैंने उसको बताया कि मैं दाताराम की ज़मानत दे आया हूं तो वह कहने लगा, 'मेरे पास भी वह आया था। मैंने तो इन्कार कर दिया था। वह महा बेईमान है। उसने सब रुपया घर पर रखकर दिवाला निकाल दिया है।'

" 'तो अब वह भाग जाएगा?'

" 'निःसन्देह।'

"मैं चुप हूं। इसपर भी मुझको अपना रुपया खतरे में डालकर भी चिन्ता नहीं। परन्तु प्रबोध! दाताराम अपने मामा काहन के पास भी गया था। उसने भी ज़मानत देने से इन्कार कर दिया था।

"इससे मैं समझ रहा हूं कि उसके और मेरे विचारों में अन्तर आ गया है। मुझसे अधिक सम्बन्ध था उसका दाताराम से।"

प्रबोध इससे विस्मय में मुख देखता रह गया। वह मन में विचार करता था कि यदि दाताराम उसके पास आता तो क्या वह उसका ज़ामिन बन जाता? क्या मां उसकी ज़मानत देती? उसको यह समझ आया कि उसका ज़ामिन बनना सत्य

ही रुपये को खतरे में डालना है। यही कारण था कि उसको अपने पिता की यह बात अव्यावहारिक प्रतीत हुई थी।

प्रबोध को चुप देख रूप ने पूछ लिया।

"क्यों बेटा जी, क्या विचार कर रहे हो?"

"मैं भी कुछ ऐसा विचार कर रहा हूं कि आपका बीस हजार गया।"

"यह हो सकता है, परन्तु प्रबोध, इससे लाभ किसको होगा?"

"दाताराम को?"

"वह अपना ही है। यदि मेरे बीस हजार से उसको कुछ लाभ हो जाएगा तो लाभ घर में ही रह जाएगा। क्या कहते हो?"

"मैं उसको घर के भीतर नहीं समझता।"

"और काहन के लड़के को घर के भीतर समझते हो? क्या हानि है सोमा के उससे विवाह कर लेने में?"

"यह धर्म के विरुद्ध है, पिता जी।"

"तुम्हारी मां का भूषण से विवाह धर्मानुसार है न?"

"पर आपने भी तो किया है?"

"एक अधर्म के कार्य से दूसरा अधर्म का कार्य क्षम्य नहीं हो जाता।"

"पिता जी, इसका अर्थ तो यह है कि सब कुछ गलत हो रहा है।"

"इसीलिए तो कह रहा हूं कि विश्वम्भर माने तो उसका विवाह कर दो। यह युग-धर्म है।"

"तो आप उस विवाह में आएंगे?"

"नहीं। मैं समझता हूं कि मैं गलत नहीं कर रहा। हमारे जमाने में पुरुष को अधिकार था कि वह एक से अधिक विवाह कर ले। साथ ही हमारे जमाने में भाई का भाई सहायक होता था। बाप बेटे की सहायता करता था और बेटा बाप की।

"तुम और तुम्हारी मां नये जमाने के जीव हो। तुम्हारे लिए परिवार, बहिन, भाई, सास, श्वसुर कुछ अर्थ नहीं रखते। तुम्हारी मां पुरुष की भांति स्त्री के भी अधिकार मानती है। मैं यह गलत समझता हूं। इसलिए मैं उस विवाह में नहीं आऊंगा।

"अब तुम जाओ और जैसा मैंने कहा है, करोगे तो तुम्हारी समस्या सुलझ

जाएगी।"

रूप भोजन कर चुका था। वह उठ खड़ा हुआ। प्रबोध भी जाने के लिए उठ खड़ा हो गया। इस समय राम वहां आ पहुंचा।

९

"ओह ! पिता जी ! कैसे आना हुआ है आज ?"

प्रबोध सुन्दरी को उठ बाबा के चरण स्पर्श करते देख, विस्मय में मुख देखता रह गया। वह सुन्दरी को सर्वथा आवारा औरत समझता था। प्रबोध के मुख पर आश्चर्य देख, रूप खिलखिलाकर हंस पड़ा। सब पुनः बैठ गए। राम ने पूछा, "पिता जी ! क्या लेंगे ? खाना, कुछ ठंडा पीने को अथवा चाय ?"

"खाना खाकर घर से चला हूं। यह प्रबोध अपने विवाह के लिए कहने आया है क्या ?"

"जी। और...।"

"और सोमा के विवाह के विषय में ?"

"हां। वह भी बता रहा है।"

" अच्छा सुनो। कल यह अपनी दादी से अपनी मां के विषय में बता रहा था और उसने कहा था कि यह भी विवाह कर ले। इसपर उसने दादी से कहा कि वह कोई लड़की ढूंढ़ ले। इसकी दादी ने ही इसको आपके पास भेजा है।

" आज प्रातःकाल के अल्पाहार के पश्चात् दिति अपनी दादी के पास आ गई थी और बता रही थी कि काहन के लड़के विश्वम्भर से सोमा ने सम्बन्ध बनाने का निश्चय किया है। तुम्हारी मां तो यह कहती है कि मैं जाकर काहन को कहकर समझा-बुझा, विश्वम्भर के कहीं अन्यत्र विवाह का प्रबन्ध करा दूं। इधर वह आज सायंकाल सोमा को समझाकर उसका विवाह करने का यत्न करेगी।

" परन्तु मैंने काहन के पास जाने के स्थान पर तुम्हारे पास आना ठीक समझा है।"

"भापा," रूप ने कह दिया, "मैं सुभद्रा के परिवार में रुचि नहीं रखता। काहन के विषय में, मैं अपनी सम्मति प्रबोध को बता चुका हूं। वह सदा परिवार

से तटस्थ रहता रहा है। इसलिए उसके लिए न तो कोई भाई है न बहिन। कदाचित् वह मान जाएगा कि यह बहिन-भाई का विवाह हो जाए ! "

"परन्तु रूप, कानून इसके विपरीत है।"

"ऐसे ही विपरीत है जैसे मेरे और सुन्दरी के विवाह के विपरीत है अथवा भूषण और सुभद्रा के विवाह के विपरीत है।"

"परन्तु रूप ! यह विवाह नहीं है। यह तो अनियमित सम्बन्ध है। इसका न तो कानून विरोध कर सकता है न ही ऐसे विवाहों की रक्षा करता है।"

"तो क्या कानून नियमित विवाहित स्त्री-पुरुष की रक्षा कर सकता है ?"

"हां ! करता तो है। देखो, निरंजन की एक बहिन थी राधा ! उसका देहान्त हो चुका है। राधा की पोती है सुधा। सुधा की लड़की वीणा को उसके घर वाले ने सात वर्ष विवाह के पश्चात् मार-पीटकर घर से निकाल दिया था। पिछले वर्ष उसने विवाह-विच्छेद के लिए प्रार्थना की थी। उसकी प्रार्थना स्वीकार हो गई है।"

"भापा ! मैं यह सब कथा सुन चुका हूं। मैं तो यह जानना चाहता हूं कि अब वीणा क्या करना चाहती है। उसके दो बच्चे हैं। बड़ा लड़का है और छोटी लड़की तीन वर्ष की है। अदालत ने यह निर्णय दिया है कि लड़का पिता के पास रहे और लड़की मां के पास !"

राम ने कह दिया, "हां ! और लड़की के पालन-पोषण के लिए तीस रुपये महीना उसका पति उसको दे।"

"बहुत दया की है कोर्ट ने ! परन्तु वीणा अब क्या करेगी ? क्या वह नया विवाह कराएगी ?"

"नहीं। उसने एक स्कूल में नौकरी कर ली है। सवा सौ रुपया महीना वेतन पाती है और निर्वाह कर रही है।"

"क्या मजेदार है कानून की सुरक्षा ! वह विवाह-विच्छेद के बिना ही घर चली आती, बच्चों को बाप के घर छोड़ आती और यहीं नौकरी कर लेती तो क्या हानि होती ? मैं समझता हूं कि उस अवस्था में अधिक मजे में रहती।"

"तो यह सैकड़ों विवाह-विच्छेद के मुकदमे जो दिल्ली में चल रहे हैं, व्यर्थ हैं ?"

"भापा ! विवाह-विच्छेद तो होते हैं। इस कानून से पहले भी होते थे

और पीछे भी होते रहेंगे। अन्तर यह हो गया है कि अब वह पक्के हो जाते हैं और पहले अस्थायी होते थे। उनमें से अधिकांश की अवस्था में सुलह हो जाती थी। अब उसके लिए स्थान नहीं रहा।"

"रूप, तुम वकील क्यों नहीं बन गए ?"

"क्या होता उससे ? वकील किसी भी कानून को गलत अथवा ठीक कह नहीं सकता। वह तो जैसा ही कानून बनता है उसका समर्थन करता है।"

"तो फिर यह सब जो तुम कहते हो, कैसे होगा ?"

"वर्तमान अवस्था में कुछ नहीं हो सकता।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि आज संसद का निर्माण हुआ है, देश के उन नेताओं के द्वारा, जिनको जनता उनके राजनीतिक विचारों के कारण जानती है। उसका निर्वाचन के समय विचार था कि इन लोगों ने राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त की है और यह देश की राजनीतिक अवस्था सुधारेंगे। किसीने भी इनको न कभी धर्म-कर्म का ज्ञाता समझा है और न कभी समाज-सुधारक माना है। परन्तु ये संसद के सदस्य बनकर जनता की सामाजिक और धार्मिक भावनाओं को बदलने लग पड़े हैं।

"प्रत्येक चुनाव पर ये कोई न कोई राजनीतिक ढोंग खड़ा कर देते हैं और जब चुनकर संसद में बैठ जाते हैं तो फिर जनता की भावनाओं से मनमानी करने लगते हैं।"

"परन्तु सब पढ़े-लिखे इनका समर्थन करते हैं !"

"क्या पढ़े-लिखे और कौन पढ़े-लिखे ?"

"जो स्कूलों, कालिजों में पढ़े हैं।"

"भापा ! वे पढ़े-लिखे नहीं कहे जा सकते। मुझको स्मरण है कि मैं एम० ए० पास करने के पश्चात् भी गौरी बूआ के सामने धर्म-कर्म के विषय में बता नहीं सकता था और वह घर पर हिन्दी ही पढ़ी थी। ये पढ़े-लिखे सामाजिक विषयों में कुछ नहीं जानते। और फिर देश में इनकी संख्या कितनी है ? कालिजों की शिक्षा प्राप्त तो जनसंख्या का एक हजारवां भाग भी नहीं। हां। ये हल्ला बहुत करते हैं और मुझको विश्वास है कि जो इस कानून का समर्थन करते रहे हैं वे विवाह-बन्धन से मुक्त हो गुलछर्रे उड़ाने की नीयत रखते थे। स्त्रियां भी जो इस विवाह-विच्छेद के हक में थीं, वे पतियों के बन्धन से मुक्त विचरना चाहती थीं। कोई

इनमें भूला-भटका वस्तुस्थिति से अनभिज्ञ और यूरोप की चकाचौंध से प्रभावित मूर्ख इस कानून के पक्ष में सत्य हृदय से भी हो सकता है। वास्तव में इसका लाभ किसीको भी नहीं हुआ। कुछ वकीलों की बन आई है और कुछ गुंडे लौंडों की।"

"खैर छोड़ो इस बात को। यह बताओ कि हमको क्या व्यवहार करना चाहिए। एक बात मेरे मन में है, कहो तो बताऊं।"

"हां भापा! बताओ।"

"सायंकाल से पूर्व सुभद्रा और सोना दोनों को कोठी से निकाल दूं, जिससे जो कुछ बच गया है उसे बचा लूं। मेरा अभिप्राय दिति और कमल से है। परन्तु कोठी तुम्हारी है, वह स्त्री और लड़की तुम्हारी है। इस कारण पूछने चला आया हूं।"

"नहीं भापा! अभी नहीं। मैं समझता हूं कि सबसे पहले सोना की समस्या सुलझानी चाहिए। आप काहन से बात करिए। यदि वह और उसका लड़का विश्वम्भर पसन्द करें तो दोनों को पृथक् रहने के लिए एक मकान दे दिया जाए और उनको आशीर्वाद दे दिया जाए। तत्पश्चात् सुभद्रा का विचार करेंगे।"

"यदि विश्वम्भर मान गया और काहन न माना तो क्या करेंगे?"

"विश्वम्भर अब बाईस वर्ष का है। उसको विवाह स्वेच्छा से करने का अधिकार है। काहन को हम मना लेंगे।"

"और प्रबोध के विषय में क्या कहते हो?"

"मैंने तो इसको राय दी है कि यह किसी लड़की से विवाह के लिए स्वयं निश्चय कर ले। यह कहता है कि इसमें इस प्रकार के कार्य के लिए साहस नहीं। ऐसी स्थिति में मैंने इसको राय दी है कि यह नित्य प्रातःकाल उठकर अपनी दादी के चरणस्पर्श किया करे। जब वह प्रसन्न हो जाएगी तो वही इसके विवाह का प्रबन्ध कर देगी।

"परन्तु एक बात और है, जो इसे करनी होगी। वह है [illegible] के हाथ से अपने व्यापार को मुक्त करना। वह इसको धोखा भी दे सकता है। अब तक इसको अपनी मां और अपने बाप से मुस्करा कर बातचीत करनी चाहिए और उसके हाथ से अपना कारोबार निकाल लेना चाहिए।"

राम काहन की कोठी में जा पहुंचा। काहन ने पेन्शन ले ली थी। वह अपनी एक कोठी बनाकर रह रहा था। इन दिनों उसका मुख्य कार्य सिविल मार्केट से ले-

दे करना था। इस व्यापार में उसने पर्याप्त धनोपार्जन कर लिया था। वह शक्ति-नगर में रहता था। घर पर टेलीफोन लगवा लिया था और घर बैठा हिस्से बेचता और खरीदता रहता था।

राम कई वर्ष के पश्चात् काहन से मिलने गया था, इस कारण काहन को विस्मय हुआ था। उसने राम को देख पूछ लिया, "चाचा जी ! आज कैसे आना हुआ है ?"

"मैं यही विचार करता था कि तुम कोई शुभ कार्य करोगे और फिर निमंत्रण दोगे तब मैं और तुम्हारी चाची अथवा साली दोनों आएंगे। जब तुम्हारा किसी प्रकार का निमंत्रण-पत्र नहीं मिला तो पूछने चला आया हूं कि विश्वम्भर का विवाह नहीं करोगे क्या ?"

"चाचा जी ! ज़माना बदल गया है। स्वराज्य होने के पश्चात् और शिक्षा के प्रसार से अनेकों माता-पिता बच्चों के विवाह के बोझ से मुक्त हो गए हैं। मैं समझता हूं कि लड़के-लड़कियां भी अब सुख का सांस लेने लगे हैं। उनको अनजाने लड़के-लड़की से विवाह कर बांध दिए जाने का भय नहीं रहा।"

"तो विश्वम्भर कहीं स्वयं विवाह करने वाला है ?"

"मुझको ज्ञात नहीं। मैं इस विषय में जानने की रुचि भी नहीं रखता उसने स्वयमेव अपना काम ढूंढ़ा है। उस काम में स्वयमेव योग्यता प्राप्त की है और फिर स्वयं ही वह उन्नति कर रहा है।

"मेरी चिन्ता विश्वम्भर नहीं, अपितु उसके छोटे भाई-बहिन हैं। वह चिन्ता भी उनके विवाह करने की नहीं। वह उनको शिक्षा देने की है। सब के सब अति योग्य और प्रतिभाशाली हैं।"

"तब तो मुझको विश्वम्भर के आने की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।"

"तो चाचा जी, किसी लड़की का रिश्ता लेकर आए हैं ?"

"लेकर तो नहीं आया, परन्तु उसकी सम्मति एक लड़की के विषय में जानने आया हूं। मुझको बताया गया है कि तुम्हारे साहबज़ादे ने उस लड़की को विवाह का वचन दिया है।"

"और कौन है वह ?"

"काहन। जब तुमको रुचि ही नहीं तो फिर तुमको बताने की आवश्यकता ही नहीं।"

"ठीक है। चाय मंगवाऊं चाची जी !"

"और दुर्गा कहां है ?"

"वह लड़कियों के साथ बाज़ार गई है।"

"तो लड़कियां पढ़ने नहीं जातीं ?"

"जाती हैं। आज उनकी स्कूल से छुट्टी थी।"

"विश्वम्भर किस समय दफ्तर से आ जाया करता है ?"

"वह प्रायः साढ़े पांच तक यहां पहुंच जाया करता है।"

राम ने घड़ी में समय देखा और कह दिया, "चार बज चुके हैं। मुझको उसकी प्रतीक्षा करनी ही चाहिए।"

दुर्गा, काहन की पत्नी, लड़कियों के साथ बाज़ार से पहले लौटी। काहन की सबसे बड़ी लड़की चौदह वर्ष की थी। नाम था कीर्ति। सोमा, राम की पोती, इसकी सहेली थी और इसकी श्रेणी में पढ़ती थी। सोमा सत्रह वर्ष की थी। वह नौवीं श्रेणी में तीन बार अनुत्तीर्ण हो चुकी थी।

जब दुर्गा बाजार से लौटी तो सोमा उसके साथ थी। सोमा अपने बाबा को वहां बैठा देख विस्मय में मुख देखती रह गई। वह आज विश्वम्भर को अपनी मां के पास ले जाने का विचार रखती थी। उसको सन्देह हो गया था कि उसका बाबा भी इसीके विषय में बातचीत करने आया है। उसने अपने मन को सुदृढ़ कर लिया और पूछने लगी, "भापा ! आज इधर कैसे आ गए हैं ?"

राम ने उसकी बात का उत्तर देने के स्थान पर उससे पूछ लिया, "तुम यहां क्या कर रही हो ?"

"मैं कीर्ति की श्रेणी में पढ़ती हूं। आज स्कूल में छुट्टी हो गई थी, इस कारण मैं उसके साथ यहां आ गई हूं।"

राम ने बात बदल दी। उसने अपनी साली को सम्बोधन कर पूछ लिया, "बताओ दुर्गा, कैसी हो ?"

"बहुत मज़े में हूं, जीजा जी ! आज आपके दर्शन हुए हैं। खैर तो है ?"

"मन में आया, बहिन दुर्गा के परिवार के दर्शन करने चाहिए। बस इसी ओर चल पड़ा।"

"तो ठहरिए। लड़कियां तो आ गई हैं, लड़के भी आने वाले हैं। भगवान की कृपा है, छः मेरे हैं और एक पहले का है।"

"सुना है वह तो नौकर हो गया है।"

"हां। तीन सौ से ऊपर वेतन पाता है।"

"और तुम्हारे साथ कैसे व्यवहार रखता है?"

"सदा लड़के के समान ही रहा है। सदा आज्ञा का पालन करता है।"

इस समय दो लड़के आ गए। मोहन और सुरेन्द्र। काहन ने उनका परिचय करा दिया, "यह है मोहन, इस समय हायर सैकण्डरी में पढ़ता है और अपनी श्रेणी में प्रायः प्रथम रहता है। और यह है सुरेन्द्र। स्कूल की क्रिकेट टीम का खिलाड़ी है।"

"काहन! बहुत भाग्यशाली हो तुम!"

"भैया, यह सौभाग्य तुमने ही तो बटोरकर दिया था। स्मरण है, दुर्गा को इस घर में लाने में तुम ही तो कारण थे।"

"अपने-अपने भाग्य के अधीन ही सब आते और जाते हैं। मनुष्य तो निस्सहाय नदी में बहते तिनके के समान है।"

चाय तैयार हो गई और सब, राम, काहन, दुर्गा, काहन के छः बच्चे और सोमा चाय पीने लगे। सब विश्वम्भर की प्रतीक्षा कर रहे थे, परन्तु वह अभी नहीं आया। काहन ने कुछ चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा, "बहुत कम ऐसे दिन हुए हैं, जब वह देरी से आया है।"

चाय समाप्त हुई। विश्वम्भर नहीं आया। लड़कियां और दुर्गा कोठी के भीतर चली गईं।

मोहन और सुरेन्द्र बाईसिकलों पर सवार हो खेलने के मैदान को चले गए। ड्राइंग रूम में काहन और राम बैठे रह गए। पुराने काल की बातें होने लगीं तो समय व्यतीत होते पता नहीं चला। दीप जल गए। एकाएक राम को विचार आया कि उसको चलना चाहिए। वह उठा और कहने लगा, "कल रविवार है। विश्वम्भर को उधर भेज देना। मैं समझता हूं कि उसका विवाह हो जाना चाहिए।"

"अच्छी बात है। कह दूंगा, वैसे इस विषय में केवल उसको सम्मति ही दे सकता हूं।"

"ठीक है काहन भैया! मैं भी तो आज्ञा देने की स्थिति में नहीं हूं।"

१०

राम चलने लगा तो उसे सोमा की याद आ गई। उसने सोमा को आवाज़ लगा

दी। वह आई तो कहा, "चलो। मैं टैक्सी में जा रहा हूं। तुम भी चलो।"

सोमा इन्कार नहीं कर सकी। वह भी आज निराश थी। विश्वम्भर को आने में इतनी देरी पहले कभी नहीं हुई थी। उसको इस घर में नियमित रूप से आते हुए एक वर्ष के लगभग होने जा रहा था और इस काल में एक यह पहला दिन था, जब वह इस समय तक भी लौटा नहीं था।

काह्न ने टैक्सी स्टैण्ड पर टेलीफोन किया। टैक्सी आई और बाबा-पोती उसमें बैठ श्रीराम रोड को चल पड़े। सोमा ने मार्ग में ही पूछना आरम्भ कर दिया, "बापा! इधर कुछ काम था क्या?"

राम ने ध्यान से लड़की के मुख पर कह दिया, "हां। तुम्हारे विषय में बातचीत करनी थी।"

"मेरे?" सोमा ने विस्मय प्रकट करते हुए पूछ लिया, "मेरे विषय में क्या बातचीत करनी थी?"

"यही कि तुम यहां आकर क्या करती रहती हो।"

"तो फिर क्या बताया है मौसा जी ने?"

"कहते थे कि वे कुछ नहीं जानते। विश्वम्भर ही बता सकेगा, क्योंकि तुम और वह ही अधिकतर घूमते-फिरते हो।"

इसमें कुछ उत्तर देने को नहीं था। इस कारण सोमा चुप रही। परन्तु राम ने बात का सूत्र नहीं छोड़ा, उसने कह दिया, "तुम भी तो विश्वम्भर को अपनी मां से मिलाने के लिए ले जाने वाली थी।"

"हां। परन्तु वे आए नहीं। पहले कभी ऐसा नहीं हुआ।" सोमा समझ गई कि उसका बाबा सत्य स्थिति जानता है।

"तो तुमको भी चिन्ता लग गई है?"

सोमा ने कुछ उत्तर नहीं दिया। राम ने पुनः पूछा, "अब मां को क्या उत्तर दोगी?"

"यही कि वह बहुत देरी तक कार्यालय से नहीं लौटा था।"

"तो कल फिर उसको लेने के लिए आओगी?"

सोमा ने इसका उत्तर नहीं दिया।

"मैंने उसको कल अपनी कोठी में आने का निमंत्रण दिया है। मैं प्रातःकाल टेलीफोन में दुहरा भी दूंगा।"

सोमा फिर चुप रही। राम ने अंतिम बात पूछ ली, "तुम प्रसन्न हो?"

"मन डरता है।" सोमा मन की बात कहने पर विवश हो गई।

"किस बात से?"

"यह हमारी योजना के विपरीत हो रहा है।"

"तुम्हारी क्या योजना थी?"

"हम तो आज बिना किसीको सूचना दिए बम्बई के लिए जाने वाले थे। वे कह रहे थे कि वे दफ्तर से पंद्रह दिन की छुट्टी लेकर आएंगे। हमने अपने लिए देहरादून एक्सप्रेस में दो बर्थ रिजर्व कराए हुए हैं।"

"उसके जाने में तो अभी बहुत समय है।"

सोमा इसका अर्थ यह समझी थी कि उसका बाबा उसको जाने की स्वीकृति दे रहा है। वह चुप रही तो राम ने कह दिया, "वह घर आएगा और तुमको वहां न देख, निराश होगा, और कदाचित् नाराज़ भी होगा।"

"यही तो डर लग रहा है। अब जाते ही टेलीफोन कर उनको कहूंगी कि वे टैक्सी लेकर मुझको कोठी पर लेने आ जाएं।"

"हां। यही ठीक होगा।"

सोमा राम के इस प्रकार उसकी योजना को ठीक कहते सुन प्रोत्साहित हो पूछने लगी, "तो भापा! तुम हमारी योजना को ठीक समझते हो?"

"ठीक तो नहीं समझता। परन्तु तुम दोनों जो कुछ करोगे अपना भला-बुरा विचार कर करोगे। इस कारण मैं इसमें बाधा भी डालना नहीं चाहता।"

"तो आप किस अर्थ यहां आए थे?"

"अपनी भांति काहन को भी तटस्थ करने के विचार से।"

"तो फिर मौसा जी से बात हुई?"

"नहीं। विश्वम्भर था नहीं और उसके बिना बात हो नहीं सकी।"

सोमा मन में प्रसन्न थी। वह समझ रही थी कि उसका बाबा तो उसकी मां से भी अच्छा है। वह चुप थी।

कोठी में पहुंच, वह प्रबोध के कार्यालय में चली गई। टेलीफोन वहां ही लगा था। वहां भूषण बैठा हिसाब-किताब लिख रहा था। सोमा गई और बिना कुछ कहे काहन की कोठी पर टेलीफोन करने लगी। टेलीफोन रुकी हुई थी। इस कारण वह चोगा रख प्रतीक्षा करने लगी। भूषण ने अपनी किताब से सिर ऊपर

उठाया और कलम रख सोमा की ओर देख, पूछने लगा, "सोमा रानी कहां टेली-फोन कर रही है ?"

"जहां के विषय में आपको जानने की आवश्यकता नहीं है।"

"वाह ! मेरी आवश्यकता मैं जान सकता हूं तुम क्या जानो ?"

"तो ठीक है। आप जानिए। मैंने आपको मना नहीं किया।"

"अच्छी बात। करो टेलीफोन ! मैं जान लूंगा।"

भूषण उठकर टेलीफोन के समीप आ खड़ा हुआ। इसके बीच में सोमा कार्या-लय से निकल अपने कमरे में चली गई।

वह वहां गई तो उसकी बहिन दिति वहां नहीं थी। दिति का बिस्तर और पुस्तकें भी वहां नहीं थीं। वह उसका पलंग और मेज़ खाली देख, विस्मय कर रही थी। वह इसका अर्थ नहीं समझी। फिर मन की निराशावस्था के कारण अपने पलंग पर लेट विचार करने लगी कि क्या करे ? वह भोजन के समय की प्रतीक्षा करने लगी। वह इस समय कार्यालय में जाकर टेलीफोन करने का निश्चय कर चुकी थी। वह समझ रही थी कि उस समय भूषण डाइनिंग हाल में होगा और वह बिना उसके जाने टेलीफोन कर सकेगी।

परन्तु उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा जब कार्यालय को ताला लगा देखा। यह पहले से भिन्न बात थी। उसको अब विश्वास होने लगा कि भूषण जान गया था कि कहां टेलीफोन करने जा रही थी और वह नहीं चाहता कि विश्वम्भर से उसका सम्पर्क रहे। इसपर भी वह चुप थी और खाने के कमरे में आकर बैठ गई। वह मन में डर रही थी कि विश्वम्भर उससे नाराज हो रहा होगा।

भोजन करते हुए भूषण ने सोमा की ओर नहीं देखा, न ही उसकी मां ने सोमा से पूछा कि विश्वम्भर को लेने गई थी अथवा नहीं। हां, एक बात विशेष हुई। दिति और कमल भोजन पर नहीं थे। सोमा ने पूछ लिया, "मां ! दिति और कमल कहां हैं ?"

उत्तर प्रबोध ने दिया, "वे अपने दादा के घर में रहने चले गए हैं और कह गए हैं कि भोजन भी उनके साथ ही करेंगे।"

"क्यों ?"

"मैं भी कल से पृथक् रहने जा रहा हूं।"

'किससे पृथक् ?"

"मां से और तुमसे।"

"किसलिए ?"

"भापा ने कहा है कि मैं जब उनके कक्ष में रहने लगूंगा तो मेरा विवाह हो जाएगा।"

सोमा को स्मरण आ गया कि भापा उसके विवाह में भी यत्न कर रहा था। अतः उसने मां से पूछ लिया, "मां, तुम भैया का विवाह क्यों नहीं कर देतीं ?"

"तुम्हारे पिता के घर छोड़ जाने से हम सब बदनाम हो गए हैं और जब भी मैं किसी स्थान पर बात करने जाती हूं तो लोग तुम्हारे पिता के विषय में पूछते हैं।"

"तो फिर हम क्या करें ?"

"सब अपना-अपना मार्ग ढूंढ़ो। सब अपने-अपने लिए यत्न करो।"

"तो मां ! कार्यालय की चाबी दे दो।"

"क्या काम है ?"

"मैं अपना मार्ग ढूंढ़ना चाहती हूं।"

"क्या मतलब ?"

"मैं भी विश्वम्भर जी को टेलीफोन करना चाहती हूं।"

"हां ! तो तुम्हें आज उसको यहां लेकर आना था।"

"मैं लेने गई थी, परन्तु सायं साढ़े पांच बजे तक वह दफ्तर से लौटा ही नहीं था। भापा वहां गए हुए थे और वे मुझको साथ लेकर आ गए हैं।"

"भापा ! वहां किस मतलब से गए थे ?"

"कहते थे कि मेरे विषय में बात करनी थी।"

"तो वे तुम्हारा वहां विवाह पसन्द करते हैं ?"

"नहीं। पसन्द तो नहीं करते। परन्तु कहते थे कि यह काम हमारा है। वे बीच में बाधा खड़ी नहीं करेंगे और वे यही बात विश्वम्भर जी के पिता को कहने गए थे।"

"मुझको तो कुछ यह मालूम हुआ है कि तुम्हारे पिता ने मुझसे विद्रोह किया है और अब तुम्हारे बाबा भी वही करने जा रहे हैं। वह मेरे बच्चों को भी मुझसे विद्रोह करने में प्रोत्साहन दे रहे हैं।"

"मेरी उनसे बातचीत हुई है और मुझको कोई ऐसी बात प्रतीत नहीं हुई।"

"अच्छा, ऐसा करो, विश्वम्भर को टेलीफोन कर कल यहां आने का निमंत्रण दे दो।"

"पर मां। कार्यालय को ताला लगा है।"

"वह भूषण जी ने लगाया है। उनको सन्देह हो गया है कि कोई वहां से कुछ चोरी करना चाहता है।"

"कोई कौन? भापा जी?"

"हो सकता है।"

"पर क्यों और क्या चोरी करना चाहते हैं?"

"कुछ कागज़ात चोरी हुए हैं। अभी तक पता नहीं चला कि उनको कौन और क्यों ले गया है।"

सोमा टुकर-टुकर मुख देखती रह गई। फिर पूछने लगी, "तो फिर टेलीफोन कैसे करूं?"

"भूषण जी भोजनोपरान्त टेलीफोन करा आते हैं।"

सोमा नहीं चाहती थी कि भूषण के सामने टेलीफोन करे परन्तु विवश थी और मन में यह निश्चय कर कि वह सावधानी से बात करेगी, वह भूषण के साथ कार्यालय को चली गई।

जब वे दोनों चले गए तो सुभद्रा ने प्रबोध से पूछा, "तुम भापा जी के साथ रहने क्यों जा रहे हो?"

"मां। भूषण मुझसे झगड़ा करता है।"

"तुमने बैंक की पासबुक और चैकबुक किसलिए चुरा ली है?"

"चैकबुक? इसको उठाने की आवश्यकता क्या थी? रुपया तो तुम्हारे और मेरे हस्ताक्षरों के बिना निकल भी नहीं सकता। फिर उसको कोई उठाकर क्या करेगा?"

"इसीसे तो कहती हूं कि तुम सब लोग विद्रोह कर रहे हो।"

"नहीं मां। यह बात नहीं। यह भूषण कुछ गड़बड़ कर रहा है। वह तुमको हमारे विरुद्ध कर रहा है।"

"क्या उद्देश्य हो सकता है इसमें?"

"उसने स्वयं दोनों को गायब कर दिया है।"

"किसलिए?"

"जिससे हिसाब चैक न किया जा सके।"

"क्या आवश्यकता है चैक करने की ?"

"पिछले कुछ दिनों में बड़ी-बड़ी रकमों के कई चैक काटे गए हैं और उनका किताबों में दर्ज नहीं किया गया।"

सुभद्रा इसका अर्थ समझने लगी। फिर कुछ विचार कर बोली, "अच्छा, कल रविवार है। कल मैं तुम दोनों के सामने बात करूंगी।"

इस समय सोमा लौट आई। मां ने उससे पूछ लिया, "तो दे आई हो निमंत्रण ?"

"वह अभी तक घर पर नहीं लौटा।"

"कहां गया होगा ?"

"उसके पिता का विचार है कि यदि सिनेमा देखने गया है तो आधे घण्टे में लौट आ जाएगा। आएगा तो उसको टेलीफोन करने के लिए कह देंगे।"

"तो टेलीफोन कौन सुनेगा ?"

"ताया जी अभी वहां काम कर रहे हैं।"

"अच्छी बात है। यदि उसका टेलीफोन आया तो मुझको भी बुला लेना। मैं स्वयं उसको यहां आने का निमंत्रण दे दूंगी।"

विश्वम्भर का टेलीफोन नहीं आया और सोमा रात-भर सो नहीं सकी। बहुत प्रातःकाल अभी भूषण तथा सुभद्रा सो रहे थे कि सोमा उठी और कोठी के उस कक्ष में चली गई जिधर कार्यालय था। वह टेलीफोन करना चाहती थी। भूषण ने पिछली रात कहा था कि सब कागज़ात ताले में रखकर वहां चपरासी को सोने के लिए कह आया है। इससे वह विचार करती थी कि कार्यालय खुला होगा और वह टेलीफोन कर सकेगी।

उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा जब उसने चपरासी के स्थान प्रबोध को कार्यालय में भीतर से कुंडा चढ़ाए बैठे देखा। सोमा ने द्वार खोलना चाहा तो उसको भीतर से बन्द देखा। उसने खटखटाया तो प्रबोध ने द्वार खोल दिया। प्रबोध भूषण के बाहर खड़े होने की आशा करता था और सोमा भीतर चपरासी की। दोनों विस्मय में एक-दूसरे का मुख देखते रह गए। प्रबोध को पहले ही समझ आ गया कि वह टेलीफोन करने आई है और उसने उसे कार्यालय के भीतर कर पुनः द्वार भीतर से बन्द कर लिया।

प्रबोध ने द्वार बन्द कर बिजली जलाई तो सोमा ने देखा कि वह रजिस्टरों

की जांच-पड़ताल कर रहा है।"

"क्या हो रहा है, भैया ?"

"मुझको हिसाब में कुछ गड़बड़ समझ आई थी और वह देख रहा हूं।"

"तो ताया जी के कागज तुमने चुराए हैं ?"

"नहीं, कुछ नहीं चुराया। कुछ चोरी भी नहीं गया। इसपर भी कई लाख की गड़बड़ प्रतीत होती है।"

"पर भैया। वे क्यों ऐसा कर रहे हैं ?"

"तुम टेलीफोन कर यहां से भाग जाओ। मुझको अपना काम करने दो।"

सोमा ने काहन की कोठी पर टेलीफोन किया। वहां से काहन ने उत्तर दिया, "विश्वम्भर रात-भर घर नहीं आया। मैं आज उसके कार्यालय में जाकर पता करूंगा।"

सोमा आश्चर्यचकित रह गई। प्रबोध ने पूछा, "क्यों, क्या हुआ है ?"

"विश्वम्भर घर नहीं आया।"

"कहां गया होगा ?"

"मैं कैसे बता सकती हूं ? मौसा जी कह रहे हैं कि वे उसके कार्यालय में जाकर पता करेंगे, परन्तु आज रविवार है। क्या पता करेंगे ?"

प्रबोध ने कहा, "अच्छा, अब तुम जाओ। मां जाग ले तो बात कर लेना।"

सोमा भीगी बिल्ली की भांति वहां से निकल गई। प्रबोध पुनः रजिस्टर देखने लगा। वह अभी भी कार्यालय में हिसाब-किताब देख ही रहा था कि भूषण वहां आ पहुंचा। उसके पीछे-पीछे सुभद्रा भी वहां पहुंच गई। प्रबोध कुर्सी पर से उठा नहीं और मां तथा भूषण का मुख देखने लगा। वह चाहता था कि वे ही बात आरम्भ करें।

सुभद्रा ने पूछ लिया, "यहां क्या कर रहे हो प्रबोध ?"

"मां, कम्पनी के हिसाब की जांच-पड़ताल कर रहा हूं।"

"क्यों ?"

"इसमें कुछ गड़बड़ प्रतीत हुई थी।"

"तो फिर क्या देखा है ?"

"मेरा सन्देह ठीक प्रतीत होता है। सारी ही चैकबुक और बैंक की पास बुक ताया जी ने छुपा रखी हैं।

"क्यों भूषण जी !" सुभद्रा को प्रबोध की रात वाली बात स्मरण थी और वह समझती थी कि इस वक्त सब बात शान्ति से हो सकेगी।

भूषण ने कहा, "वाह ! करे कोको और बताए लोको। मुझे पासबुक को छुपाकर क्या करना है ?"

"देखो जी ! पासबुक से अधिक आवश्यक चैकबुक है। पिछले सप्ताह मैंने तीन बड़े-बड़े चैकों पर हस्ताक्षर किए हैं। सब के सब सेल्फ और बेयरर के लिए थे। मैंने देखा है कि उनको रजिस्टरों में दर्ज नहीं किया गया। वे चैक आपको दिए गए थे। आपने इनकी रकम वसूल कर ली होगी। वह किधर गई ?"

"मजदूरों के वेतन में निकल गए होंगे। मैं रात हिसाब लिखने लगा था कि चैकबुक नहीं मिली। चपरासी ने बताया था कि तुम मेरी अनुपस्थिति में दफ्तर में देख-भाल करते रहे हो। इससे कहता हूं कि वह तुम्हारे पास हो सकती है।"

"नहीं है। मैंने कुछ और भी गड़बड़ देखी है। वह मैं भापा जी को दिखाकर निश्चय करूंगा।"

"देखो प्रबोध। भापा जी को बीच में डालने की आवश्यकता नहीं। मैं तुम दोनों में यहां ही सुलह करा देती हूं।"

"सुलह। मां, हमारी लड़ाई नहीं है। यह हिसाब समझा देंगे, बस, सुलह ही सुलह है।"

"देखो प्रबोध ! कल बैंक चलेंगे और नई पासबुक मंगवा लेंगे।"

"उसको तो एक महीना भी लग सकता है। तब तक काम कैसे चलेगा ?"

"मैं मैनेजर को कहकर कम से कम पिछले महीने का चिट्ठा नकल करवा दूंगा।"

"ताया जी ! आप वही चैकबुक और पासबुक क्यों नहीं निकाल देते ?"

"वह मेरे पास नहीं है प्रबोध।"

"अच्छा ठहरो।" सुभद्रा ने चपरासी के क्वार्टर की ओर जाते हुए कहा। चपरासी रात-भर वहां सोया था। वैसे दिन-भर भी वह वहां रहा था। इससे वह बता सकता था कि पिछले दिन प्रबोध के अतिरिक्त कोई वहां आया है अथवा नहीं। भूषण और प्रबोध दोनों समझ रहे थे कि वह किधर गई है। उसके चले जाने पर भूषण ने कहा, "प्रबोध ! क्यों व्यर्थ में झगड़ा कर रहे हो ! तुम सीधे ही बता दो, क्या चाहते हो ?"

"मैं मां से पृथक् होना चाहता हूं।"

"तो इस झगड़े के बिना भी हो सकते हो।"

"कैसे ?"

"बताओ। कितना कुछ चाहते हो ?"

"हमारी कम्पनी में जितना कुछ है, उसके छः हिस्से चाहता हूं। चार हम-बहिन भाई हैं और दो तुम। मेरा मतलब है, मां और तुम। इस प्रकार सबको अपना-अपना भाग मिल जाए।"

"इससे तो काम चल नहीं सकेगा। प्रति सप्ताह दस हज़ार 'लेबर' के लिए चाहिए।"

"काम भी बंट जाएंगे।"

"लड़कियां कैसे काम करेंगी ?"

"उनके भाग की रकम नकद देनी होगी। मेरी और कमला की साझेदारी रहेगी। आपकी और मां की साझेदारी रह सकती है।"

"नकद सब लड़कियों को चला गया तो काम के लिए रुपया नहीं रहेगा और काम ठप्प हो जाएंगे।"

"हो जाएं। परन्तु मैं अब तुम जैसे बेईमान…।" इस समय सुभद्रा चपरासी को लेकर आ गई।

"यह कहता है।" सुभद्रा ने बताया, "कल यहां भूषण जी और प्रबोध जी के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं आया।"

"तो चोर हम दोनों में से कोई एक है।" प्रबोध ने कहा।

"तो दोनों की तलाशी हो जाए।" भूषण का सुझाव था।

"हां। मगर क्या चोरी का माल कोठी से बाहर नहीं चला गया होगा ?" प्रबोध ने कह दिया।

"यह तो तुम ही बता सकते हो।"

"मैंने तो चोरी की नहीं।"

"और कोई कर ही नहीं सकता।"

"तुम भी नहीं ?"

भूषण हंस पड़ा और यह कहते हुए कार्यालय से चला गया, "यह तो जल मथने के समान है।"

चौथा परिच्छेद

जिसकी पत्नी नेक है, उसका परिवार श्रेष्ठ हो जाता है। यह बात काहन के घर में पूर्ण रूप से सिद्ध हो रही थी। काहन की पहली पत्नी सुधा सन्तान से घबराती थी। उसके घबराने में काहन की अकिंचनता एक कारण थी। वह उस समय अस्सी रुपये वेतन पाता था और उसको रहने के लिए डी क्लास का सरकारी क्वार्टर मिला हुआ था। पन्द्रह रुपये क्वार्टर का किराया और बिजली का खर्चा बैठ जाता था। रोटी, कपड़ा, दफ्तर में खाना-पीना, खेल-तमाशा और फिर स्त्री के लिए शृंगार-सामग्री! बहुत कठिनाई से निर्वाह होता था। इससे पति-पत्नी में नित्य झगड़ा होता था और काहन शोक और चिन्ता में ग्रस्त रहता था।

विश्वम्भर अभी तीन महीने का ही था कि सुधा के नवीन गर्भ ठहर गया और वह गर्भपात के लिए झगड़ा करने लगी। इच्छा न रहते हुए भी वह एक हकीम से दवाई ले आया। दवाई दी तो रक्तस्राव आरम्भ हो गया। परन्तु गर्भपात नहीं हुआ। विवश वह उसे करौलबाग के एक हस्पताल में ले गया। वहां ऑपरेशन की राय हो गई। उसके लिए रुपया मांगा गया। काहन अभी रुपया एकत्रित करने के लिए भाग-दौड़ ही कर रहा था कि सुधा 'ऑपरेशन टेबल' पर ही प्राण छोड़ बैठी।

काहन को इसका भारी शोक था। एक तो उसकी पत्नी झगड़ालू होते हुए भी मनुष्य थी और उसको यह समझ आया था कि उसने उसकी हत्या कर दी है। दूसरे अपनी आर्थिक अवस्था देख, उसको अपना पुनः विवाह हो जाने की आशा नहीं थी। इसके अतिरिक्त वह-विचार करता था कि कहीं विवाह हो भी गया तो फिर निर्वाह न हो सकने में पुनः झगड़ा, पुनः गर्भस्थापना और पुनः गर्भपात इत्यादि चक्की पीसने की भांति जीवन-संचालन। इससे वह बहुत ही परेशान था।

सुधा के जीवन-काल में धनाभाव के कारण वह अपने माता-पिता से लड़ पड़ा था। और इससे वह उसका अब दूसरा विवाह करने की इच्छा नहीं रखते थे।

पत्नी के संस्कार के समय और इसके पीछे भी इसके माता-पिता इससे शोक प्रकट करने आते रहे, परन्तु उन्होंने विवाह के विषय में किसी प्रकार की बात नहीं की थी।

इस विषय में सबसे पहले काहन की दादी कर्मदेवी ने ही बात चलाई थी। उसने राम की पत्नी रोहिणी को कह दिया, "तुम्हारी बहिन विवाह के योग्य है। वहां बात क्यों नहीं करतीं ?"

"मां जी !" रोहिणी ने कह दिया, "मेरी मां ने बात तो की है परन्तु मेरा बीच में आने से चित्त डरता है। काहन हत्यारा है और कौन अपनी बहिन को अपने ही हाथों से सूली पर चढ़ाएगा ?"

"तो फिर काहन रंडवा ही रहेगा ? जब घर के प्राणी यत्न नहीं करेंगे तो बात कैसे बनेगी ?"

"मां जी, आप बीच में बैठें तो मैं बात चला सकती हूं।"

"मैं क्या करूंगी ?"

"काहन के घर की देख-भाल और समय-कुसमय सहायता का वचन दीजिए।"

"हो जाएगा। तुम अपनी मां से कहो।"

बात चल पड़ी और तेहरवें के दिन तक बात लगभग निश्चय हो गई। एक महीने में विवाह हो गया। दुर्गा काहन के घर आई तो कर्मदेवी ने समझा दिया, "देखो बेटी दुर्गा ! लोग कहते हैं कि काहन ने अपनी पहली बीबी की हत्या की है। पर मैं जानती हूं कि उस मूर्ख लड़की ने आत्महत्या की है। औरत घर की रानी होती है और वह घर और पति पर शासन करती है। जब रानी ही घर को गलत मार्ग पर चलाए तो पति भी गलत बातें करने लगता है। इसलिए मेरा कहना है कि 'धैर्य, संतोष, मितव्ययिता और संयम से रहोगी तो परमात्मा प्रसन्न होगा और सुख-सम्पदा तुम्हारे चरण चूमने लगेगी।

"हां। जब कोई बात समझ न आए तो अपनी बड़ी बहिन रोहिणी अथवा मेरे पास चली आना। हम यथाशक्ति तुम्हारी समस्या को सुलझा देंगे।"

दुर्गा सुधा से अधिक योग्य सिद्ध हुई और उसकी योग्यता में स्याति देने वाली रोहिणी थी। उसने अपने पति की निर्धनता के काल में बहुत ही चतुराई से अपने घर का काम चलाया था और अपनी थोड़ी-सी आय में से अपने छोटे बहिन-भाइयों की भी सहायता की थी।

पहले ही मास में वेतन आने पर दुर्गा ने अपनी बहिन से राय कर बजट बनाया। मकान तथा बिजली का किराया तो कार्यालय में ही कट गया था। शेष पैंसठ रुपये लेकर काहन घर पहुंचा। दिल्ली अभी एक सस्ता नगर था। बीस रुपये रोटी, बीस रुपये कपड़ा। पांच पाकेट-खर्चा और शेष बीस रुपये सुख-दुःख के समय व्यय करने के लिए। इस प्रकार वेतन को तीन मुख्य आवश्यकताओं में विभक्त किया तो काहन ने पूछ लिया, "और खेल-तमाशे के लिए तथा तुम्हारे क्रीम-पाउडर के लिए?"

"देखिए जी! जब आपका वेतन बढ़ेगा तो उस वृद्धि को खर्च में सम्मिलित करने पर विचार कर लेंगे। भोजन, वस्त्र, मकान तो अनिवार्य हैं।"

"और तेल, कंघी, पाउडर, क्रीम?"

"यह सब हो जाएगा। इसको मुझपर छोड़िए।"

दो वर्ष तक क्रीम के स्थान आटे का बटना, बालों को लगाने के लिए नारियल का तेल। शृंगार में केवल माथे पर बिन्दी और मांग में सिन्दूर के लिए दरीबे से दो पैसे प्रतिमास की रोली से काम चलता रहा। साबुन में 'सनलाइट सोप' और कपड़े की धुलाई घर पर ही होती थी।

घर में काहन को, पत्नी का प्रसन्नवदन और घर की सफाई और सजावट में उसका लगा रहना देख, सुख और शान्ति मिलती थी। परिणाम यह होने लगा कि काहन ने दफ्तर की परीक्षाओं की तैयारी की और प्रथम परीक्षा पहली पत्नी के मरने के दो वर्ष पश्चात् पास कर ली। उसको एकदम पचास रुपये उन्नति मिल गई। अब घर के बजट में परिवर्तन हुआ। दुर्गा ने देखा कि उसका पति दफ्तर के खर्चे देकर घर एक सौ बीस रुपये लाया। उसने भोजन पर पैंतीस रुपये कर दिए। कपड़ों पर पच्चीस रुपये, जमा तीस रुपये। पांच रुपये महीने में दान-दक्षिणा। पांच रुपये मनोरंजन, पांच रुपये चौका-बासन वाली के लिए और पांच रुपये धोबी के लिए। यह बजट बन गया।

दो वर्ष और निकल गए और काहन ने इस समय में टाइप तथा शार्टहैंड सीख लिया। इसकी परीक्षा दी और उसका वेतन अढ़ाई सौ रुपया हो गया। अब बजट में और उन्नति हुई। क्वार्टर बड़ा मिल गया। उसका तीस रुपया भाड़ा था और बिजली-पानी का दस रुपये व्यय होता था। शेष का बजट बन गया। भोजन साठ रुपये, वस्त्रादिक चालीस रुपये, सुरक्षा कोष साठ, जेबखर्च दस रुपये, दान-

दक्षिणा दस रुपये, बोबी पांच, चौका-बासन पांच और मनोरंजन दस रुपये।

इस समय दुर्गा की प्रथम सन्तान हो गई। घर में उत्सव मनाया और अपने सुरक्षित धन में से घर के एक सौ से ऊपर सदस्यों को बुलाकर खाना-पीना कराया गया।

नियमित कार्य की ओर दुर्गा के धैर्य और सन्तोष का ही यह परिणाम था कि काहन को अपने परिवार में मान का स्थान मिला। इस समय युद्ध आरम्भ हो गया था और भारत के लोग अपनी सेवाएं युद्ध-कार्य के लिए देने लगे। काहन ने दुर्गा से पूछा। उसने स्वीकार किया और काहन अपनी सेवाएं युद्ध-कार्य के लिए दे आया। काहन को डैपुटेशन पर सेना-विभाग में भेज दिया गया और उसका वेतन पांच सौ रुपया हो गया। उसे विदेश भेजा गया और रुपया घर में जमा होने लगा। इस समय काहन के दूसरी सन्तान हो चुकी थी।

जब काहन १९४५ में युद्ध से लौटा तो इसको खाद्य विभाग के सदस्य का पर्सनल असिस्टेंट का काम मिल गया। बस, फिर क्या था! घर पर रुपया बरसने लगा। स्वराज्य होने तक काहन एक धनीमानी व्यक्ति बन गया था। उसने नई दिल्ली में दो मकान खरीद लिए थे।

पाकिस्तान बनने से और राष्ट्रीय सरकार की उद्योग-विस्तार की नीति से नगर बड़े-बड़े बनने लगे और काहन ने हिस्से खरीदने और बेचने का काम आरम्भ कर दिया। जायदाद खरीदने में वह अपनी आय लगाने लगा। सन् पचपन में वह अपने पहले स्थान से पेंशन लेकर पुनः सरकारी काम में ही नौकर हो गया और सन् सत्तावन में उस काम को भी छोड़कर वह अपनी सम्पत्ति की आय और हिस्सों की बिक्री की आय से सुख और शान्ति का जीवन व्यतीत करने लगा।

काहन के सुधा से लड़के विश्वम्भर के मन में यह बात स्पष्ट थी कि उसकी मां सौतेली है। इससे बचपन से ही वह स्वतन्त्र रहने की प्रवृत्ति बना बैठा था। उसने सन् १९५४ में बी० ए० पास किया परन्तु विद्यार्थी-जीवन में ही उसने शार्ट-हैंड-टाइपिंग को आरम्भ कर लिया था और पास करते ही वह विदेश विभाग में अढ़ाई सौ मासिक पर नौकर हो गया। सन् सत्तावन में वह साढ़े तीन सौ रुपये वेतन पाता था, जब उसका सम्पर्क रूपकृष्ण की लड़की सोमारानी से बना। वह नौवीं श्रेणी में दूसरी बार अनुत्तीर्ण हुई थी और अपनी सहेली कान्ति के घर बैठी रो रही थी।

औरत रोती हुई सदा से अधिक सुन्दर हो उठती है। यह सौन्दर्य था अथवा उसके अनुत्तीर्ण होने से सहानुभूति थी, विश्वम्भर इसकी ओर आकर्षित हो उठा। उसी दिन वह उसको और कीर्ति को बाज़ार ले गया और जहां कीर्ति को पास होने पर सैर कराता रहा, सिनेमा दिखाता रहा, वहां सोमारानी को उसके अनुत्तीर्ण होने पर सांत्वना देने के लिए सिनेमा दिखाता रहा।

इसके पश्चात् दोनों में मेल-जोल बढ़ता गया और तब वे अकेले भी घूमने जाने लगे। इन्हीं दिनों में सोमारानी ने उससे विवाह की इच्छा प्रकट की और इस विवाह में कठिनाइयों पर बातचीत होने लगी।

सोमा का कहना था, "आप बड़ों की बात छोड़िए। इनसे हम पीछे निपट लेंगे। पहले आप बताइए।"

विश्वम्भर के मुख से अनायास निकल गया, "सोमा! मैं तो तुमको बहुत पसन्द करता हूं परन्तु यह बात असम्भव मानता हूं।"

"क्या असम्भव है इसमें?"

"हमारा सम्बन्ध इतना समीप का है कि घर में कोई भी पसन्द नहीं करेगा।"

"हम विवाह कर लेंगे और पीछे सबको स्वीकार करना पड़ेगा।"

एक बार मानकर कि वह उसको पसन्द करता है, विश्वम्भर पीछे नहीं हो सका। इस कारण योजनाएं बनने लगीं। प्रत्येक योजना को विश्वम्भर कठिन और कार्य में लाने के अयोग्य बता, टाल देता था। इसपर भी सोमा धीरे-धीरे उसपर अपना प्रभाव बढ़ाती जाती थी। कभी विश्वम्भर घर पर अकेला होता और सोमा वहां पहुंच जाती तो वह उससे प्रेम किए जाने की मांग करने लगती। ऐसे अवसरों पर विश्वम्भर भारी मुसीबत में फंस जाता। बहुत कठिनाई से ही वह उसको टाल सकता। एक दिन तो सोमा उसपर विजय पाने के समीप ही थी कि कीर्ति की छोटी बहिन शुचि घर में आ गई। सोमा और विश्वम्भर आलिंगन में थे। जल्दी-जल्दी में वे पृथक् हुए परन्तु शुचि ने उनको देख ही लिया। उसने पूछ लिया, "भैया! यह क्या कर रहे थे?"

"यह मुझसे मेरी कलम छीन रही थी।" विश्वम्भर ने तुरन्त बात बनाते हुए कहा, "और मैं दे नहीं रहा था। इससे छीना-झपटी होने लगी।"

"तो भैया दे दो न? यह हमारी बहिन ही तो है।"

"ओह हां ! यह तो मुझको स्मरण ही नहीं रहा था। अच्छा सोमा, यह लो।" उसने जेब से कलम निकाल उसे देते हुए कहा, "पर याद रखो। यदि तुम इस वर्ष भी पास नहीं हुई तो कलम वापस ले लूंगा।"

इस घटना ने विश्वम्भर को सोए हुए से जगा दिया। वह समझ गया कि शुचि जैसी बच्ची भी समझती है कि यह बहिन है तो इनसे विवाह असम्भव है। अतः वह अपने सम्बन्धों से वापस होने का विचार करने लगा, परन्तु सोमा अपनी योजनाओं को पूर्ण करने का यत्न करने लगी।

शुचि ने भैया विश्वम्भर और सोमा बहिन में कलम पर हुई कुश्ती की सूचना अपनी बहिनों और मां को बता दी। दुर्गा को इससे चिन्ता लगने लगी। उसने इस सम्बन्ध की भयंकर सीमा तक पहुंचने से पहले ही एक अपनी योजना बना दी। उसके मायके में एक अति सुन्दर लड़की थी। उसने उसको अपने घर बुलाना आरम्भ कर दिया। लड़की थी दुर्गा के मामा की पोती। बहुत सुन्दर, और इस समय बी० ए० में पढ़ती थी। नाम था करुणा। करुणा की मां विधवा थी और वह मां की एक ही लड़की थी। विश्वम्भर ने इस लड़की को देखा तो उसपर मोहित हो गया। दोनों में बातचीत हुई। यह निश्चय हो गया कि वे दोनों विवाह करेंगे। करुणा का विचार था कि बी० ए० पास करने के पश्चात् विवाह की बात करेगी। परन्तु विश्वम्भर सोमा के दबाव के कारण शीघ्रातिशीघ्र विवाह कर लेना चाहता था। आखिर एक दिन उसने करुणा को पूर्ण बात बता दी।

करुणा को कालिज से दो बजे छुट्टी होती थी। विश्वम्भर को पता लगा तो वह कालेज के द्वार पर जा पहुंचा। करुणा ने पूछा, "क्या बात है ?"

"एक आवश्यक काम है। चलो, कहीं बैठकर बात करेंगे।" दोनों टैक्सी में सवार हो नई दिल्ली में वेंगर पर जा पहुंचे। वहां बैठ विश्वम्भर ने सोमा के पूर्ण प्रयत्न की कथा सुना दी। इसके साथ ही कह दिया, "यदि तुम्हारा और मेरा विवाह न हुआ तो वह कोई झगड़ा खड़ा कर देगी। मुझको किसी भी प्रकार बदनाम कर सकती है।"

करुणा इस प्रस्ताव को सुन गम्भीर हो गई और बहुत देर तक चुप बैठी विचार करती रही, दोनों चुपचाप बैठे चाय पीते रहे। एकाएक करुणा ने कहा, "मैं समझती हूं कि आप मेरी मां के पास चलिए। उनकी राय के बिना बात नहीं करूंगी।"

"तो चलो।"

दोनों चाय लेने के पश्चात् करुणा की मां के घर पहुंच गए। विश्वम्भर ने जब अपनी कठिनाई का वर्णन किया तो करुणा की मां ने कह दिया, "तुम्हारी मां ने मुझको बताया है कि उसको तुम दोनों के विवाह से बहुत प्रसन्नता होगी।"

"यह तो मुझको भी समझ आ रहा है। परन्तु मैं तो आज ही विवाह करने की बात कर रहा हूं।"

"आज तो बहुत कठिन है। तीन दिन में प्रबन्ध हो जाएगा। पांच साथियों के और घर के पुरोहित के सामने विधिवत् विवाह होगा। उन पांच साथियों में तुम्हारी मां भी होगी।"

"माता जी! ठीक है परन्तु शर्त यह है कि चुपचाप हो। मैं सोमा को पता होने देना नहीं चाहता।"

"ऐसा भी हो सकता है।"

"परन्तु मेरी मां को पता चला तो पिता जी को भी पता चल जाएगा। बहिनों को पता चलेगा और फिर हल्ला हो जाएगा। वह झगड़ा करेगी और कई प्रकार की बाधाएं पड़ जाएंगी।"

करुणा की मां को इसपर कुछ सन्देह हुआ। इस कारण उसने पूछ लिया, "बेटा, सत्य बताना, तुम्हारा उससे कैसा और कितना सम्बन्ध बन चुका है?"

"मां जी! अपनी सौगन्ध खाकर कहता हूं कि मौखिक कथन से अधिक कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु किसी समय भी अवसर मिला तो वह मुझको परास्त कर देगी। मैं उससे बचना चाहता हूं।"

"परन्तु विवाह के पीछे क्या होगा?"

"मैं करुणा के पीछे अपने को सुरक्षित अनुभव करूंगा।"

करुणा की मां को बात समझ नहीं आई। परन्तु जब करुणा ने कहा, "मां! विवाह में क्या हानि है?"

"देख लो करुणा! मैं बहुत पढ़ी-लिखी नहीं हूं। तुम अपना भला-बुरा विचार कर लो।"

"मां, ठीक है। विवाह कर दो।"

इसके पश्चात् विश्वम्भर ने योजना बना दी, "माता जी! परसों सायं छः बजे से नौ बजे तक विवाह होगा। पीछे भोजन, तदुपरान्त मैं और करुणा पन्द्रह

दिन के लिए बम्बई भ्रमण के लिए चले जाएंगे। तब तक सोमा का झगड़ा शान्त हो जाएगा और हम दिल्ली लौट आएंगे। पीछे आप मेरी माता जी को बता दीजिए। मैं लौटकर सबको एक आलीशान दावत देकर शान्त कर दूंगा।"

करुणा की मां न मानती, परन्तु करुणा कदाचित् अपनी अन्तरात्मा में विश्वम्भर से विवाह के लिए और भी अधिक उत्सुक थी। उसने मां को सांत्वना देते हुए कह दिया, "मां! चिन्ता न करो। सब ठीक हो जाएगा।"

२

इसी दिन विश्वम्भर घर लौटा तो सोमा उसके कमरे में बैठी, उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। उसे आया देख, वह लपककर उससे लिपट जाने वाली थी कि विश्वम्भर ने उसे संकेत कर बताया, "बाहर पिता जी खड़े हैं। वे मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

सोमा रुकी और कहने लगी, "मुझसे यह प्रतीक्षा अब सहन नहीं हो सकती।"

"अच्छा ठहरो। मैं पिता जी से बात कर आता हूं और तुमसे एक योजना बना लेता हूं। यह अंतिम होगी।"

विश्वम्भर ने दफ्तर के कपड़े उतारे। बाजार जाने के कपड़े पहने और बाहर चला गया। वहां पर कुछ काम तो था नहीं। वैसे ही पांच मिनट बैठ, उसने पिता जी को बताया, "मैं सिनेमा देखने जा रहा हूं। तीन बजे के शो के लिए टिकट खरीदे हुए हैं।"

"कितने हैं?"

"दो हैं।"

"कौन-कौन जा रहा है?"

"मैं और सोमा।"

"यह सोमा से तुम्हारे सम्बन्ध बढ़ते जाते हैं!"

"नहीं पिता जी! अब घट रहे हैं।"

काहन हंस पड़ा, "भला कैसे?"

"मुझको करुणा की मां ने कहा है कि मेरा उससे विवाह तब होगा, जब उस लड़की से मेल-जोल छोड़ दूं—इसलिए मैं उसको छोड़ रहा हूं। परन्तु

पिता जी ! ये टिकट तो पांच दिन पहले के लिए हुए हैं। वह जाने के लिए आई भी हुई है।"

"ठीक। कहीं रूप को पता चला कि तुम उसपर कुदृष्टि रखते हो तो वह तो हत्या कर देगा।"

"पर पिता जी ! मैं तो उसको बहिन समझता हूं। साथ ही करुणा की उपेक्षा कर कौन उसे पसन्द करेगा !"

इस प्रकार अपने पिता को शांत कर, वह अपने कमरे में चला गया। अपना पर्स ले, वह सोमा को ले, घर से निकल गया। सिनेमा जाने के स्थान, वह उसको लेकर नई दिल्ली रेल के आफिस में जा पहुंचा और पता करने लगा कि तीसरे दिन बम्बई जाने के लिए किस गाड़ी में जगह मिल सकती है। देहरादून में दो नीचे के बर्थ फर्स्ट क्लास में मिल गए। उसने फार्म भर दिया—'विश्वम्भरनाथ विद फैमिली।'

टिकट खरीदे गए और बर्थ सुरक्षित कर वे लौटे तो सोमा ने पूछ लिया, "इसका क्या मतलब है ?"

"मतलब यह है कि विश्वम्भर अपनी पत्नी के साथ हनीमून के लिए बम्बई जा रहा है। उसने दफ्तर से पन्द्रह दिन की छुट्टी ले ली है।"

"पर विवाह ?"

"वह बम्बई में चलकर ग्रीन होटल में होगा। मैं कल टेलीफोन से वहां एक कमरा सुरक्षित कर रहा हूं।"

"तो मैं तैयारी करूं ?"

"बिलकुल नहीं। किसीको बताना नहीं। मुझको विदित हुआ है कि मेरे माता-पिता भी इस विवाह को पसन्द नहीं करेंगे।"

"तो कैसे होगा यह ?"

"तुम अपनी कोठी में रहना। मैं तुमको रात के नौ बजे लेकर सिनेमा देखने जाऊंगा और हम बम्बई पहुंच जाएंगे।"

"तो कपड़े ?"

"एक सूटकेस तैयार रखना। वे हम चोरी-चोरी निकालकर ले जाएंगे।"

सोमा बहुत प्रसन्न थी।

निश्चित रात सोमा करवटें लेती रही थी। अगले दिन तक भी विश्वम्भर

घर नहीं लौटा था और इसके घर का कोई प्राणी नहीं जानता था कि वह रात कहां रहा है।

इसपर तो सोमा को बहुत ही चिन्ता लगी। वह टेलीफोन कर अपने कमरे में पहुंची और कपड़े पहन मां के कमरे में चली गई। मां के कमरे का दरवाजा खटखटाया तो वह बाहर निकल आई। भूषण भी वहीं था। सोमा ने विश्वम्भर के विषय में बताया तो मां ने पूछ लिया, "तो तुमने टेलीफोन किया है?"

"हां।"

"कार्यालय खुला था?"

"हां मां! प्रबोध वहां बैठा है।"

प्रबोध के वहां होने की बात सुनकर भूषण भी कमरे से निकल आया और कार्यालय को चल पड़ा। सुभद्रा भी उसके पीछे जाना चाहती थी। उसने लड़की से पूछ लिया, "अब क्या करोगी?"

"एक दस रुपये का नोट दे दो। मैं टैक्सी कर उसकी मां से पता पूछने जाना चाहती हूं।"

"मेरे पलंग पर तकिए के नीचे रुपये रखे हैं। उसमें से ले लो।"

यह कह सुभद्रा तो भूषण के पीछे-पीछे कार्यालय की ओर चल दी और सोमा मां के कमरे में गई। उसके तकिये के नीचे कई हजार रुपया रखा था। उसमें से बिना गिने उसने एक बण्डल उठा लिया। उसे अपने पर्स में रखा और कोठी से निकल गई। मेडन होटल के समीप से टैक्सी कर वह विश्वम्भर की मां के घर जा पहुंची। उनकी कोठी में करुणा की मां आई हुई थी। उसने पिछली रात करुणा और विश्वम्भर के विवाह की बात बता उनके बम्बई चले जाने की सूचना दे दी थी। काहन और दुर्गा अभी इस सूचना पर विस्मय ही कर रहे थे कि सोमा वहां जा पहुंची।

ये लोग कोठी के ड्राइंग रूम में बैठे हुए थे कि सोमा दुर्गा को यहां ढूंढ़ती वहां जा पहुंची। उसने आते ही पूछ लिया, "मौसी जी! पता चला?"

"हां, बैठो। विश्वम्भर ने करुणा से विवाह कर लिया है और उसको साथ लेकर हनीमून मनाने बम्बई चला गया है।"

"बहुत बेईमान है।"

"कौन?" काहन ने पूछ लिया।

"आपका लड़का !"

"क्या वेईमानी की है उसने ? "

"उसने तो मुझको बम्बई ले जाने का वचन दिया था।"

"किसलिए ?"

"हनीमून मनाने के लिए।"

"पर तुम्हारा उससे विवाह हो चुका है क्या ?"

"हुआ तो नहीं, पर हम अपना विवाह बम्बई जाकर करने वाले थे।"

"तो अब नहीं हो सका न ?"

सोमा चुप रही परन्तु उसकी आंखें तरल होने लगी थीं। इसपर करुणा की मां ने पूछ लिया, "तुम अपने माता-पिता से पूछकर जा रही थीं ?"

सोमा चुप थी । इसपर करुणा की मां ने बताया, "करुणा का विवाह कल रात दस-बारह घर के आदमियों के बीच बैठकर पुरोहित द्वारा हुआ है।"

"सब बदमाशी है।" आखिर सोमा ने कहा और वह उठ खड़ी हुई।

परन्तु दुर्गा ने उसकी बांह पकड़कर अपने पास बैठा लिया, "देखो सोमा ! विश्वम्भर का तो विवाह हो गया। अब तुम अपनी मां को कहो कि तुम्हारा भी विवाह कर दे।"

"मैं पहले विश्वम्भर से एक बात कर लूं फिर विवाह कर लूंगी।"

"एक क्या बीस बातें करती रहना, परन्तु विश्वम्भर के पिता कह रहे हैं कि विवाह तुरन्त हो जाना चाहिए।"

"कैसे करेंगे ?"

"अभी तुम्हारी मां को टेलीफोन पर बुला रही हूं। तुम यहीं बैठो। बात तुम्हारे सामने ही निश्चय हो जाए तो ठीक है।"

करुणा की मां ने रात विवाह के अवसर पर मिठाई बांटी थी। उसमें से वह एक थाल में सजाकर लाई थी। वह मोटर में ही रखी थी। वह बाहर गई और ड्राइवर से उठवाकर उसे भीतर ले आई।

इस समय तक टेलीफोन पर सुभद्रा आ चुकी थी और कान्हन उसको बता रहा था, "देखो सुभद्रा ! तुमको एक समाचार बता रहा हूं। कदाचित् तुमको इसके जानने में रुचि होगी। मेरे लड़के विश्वम्भर ने रात बिना हमको बताए एक लड़की से विवाह कर लिया है। विवाह विधिवत् हुआ है और लड़की की मां अभी

विश्वम्भर और लड़की के हस्ताक्षरों की एक चिट्ठी लेकर आई है। उस चिट्ठी में उन्होंने लिखा है :

" 'परम पूजनीय पिता जी ! हम दोनों ने रात कई साथियों के सामने पंडित जी से विवाह करवा लिया है। विवाह के पश्चात् ही हम बम्बई हनीमून मनाने जा रहे हैं। हमको पूर्ण विश्वास है कि आपको इस बात से प्रसन्नता होगी।

" 'आपको इसकी सूचना नहीं दी गई। इसमें कारण यह था कि हमको विवाह तुरन्त करना था और आपको सूचना देने से आप हल्ला कर देते और विवाह में विघ्न पड़ सकता था। दादा राजकुमार विवाह पर उपस्थित था।

" 'हम पन्द्रह दिन के पश्चात् उपस्थित होंगे और आपके चरण-स्पर्श कर आपसे आशीर्वाद प्राप्त करेंगे।'

" यह पत्र है और लड़की की मां मिठाई लिए यहां बैठी है।"

"तो फिर मैं क्या करूं ?" सुभद्रा ने पूछ लिया।

"आज रविवार है और तुम सब बच्चों तथा राम तथा बहिन रोहिणी को लेकर यहां आ जाओ। मैं रूपकृष्ण को भी बुला रहा हूं। मैं एक आदमी राजकुमार और उसकी मां को भी बुलाने भेज रहा हूं। तुम सब लोग मध्याह्न का भोजन यहां करना और तब हम विचार करेंगे कि विश्वम्भर के आने पर कैसा और कितना बड़ा जश्न करें।"

"मैं तो नहीं आ रही। प्रबोध के बाबा को यहां बुला देती हूं। आप उनको अपना निमंत्रण दे दीजिएगा।"

"पर तुम क्यों नहीं आ रहीं।"

"बस, नहीं आ रही।"

"सोमा यहां बैठी है। उसके विषय में भी विचार करना है।"

"क्या विचार करना है ?"

"एक लड़का हमने तजवीज़ किया है। उसको तुम्हें दिखाऊंगा।"

"ठहरिए। प्रबोध के बाबा आ रहे हैं।"

"काहन चोगे के मुख पर हाथ रखकर अपनी पत्नी से कहने लगा, 'राम जी टेलीफोन पर आ रहे हैं।'

"परन्तु !" सोमा ने रोष में कह दिया, "आपने मेरे विषय में क्यों कहा

है ?"

"तुम्हारे विवाह के विपय में वात करने के लिए।"

"वात करने से पहले लड़का मुझको दिखाना होगा।"

"दिखा देंगे। तुम उसको पसन्द कर लोगी।"

इस समय राम आ गया। काहन ने चोगे के मुख से हाथ उठाकर कहा, "हेलो ! चाचा जी ! हां। वात यह है कि कल रात विश्वम्भर ने विवाह कर लिया है। उसके विषय में कुछ विचार करना है। आप यहां मध्याह्न का भोजन लेने आ जाइए।"

"कहां है विश्वम्भर ?"

"वम्वई चला गया है।"

"वहुत चतुर निकला !"

"जी ! मैंने कहा था न कि उसने स्वयं ही पढ़ाई की है। नौकरी ढूंढ़ी है और तरक्की कर रहा है। अव उसने विवाह भी हमको वताए विना कर लिया है।"

"अच्छा भाई, मेरी वधाई स्वीकार करो।"

"आप आ जाइए। कुछ वेटी सोमा के लिए भी विचार करना है।"

"कहां है वह ?"

"यहां वैठी है। उसकी मां को भी लेते आइए।"

"यह सामने वैठी है। क्यों सुभद्रा, चलोगी काहन के घर ?"

"काहन जी सोमा के विवाह के विपय में कह रहे हैं। इससे चलना ही होगा।"

"तो ठीक है। हम आएंगे। प्रवोव भी आएगा।"

"आने दो। रूप को तथा राजकुमार को भी वुला रहा हूं। हमारे घर वालों में से वह ही विवाह पर उपस्थित था।"

विश्वम्भर के छोटे भाई को मोटर से रूप और राजेश्वरी के घर भेज दिया। रूप आया तो साथ सुन्दरी भी आ गई। इस प्रकार एक विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों का समारोह हो गया।

भूपण को किसीने वुलाया नहीं और अपने-आप वह आया नहीं। परिवार के अन्य सदस्यों निरञ्जनदेव इत्यादि को भी नहीं वुलाया गया।

काहन के छहों वच्चों, रूप, सुन्दरी, राम और रोहिणी, सुभद्रा, सोमा, दिति तथा प्रवोव, राजकुमार, राजेश्वरी और राजकुमार की पत्नी सन्तोप सव

उपस्थित थे। भोजन हुआ और फिर सब बड़े बैठ गए। बच्चों को छुट्टी दे दी गई। वे भीतर के कमरों में जा खेलने लगे।

बात काहन ने आरम्भ की। उसने करुणा का परिचय दिया और बताया कि उसकी मां प्रातः विश्वम्भर और करुणा का पत्र लेकर आई थी। उसने वह पत्र पढ़कर सुना दिया। इसके साथ उसने बताया, "सोमारानी ने जब यह पत्र सुना तो बोली कि विश्वम्भर बहुत बड़ा बेईमान है। उसने तो इसके साथ भाग जाने का वचन दिया हुआ था। साथ ही यह रो रही थी। मैंने इसको कहा है कि यदि यह पसन्द करे तो इसका विवाह कर दिया जाए। यह तैयार है यदि लड़का इसको पसन्द हो तो ?"

सुभद्रा ने सोमा से पूछ लिया, "क्यों सोमा, क्या चाहती हो ?"

"विवाह तो मैं करूंगी ही। मेरे आंसू इस कारण निकल पड़े थे कि मैंने विश्वम्भर को विवाह के लिए बहुत यत्न से राज़ी किया था, परन्तु वह बेईमान निकला। बातें मुझसे करता रहा और विवाह का प्रबन्ध करुणा की मां से करता रहा।"

"पर सोमा !" राजकुमार ने पूछ लिया, "तुम तो विश्वम्भर की बहिन लगती हो। इस घर में बच्चे भी जानते हैं कि तुम उसकी बहिन हो। फिर तुमने विवाह के लिए यत्न ही क्यों किया ?"

"आज संसार में कोई भी व्यक्ति नहीं जो इस प्रकार की व्यर्थ की बातों को माने। एक मां के पेट से पैदा हुए ही भाई-बहिन लगते हैं।"

"देखो सोमा !" राजकुमार ने कह दिया, "विवाह की रस्म किसलिए बनाई जाती है, जानती हो ?"

"यह भी व्यर्थ है। यह उन औरतों की रक्षा के लिए बनाई गई है जो स्वयं कुछ भी कमाई नहीं कर सकतीं।"

"और तुम बहुत बड़ा वेतन पाने की क्षमता रखती हो ?"

"मुझको नौकरी की आवश्यकता नहीं। यह निर्धन माता-पिता की लड़कियों को करनी पड़ती है। मुझको समाज के कानून के संरक्षण की आवश्यकता नहीं। मेरा संरक्षण मेरा धन करेगा।"

"क्यों चाची !" राजकुमार ने सुभद्रा से पूछ लिया, "कितना कुछ सोमा को देने वाली हो ?"

"प्रबोध पूर्ण सम्पत्ति के बंटवारे के लिए कह रहा है। मोटे तौर पर छः से दस लाख इसके हिस्से का बनेगा।"

"तब ठीक है।" काहन ने कह दिया, "मेरी मौसी का लड़का है। नाम सन्तराम है। वह इससे विवाह कर लेगा। क्यों सोमारानी! बुलाऊं उसको ?"

"सन्तराम पर तो मैं थूकूंगी भी नहीं।"

"ओह! क्या खराबी देखी है तुमने उसमें ?" काहन का प्रश्न था।

"वह दुकानदार है। पढ़ा-लिखा नहीं। सूरत-शक्ल भी मामूली है।"

"और तुम कितनी पढ़ी हो ?"

"मेरे पास रुपया है, उसके पास क्या है ?"

बात राम ने समाप्त कर दी। उसने कहा, "काहन भैया! इस लड़की से बात करनी व्यर्थ है। इसके सिर पर रुपया सवार है। उसके बल पर यह भी देवी भवानी बन किसीके सिर पर चढ़ेगी।"

सोमा नाराज़ हो, उठकर जाने लगी तो सुभद्रा ने उसकी बांह पकड़ ली। उसने कहा, "बैठो।"

सोमा बैठी तो सुभद्रा ने कहा, "पर्स में से रुपया निकालो, जो मेरे तकिये के नीचे से उठा लाई हो।"

"पर मां तुमने स्वयं ही तो कहा था। ले लो।"

"दस रुपये लेने को कहा था, न कि पांच सौ रुपये।"

प्रबोध हंस पड़ा। हंसकर बोला, "मौसा जी! यदि मां की सम्पत्ति में से इसे कुछ न मिला तो फिर यह सन्तराम को भी स्वीकार कर लेगी।"

सब हंसने लगे।

अब रूप बोला, "आज तो प्रबोध ने भारी अकल की बात की है। प्रबोध! कहां से सीखकर आए हो ?"

"बड़ी मां ने बताया है कि मेरी मां का दिमाग भी रुपये ने खराब कर रखा है।"

सुभद्रा ने क्रोध से पूछ लिया, "और तुम्हारे धन ने तुम्हारे मस्तिष्क को खराब क्यों नहीं किया ?"

३

प्रबोध ने हठ किया और राम ने मध्यस्थ बन सुभद्रा की सम्पत्ति का बंटवारा कर दिया। उसने सात भाग किए। उनमें दो भाग सुभद्रा के, दो भाग प्रबोध के, एक-एक भाग अन्य तीन बच्चों का।

"प्रबोध के दो भाग क्यों किए हैं ?"

"वह काम करता था। इस कारण।"

"और लड़कियों का एक-एक भाग क्यों ?"

"वे घर में काम नहीं करतीं।"

"मेरे दो भाग किसलिए हैं ?"

"तुम भी काम करती हो। तुम्हारे भूषण जी भी काम करते हैं।"

"और भूषण जी का भाग क्यों नहीं ?"

"इसलिए कि वह घर का प्राणी नहीं है।"

"हमको यह फैसला मान्य नहीं।"

"तो न मानो।" इतना कह राम जाने लगा तो सुभद्रा ने कहा, "भाषा ! ठहरो ! मैं यह कह रही हूं कि कमल इत्यादि, जिनको तुमने एक-एक भाग दिया है, वे मानेंगे नहीं।"

"वे मान गए हैं।"

"सोमा भी ?"

"हां।"

विवश सुभद्रा को मानना पड़ा। जो ठेके के काम चल रहे थे वे दो भागों में बांट दिए गए। शेष सम्पत्ति, स्थान और नगदी तीन भागों में बांट दी गई। सोमा इत्यादि को साढ़े सात-सात लाख मिल गया।

नकद कम्पनियों के हिस्सों में और दिल्ली में मकानों के रूप में साढ़े सात लाख रुपया सोमा को मिला तो वह स्कूल जाने का बहाना भी छोड़ बैठी। इस समय सुभद्रा और भूषण कोठी छोड़, एक पृथक् बंगला ले उसमें रहने लगे थे। प्रबोध, सोमारानी और दिति अभी भी अपने बाबा रामकुमार के पास रहते थे। रोहिणी सोमा के लिए पति की खोज कर रही थी। कई लड़के मिल रहे थे, परन्तु अभी निर्वाचन नहीं किया गया था कि एक दिन सोमा एक युवक को साथ लिए

हुए अपने बाबा के पास पहुंची और कहने लगी, "भापा ! ये हैं रुद्रमणी। ये वाराणसी के रहने वाले हैं और मुझको विवाह के लिए कह रहे हैं।"

राम भौचक्का हो मुख देखता रह गया। इसपर उस युवक ने पूछ लिया, "बाबा, क्या देख रहे हैं मेरे मुख पर ?"

"यह देख रहा हूं कि तुम किसके पुत्र हो।"

"और यह मेरे मुख पर लिखा है ?"

"उसका नाम-धाम तो नहीं, परन्तु उसका व्यवसाय और स्वभाव तो लिखा ही हुआ है।"

"सत्य ?"

"हां।"

"तो बताओ, क्या लिखा हुआ पढ़ा है आपने ?"

"कुछ उल्लेखनीय नहीं है। मैंने तुमको देख लिया है। अब तुम जा सकते हो। कल यहां आकर तुम इसी लड़की से पूछ जाना कि तुम्हारा इससे विवाह होगा अथवा नहीं।"

"बाबा, विवाह तो होगा। अपनी इच्छा से कर दो अथवा मैं इसका अपहरण करूंगा।"

"तो फिर यहां किसलिए आए हो ? जो इच्छा है कर लो।"

"चलो सोमा !" रुद्रमणी ने कहा, "चलो, चलो।"

"मैं अपने वस्त्र तो ले लूं।"

"क्या करोगी लेकर। बनारस में बहुत सस्ते मिल जाएंगे।"

"अच्छा भापा ! नमस्कार।" इतना कह सोमा कमरे से और फिर कोठी से निकल गई। राम नहीं समझ सका कि क्या करे। उसको विचार आया कि रूपकृष्ण को सूचना तो दे दो। उसने टेलीफोन कर दिया। रूप को जब राम ने पूर्ण बात बताई तो रूप ने कह दिया, "पिता जी ! चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। रुपये के लोभ में ऐसे ही व्यक्ति विवाह के लिए आएंगे। भापा ! चिन्ता न करो। इस लड़की से यही कुछ आशा की जा सकती है।"

"हां, वह बालिग है। इस कारण मैं उसको रोक नहीं सका।"

"ठीक है भापा। यह तो आरम्भ ही है। अभी और आगे-आगे देखेंगे।"

राजकुमार की विश्वम्भरदयाल से मित्रता थी। दोनों सरकार के विदेश

मंत्रालय में काम करते थे और दोनों के स्वभाव भी बहुत सीमा तक मिलते थे। राजकुमार ने विश्वम्भर की, नौकरी पाने में, बहुत सहायता भी की थी।

जब विश्वम्भर सोमा के साथ फिर-घूम रहा था तो उसने अपने मन की अवस्था राजकुमार से वर्णन की थी। उसको सुन राजकुमार ने उसको कहा था कि वह उससे सम्बन्ध त्याग दे।

"भैया। मैं यह समझता हूं कि इस लड़की से विवाह शुभ नहीं होगा, परन्तु जब वह सामने आती है तो मैं उसको मना नहीं कर सकता अतः मैं मन में यह धारणा बनाता रहा हूं कि वह मेरी बहिन है और बहिन-भाई में विवाह धर्मानुकूल नहीं।

"मैं कभी उसको भी कहता हूं, परन्तु वह तो धर्म का नाम सुन मेरी हंसी उड़ाने लगती है। वह पूछती है, 'वह क्या होता है?'

"मैं उसको समझाने का यत्न करता हूं कि समाज ने यह व्यवस्था दे रखी है कि हम बहिन-भाई में विवाह नहीं हो सकता।

"'समाज तो मूर्खों का है। इसी कारण तो अब यह काम राजनियम के अधीन चला गया है।' सोमा कहती रहती है।

"मैं बहुत समझाता हूं परन्तु वह मानती नहीं।"

"तुम उसको दुत्कार क्यों नहीं देते?"

"बताया तो है। कुछ ऐसी बात होती है कि मैं उसकी युक्तियों का उत्तर नहीं दे सकता।"

राजकुमार तो यह समझ बैठा था कि विश्वम्भर और सोमारानी में विवाह होगा। कदाचित् उनका सम्बन्ध बन चुका है। इससे वह अपने-आप उससे इस विषय में कभी बात नहीं करता था। उसके मन में यह बात बैठ गई थी कि वह परास्त हो जाता है और उसके मन का नियंत्रण उसकी इन्द्रियों पर नहीं रहता।

परन्तु राजकुमार के विस्मय का ठिकाना न रहा, जब एक दिन मध्याह्नोत्तर चार बजे वह उसके पास आया और कहने लगा, "राज भैया! मेरे विवाह पर चलोगे?"

"सोमा के साथ? नहीं। मैं नहीं जाऊंगा।"

"नहीं भापा! एक अन्य लड़की है।"

"कोई सोमा की बहिन है?"

"नहीं। एक तो वह सोमा से बहुत अधिक सुन्दर है। दूसरे बी० ए० में पढ़ती है। तीसरे माता जी द्वारा निर्वाचित हुई है।"

"और पिता जी ?"

"वे मेरे कामों में कभी रुचि नहीं लेते।"

"कब कर रहे हो ?"

"आज रात के सात बजे।"

"बिना तैयारी के ?"

"चोरी-चोरी कर रहा हूं। लड़की की मां के घर में और उसके दो-चार सम्बन्धियों के सम्मुख। अपनी ओर से केवल तुमको ही ले चलना चाहता हूं।"

"पर यह क्यों ?"

"सोमा और सुभद्रा चाची से डरता हूं कि किसी प्रकार का विघ्न डाल देंगे। विवाह के तुरन्त पीछे हम, पति-पत्नी, हनीमून के लिए बम्बई चले जाएंगे और अपने माता-पिता को एक पत्र लिख देंगे।"

"मुझको इस चोरी-चोरी में कुछ तथ्य प्रतीत नहीं हुआ।"

"भैया ! तुम सोमा को नहीं जानते। वह एक भयंकर जीव है। वैसे तो अपनी मां से कहता तो वे भी यही पसन्द करतीं, परन्तु वे बिना पिता जी को बताए नहीं रह सकतीं। पिता जी दूसरे बहिन-भाइयों को बताते। साथ उनकी राम भापा से गहरी छनती है। वे उनको बताए बिना नहीं रहते। बस, हल्ला हो जाता। सोमा विवाह-वेदी पर जा बैठती और सत्याग्रह आरम्भ कर देती। मेरा मन डरता है कि भारी विघ्न पड़ जाता।"

राजकुमार मान गया। विश्वम्भर उसको करुणा की मां के घर ले गया। विवाह हुआ और राजकुमार उनको विदा करने रेल के स्टेशन पर गया। वह रात को साढ़े दस बजे अपने घर पहुंचा और उसने अपनी मां और पत्नी को विवाह की बात बताई तो वे भी विस्मय करने लगीं।

राजकुमार का कहना था, "मां, इस सबमें विस्मय का कोई कारण नहीं। यह आज का युग-धर्म है।"

"क्या युग-धर्म है राज ?"

"युग-धर्म यह है कि मानव पशुओं का सा व्यवहार करने लगा है। मां ! विश्वम्भर अभी तो पशुपन के मार्ग पर ही है। वह पूर्ण रूप में उस सीमा

तक नहीं पहुंचा ; परन्तु इस नगर में और हैं जो बिलकुल पशु का सा ही व्यवहार रखते हैं और उसको सर्वथा स्वाभाविक बात मानते हैं।"

"नगर की बात क्या कहते हो। घर में भी ऐसे हैं। सुभद्रा है। रूप है। निरंजन है। और किस-किसका नाम बताऊं।"

"हां! कभी इनका व्यवहार देख तो अपनी मीमांसा पर सन्देह होने लगता है। मैं कभी ऐसा अनुभव करता हूं कि मैं एक विशाल सागर में अकेला जीवन-मरण के संघर्ष में लीन, तैर रहा हूं और मुझको किनारा दिखाई नहीं देता।"

मां हंस पड़ी। हंसते हुए बोली, "तुम अकेले हो सकते हो परन्तु किनारा तो पा चुके हो। तुम्हारी पत्नी है। बच्चा है; फिर मैं भी हूं।"

"तो मां, तुम किनारा हो क्या? तुम औरतों को इस अकेली तरणी में ही तो हूं। 'मैं अकेला हूं' ये मेरा अभिप्राय अपने इस छोटे-से घर से ही था।"

"बेटा! परिवार ही किनारा है। यह ही इस भवसागर में निर्बल मानव का आश्रय है। जो इसपर लग गया, वह अपने जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करने के मार्ग पर चल सकता है। यह ठीक है कि यह हमारी यात्रा का अन्त नहीं, परन्तु यह भी ठीक है कि यह दृढ़ भूमि है, जिसपर हम मार्ग पर निर्भय होकर चल सकते हैं।"

राजकुमार मां के इस कथन में बहुत सच्चाई पाता था। राजेश्वरी युद्ध काल तक अपने पति की मौसी गौरी की संगत में रही थी। वे वे दिन थे, जब उसका पति भूषण घर छोड़ सुमित्रा के साथ भाग गया था और वह निराश हो रही थी। गौरी ने उसको मार्ग दिखाया था, और वह उस मार्ग का अनुसरण करती हुई एक ऐसे मार्ग पर चल पड़ी थी, जो दिल्ली के संसार से विलक्षण था। गौरी ने उसको बताया, "भूषण तो उस मिथ्या शिक्षा का शिकार हो रहा है, जो स्कूलों एवं कालेजों में दी जा रही है।"

"तो सब के सब पढ़े-लिखे लोग नास्तिक, अनाचारी और क्रूर हो जाते हैं?"

"नहीं, यह बात नहीं। शिक्षा एक शक्ति है जो मनुष्य को एक दिशा में ले जाने वाली है। वर्तमान शिक्षा-पद्धति जड़वाद के आश्रय चलती है। यह इसके ग्रहण करने वालों को जड़ बनाती रहती है, परन्तु कुछ विद्यार्थी ऐसे भी होते हैं, जो घर पर अथवा मित्रों की संगत में इस शिक्षा के विपरीत दिशा में धकेले जा रहे होते

हैं। वे शिक्षा के उलटे प्रभाव से कुछ सीमा तक बचते रहते हैं। दुर्भाग्य से भूषण को घर पर अथवा मित्रों में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो उसपर हो रहे कुशिक्षा के प्रभाव को कम कर सकता।"

इस वार्ता के परिणामस्वरूप ही राजेश्वरी ने राजकुमार को स्कूल से उठाकर संस्कृत पढ़ने पर लगा दिया था। एक समय तो राम, रोहिणी इत्यादि भी उसके ऐसा करने को मूर्खता मानते थे, परन्तु जब वह स्वतन्त्र रूप से कार्य करता हुआ तीन सौ रुपया मासिक घर लाने लगा तो सबका संशय निवारण हो गया और उसके साथ परिवार के सदस्य प्रायः सहृदयता का भाव रखने लगे थे। भूषण को छोड़-कर प्रायः लोग इसको सुलझे हुए मस्तिष्क का स्वामी मानते थे।

यही कारण था कि विश्वम्भर को पूर्ण परिवार में वही एक व्यक्ति मिला, जिसको वह अपना विश्वासपात्र समझे।

विश्वम्भर के विवाह के अगले दिन मां ने पूछ लिया, "राज, विश्वम्भर की मां को तो बताना चाहिए कि वह कहां है?"

"करुणा की मां ने वचन दिया कि वह बहुत प्रातःकाल काहन भापा के घर जाकर बता आएगी। मैं समझता हूं कि अब तक उनको सूचना मिल चुकी होगी।"

राजकुमार का अनुमान ठीक निकला। विश्वम्भर का भाई मोहन अपने पिता की मोटर में आया और राजकुमार को पिता का निमन्त्रण दे गया। राजेश्वरी ने उससे पूछ लिया, "क्या बात है, मोहन?"

"सुना है, भैया का विवाह हो गया है। उसके सम्बन्ध में ही पिता जी ने राज दादा को और रूप भापा को बुलाया है?"

"और किसको बुलाया है?"

"भापा राम और मौसी जी को।"

"और हमको नहीं बुलाया?"

"मां कहती थी कि भैया बम्बई से लौट आए तो आप सबको बुलाएंगे।"

राजकुमार काहन के घर से लौटा तो उसने अपनी पत्नी और मां को बताया कि विश्वम्भर के लौटने पर दो बड़े भोज दिए जाएंगे। एक पारिवारिक भोज होगा। वह तो कोठी में होगा। दूसरे में काहन के अपने साथी, विश्वम्भर के मित्र और कार्यालय के लोग आमन्त्रित होंगे। यह भोज बैंगर में दिया जाएगा। मुझको

इन भोजों का (खाने में देने वाली वस्तुओं) का निश्चय करने का प्रबन्ध दिया गया है।"

विश्वम्भर लौटा तो ये दोनों दावतें हुईं। राम के कहने पर परिवार के सब सदस्य बुलाए गए। शिवकुमार के लड़के निरंजन का परिवार था, बाल-बच्चों को मिलाकर तीस प्राणी थे। शिवकुमार की लड़कियां राधा और अनुराधा का परिवार था। वे भी तीस प्राणी के लगभग थे। इसी प्रकार रामकुमार के दूसरे भाई-बहिनों का परिवार था। सब मिल-मिलाकर दो सौ से ऊपर प्राणी इस भोज में सम्मिलित थे।

खूब खाना-पीना हुआ। इस भोज में सुभद्रा, भूषण और सोमारानी उपस्थित नहीं थे। राम से सोमा के विषय में काहन ने पूछा, "भापा, तुम्हारी पोती सोमा-रानी नहीं आई?"

"उसने आना स्वीकार नहीं किया। कहती थी कि वह आएगी तो कन्यादेवी का जूड़ा मरोड़े बिना नहीं रहेगी।"

"तो उसका रोष अभी ठण्डा नहीं हुआ?"

"वह कुछ बढ़ा ही है।"

"तो ठीक है, वह नहीं आई और सुभद्रा और भूषण?"

"मैंने उनको निमंत्रण-पत्र भेजा था। उन्होंने कोई उत्तर नहीं भेजा। काहन, वे नहीं आए तो कुछ हानि नहीं हुई। इस भरे-पूरे परिवार में तुम समझ लो कि वे अब हमारे संसार में नहीं हैं।"

निरंजन समीप बैठा था। उसने राम को परिवार पर गर्व करते देख, पूछ लिया, "भापा! रूप की ज़मानत का, जो उसने दाताराम के लिए दी थी, क्या हुआ है?"

"होना क्या था? दाताराम समय पर कचहरी में उपस्थित नहीं हो सका और उसकी बीस हज़ार की ज़मानत ज़ब्त हो गई है।"

"है न परिवार की हिमायत करने का मज़ा?"

"इस मज़े की बात तो तुम इन भापा से पूछ लो। मैं तुमको एक बात तुम्हारे पिता शिव दादा की बताता हूं। बड़े लाला की सम्पत्ति साठ लाख के लगभग थी और शिव के मन में पूर्ण सम्पत्ति को हड़प करने का विचार उत्पन्न हो गया। उसने पांच हज़ार खर्च कर लाला जी का झूठा इच्छापत्र तैयार कराया। [illegible]

बहनोई गोवर्धनलाल ने घर के मुख्य व्यक्तियों को सामने बैठाकर कह दिया, 'भैया ! गौ की सौगन्ध खाकर कह दो कि यह इच्छापत्र ठीक है और सब मान जाएंगे।'

"जानते हो, तुम्हारे पिता ने क्या किया था ? उसने मां के चरण-स्पर्श कर कह दिया था, 'मैं गाय की कसम तो नहीं खा सकता। दूसरा इच्छापत्र ठीक है।' इस प्रकार धर्म की बात में आकर साठ लाख रुपया दे डाला था। यह तो बीस हज़ार ही है।"

"भापा ! मुझको सब स्मरण है। मैं उस समय सज्ञान था। मां ने पिता को बहुत डांटा था और वे मां की बात का उत्तर नहीं दे सके थे।"

"और बरखुरदार, तुम तो मां के कहे अनुसार व्यापार करते हो न ?"

निरंजन इस प्रश्न का अर्थ नहीं समझ सका। राम ने अपने प्रश्न की व्याख्या स्वयं ही कर दी। उसने कहा, "जहां इस दुकान पर धन की अनायास वर्षा होती थी,वहां अब तुम बैठकर मक्खियां उड़ाया करते हो।"

"भापा ! यह पिता जी की करनी का ही फल है।"

"और तुम्हारी करनी का फल है कि तुम सत्यनारायण के मन्दिर को भी बेचकर खा गए हो।"

"वह तो भापा, पंजाब से आए शरणार्थियों ने तोड़-फोड़ दिया है। उनपर दया कर उनको रहने की जगह दी थी और वे मन्दिर का सब कुछ लूट-पाटकर चल दिए।"

राम हंस पड़ा। इस समय रूप उसको हंसते देख, चला आया।

राम ने निरंजन के सामने ही रूप से पूछ लिया, "वह दाताराम का क्या हुआ ?"

रूप ने बताया, "वह भूमिगत है।"

"क्या मतलब ?"

"वह कानून की पहुंच से छुपा हुआ है। उसने कहा है कि वह अपने दिवाले का कारण जान गया है और उसने चोर को पकड़ने के लिए कुछ दिन के लिए आंखों से ओझल हो जाने का विचार किया है। उसने एक पत्र सबजज को लिखा है। वह पत्र मुकदमे की 'फाइल' पर है परन्तु उसने मेरे बीस हज़ार ज़मानत की रकम को ज़ब्त कर लिया है और दिवाला मंजूर कर लिया है।"

इसपर निरंजन ने पूछ लिया, "भैया ! तुमको विश्वास है कि वह तुम्हारा

बीस हज़ार वापस करेगा ?"

"मैं कुछ नहीं कह सकता। वैसे वह लापता होने से पहले मुझको मिला था और मुझको बताकर छुपा है।"

निरंजन हंस पड़ा, "मालूम नहीं तुम लोग लाखों का व्यापार कैसे करते हो ? तुम चोर और साधु में पहचान नहीं रखते।"

रूप ने कहा, "भैया निरंजन ! रुपया हाथ का मैल है और वह तो फिर आ जाएगा; परन्तु एक सम्बन्धी सौगन्ध खाकर विश्वास दिलाए तो मैं उसको झूठा नहीं कह सकता।"

बात राम ने समाप्त कर दी। उसने कहा, "रूप ! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं। परमात्मा तुम्हारी कमाई में बरकत डालेगा।"

४

एक दिन विश्वम्भर के बम्बई से लौटने के पश्चात् सोमारानी विश्वम्भर और करुणा से मिली। दोनों वोल्गा रेस्टरां में चाय ले रहे थे। सोमारानी एक युवक के साथ वहां पहुंची और विश्वम्भर को अपनी पत्नी के साथ बैठा देख, वहां जा पहुंची।

"क्यों जी !" उसने पूछ लिया, "क्या मैं आपके साथ चाय लेने का सौभाग्य प्राप्त कर सकती हूं ?"

"हां ! क्यों नहीं ?" विश्वम्भर ने उसे देखा, पहचाना और बैठने को कह दिया। सोमारानी ने अपने साथी को भी वहीं बैठने को कह दिया और उसका परिचय करा दिया, "विश्वम्भर जी ! ये हैं रुद्रमणी। वाराणसी के रहने वाले हैं। ये मुझसे विवाह का प्रस्ताव कर रहे हैं। मैं आज इनको भापा जी के पास ले जाने वाली हूं।"

"ओह !" विश्वम्भर ने हाथ जोड़कर नमस्कार कर दिया। पश्चात् पूछने लगा, "वहां आप क्या काम करते हैं ?"

"पिता जी की बहुत सम्पत्ति है। उस सम्पत्ति का प्रबन्ध करता हूं।"

"पिता जी का क्या नाम है ?"

"गोपालशंकर। पहले ज़री माल के बनवाने की कोठियां थीं। अब तो उनका

देहांत हो गया है। चार हज़ार प्रतिमास की आय है और मैं उनका एक ही लड़का हूं।"

बैरा चाय लगा रहा था कि राजकुमार और उसकी पत्नी आ गए। विश्वम्भर ने रुद्रमणी का उससे परिचय करा दिया और बता दिया, "सोमा बहिन से इनकी सगाई होने वाली है।"

"कब ?"

उत्तर सोमा ने दिया, "मैं आज ही भापा जी से इनका परिचय कराने जा रही हूं।"

"परन्तु बड़ी मां तो हमारी माता जी के साथ तुम्हारे लिए एक लड़का देखने गई थी। बड़ी मां कह रही थी कि लड़का पसन्द कर आई है। दो-चार दिन में सगाई हो जाएगी।"

"भापा जी से बात कर लूंगी। बड़ी मां पूछती तो है नहीं और अपने-आप ही घूमती-फिरती है।"

चाय समाप्त हुई तो सोमारानी और रुद्रमणी उठ, नमस्कार कर, चल दिए। राजकुमार और विश्वम्भर अपनी पत्नियों के साथ बैठे रहे। विश्वम्भर ने कह दिया, "मुझको तो यह कोई बनारसी ठग प्रतीत होता है।"

"भापा इस सम्बन्ध को कभी नहीं मानेंगे।"

"बात यह है कि इसको परिवार की सम्पत्ति में साढ़े सात लाख मिला है। यदि यह उस रुपये को सावधानी से रखेगी तो यह ठग भी उसके अधीन हो जाएगा।"

"वह ठग ही क्या हुआ जो दूसरे की जेब से बिना उंगली डाले रुपया न निकाल ले।"

"देखें अब क्या तमाशा होता है।"

उसी सायंकाल राजकुमार रूप के पास बैठा था, जब भापा रामकुमार का टेलीफोन आया। टेलीफोन सुनने के पश्चात् रूपकृष्ण ने राजकुमार को बताया, "सोमा किसी बनारस के युवक के साथ भाग गई है।"

"ओह ! मैंने उसको देखा है। वोल्गा में सोमा बहिन उसी युवक के साथ चाय लेने आई थी। विश्वम्भर ने उसे अपनी मेज़ पर ही बैठा लिया। सोमा ने अपने साथी का परिचय कराया। हम दोनों का विचार था कि वह कोई ठग है।"

"मैंने सुभद्रा के परिवार में रुचि लेनी छोड़ दी है।"

"परन्तु चाचा जी ! हैं तो वे अपने ही ?"

" हां। इसमें सन्देह नहीं, परन्तु इस धनी बाप की बेटी ने अभिमान में सब कुछ चौपट कर दिया है।

" देखो राज ! मैंने तुमको एक बात बताने के लिए बुलाया है। मैं विश्वम्भर के विवाह के उपलक्ष्य में दी गई दावत में उपस्थित था। वहां निरंजन ने दाताराम की ज़मानत देने पर मेरी हंसी उड़ाई थी। उसका उत्तर तो मैंने दे दिया परन्तु भापा ने एक बात मुझको कही थी। बड़े लाला जी की सुख-समृद्धि उनके धर्म-कर्म के कारण थी। शिव दादा भी फलता-फूलता रहा, जब तक उसके मन में कमाई धमार्थ व्यय करने की रुचि रही। उसके विपरीत निरंजन की हालत बहुत पतली है। यह इस कारण है कि वह बेईमान है और सहानुभूति-शून्य है।

" मैं घर आकर अपनी सम्पति की बात पर विचार कर रहा हूं। मैं जीवन के आरम्भ में जुआरी था। फिर व्यापारी बन गया और अन्त में ठेकेदार बन गया। बहुत रुपया कमाया है, परन्तु धर्म के लिए व्यय करने की रुचि नहीं रही। मैं देख रहा हूं कि मेरी आधी कमाई तो सुभद्रा और उसके बच्चों ने खराब कर दी है। आधी पर भी भारी आय हो रही है। इससे मेरे मन में विचार आया है कि इसमें से कुछ धर्म-कर्म करना चाहिए।

" जब मैं जुआ खेलता था तो एक बूआ गौरी थी। वह परिवार-भर में धर्म-कर्म पर व्यवस्था दिया करती थी। अब तुम संस्कृत और शास्त्र पढ़े हो। इस कारण तुमको बुलाया है कि मुझको राय दो कि मैं क्या करूं जिससे मेरी कमाई भले काम में लग सके ?"

"परन्तु चाचा जी ! सुन्दरी ने पूछ लिया है ?"

रूप हंस पड़ा। हंसकर पूछने लगा, "तुमने मुझको औरतों की राय से काम करते कब देखा है ?"

"जब आप गौरी मौसी के कहने से जुआ खेलना छोड़ बैठे थे।"

"वह तो ऐसे ढंग से बात करती थी कि बड़े-बड़े पढ़े-लिखों के भी कान कतर लेती थी।"

"परन्तु चाचा जी ! बीस वर्ष से ऊपर तक तो सुभद्रा चाची आपका सम्मान करती रही है।"

"हां ! वह मेरे जीवन में एक काले बादल की भांति छाई रही है। परन्तु राज! वह अवस्था निकल गई है। यह सुन्दरी ने ही सुझाव दिया है कि मैं तुमसे राय करूं। वह इसमें पूर्णरूप से सहमत है। वह तो यह भी कहती है कि मैं अब काम-धन्धा छोड़, कहीं पहाड़ पर जाकर रहना आरम्भ कर दूं। अपने निर्वाह के लिए थोड़ी-सी आय रख लूं और शेष छोड़कर चल दूं।"

"और चाची है कहां?"

"कुछ खरीदने बाज़ार गई है।"

"कितना रुपया है आपके पास?"

रूप ने अपनी अलमारी से एक 'फाइल' निकाल ली और उसको राजकुमार के सामने रख, खोल बताने लगा, "इस समय केवल एक ठेके का काम चल रहा है। वह भी समाप्त होने वाला है। उसमें अभी लगभग दस हज़ार और खर्च होगा और उसका बकाया 'बिल' सवा लाख सरकार से लेना बनता है। उसपर टैक्स इत्यादि देने हैं। सब कुछ दे-दिलवाकर प्रथम जनवरी को पचपन लाख की सम्पत्ति है। इसमें से पांच लाख मैं भापा जी और अपने निर्वाह के लिए रखकर शेष सब दान-दक्षिणा में देना चाहता हूं।"

"देखो चाचा जी ! विद्या-दान से श्रेष्ठ कोई दान नहीं, परन्तु ये स्कूल, कालिज जो सरकारी और नीम-सरकारी संस्थाएं खुल रही हैं, यह विद्या नहीं, अविद्या का दान कर रही हैं।

"मैं तो यह समझता हूं कि यदि कोई ऐसी शिक्षण-संस्था हो, जो सरकारी पाठ-विधि के अतिरिक्त शिक्षा दे तो उसमें कोई पढ़ने वाला नहीं आएगा। इससे मैं एक विद्यादान का दूसरा ढंग चलाने के लिए कहता हूं।

"नई दिल्ली में कोई बड़ा पुस्तकालय नहीं है। मैं समझता हूं कि यदि आप अपने धन से कोई पुस्तकालय और विद्याकेन्द्र, जिसमें व्याख्यान इत्यादि हो सकें, खोल सको तो बहुत कल्याण का कार्य होगा।"

"तो तुम एक योजना बनाओ और स्वयं इसमें कार्य करो तो मैं सब धन बटोरकर तुमको दे सकता हूं।"

"तो चाचा जी ! एक ट्रस्ट (न्यास) बना दो।"

"लिखत-पढ़त व्यर्थ है। तुम सोल ट्रस्टी बन जाओ और अपने पीछे ट्रस्टी नियुक्त करने की प्रथा बना जाओ। बरा मैं यही चाहता हूं।"

"इसपर भी चाचा जी, कुछ तो लिखत-पढ़त हो जानी चाहिए।"

"वह हो जाएगी।"

"तो मैं योजना बनाता हूं। परन्तु स्थान ?"

"देखो। यह मकान मेरा है। साथ वाला मकान भी मेरा है। इन दोनों को मिलाकर कुछ बना लो।"

"कितनी जगह है यह ?"

"दोनों मकान मिलाकर ग्यारह सौ गज़ स्थान है।"

"बहुत कम है।"

"दो मकान और मोल लिए जा सकते हैं।"

"तब कुछ काम बन सकता है।"

"यत्न करूंगा।"

अभी बात समाप्त नहीं हुई थी कि सुन्दरी आ गई। उसको रूप ने बता दिया, "राज ने एक योजना बनाई है और उसने उसका प्रबन्ध करने का भी वचन दिया है।"

"मुझको इससे यही आशा थी।"

"एक अन्य भी समाचार है।"

"क्या ?"

"सोमा किसीके साथ भाग गई है।"

"यह भी आशा के अनुसार ही है, परन्तु वह सुखी वहां भी नहीं रहेगी।"

रूप हंसता रहा। राजकुमार ने अगले दिन अपनी योजना लिखकर लाने का वचन दिया और चला गया।

"राजकुमार के चले जाने पर सुन्दरी ने कहा, "हमको भापा जी से मिलना चाहिए।"

"किसलिए ?"

"इससे उनकी चिन्ता निवारण कर सकेंगे।"

"तो चलो।"

वे दोनों मोटर में सवार हो श्रीराम रोड पर जा पहुंचे। राम खाना खा रहा था। प्रबोध, दिति और कमल भी मेज पर बैठे थे। रोहिणी रसोईघर में थी और नौकर से खाना ठीक करवा रही थी।

राम ने रूप को देखा तो रोहिणी को आवाज़ दे दी। वह आई तो सुन्दरी ने पांव लागूं की और उसके पास बैठ गई। रसोइया खाना परसने लगा था। रूप और सुन्दरी के लिए भी खाना लग गया।

राम ने पूछ लिया, "कैसे आए हो?"

"यही सोमा के विषय में जानने और विचार करने के लिए कि दूसरों का क्या किया जाए।"

"प्रबोध के विवाह का प्रबन्ध तो हो गया है।" रोहिणी ने कह दिया, "सगाई की रस्म अगले सप्ताह हो जाएगी और फिर शीघ्र विवाह हो जाएगा। सोमा के लिए एक लड़का आज राजेश्वरी के साथ देखने गई थी। अब वही दिति के लिए निश्चय कर लेंगे।"

"मेरा विचार है भापा! यह सब जल्दी कर दिया जाए। मैं अपनी पूर्ण सम्पत्ति का एक ट्रस्ट बनाने वाला हूं और आपके तथा अपने खर्च के लिए रखकर शेष उस ट्रस्ट को दान कर देने वाला हूं।"

"किस काम के लिए ट्रस्ट बनाओगे?"

"राजकुमार को योजना बनाने के लिए कहा है।"

"यह ठीक है।"

रूप ने बात बदल दी। उसने प्रबोध से पूछ लिया, "तुमने अपनी पत्नी देखी है?"

"नहीं जी! देखी तो नहीं परन्तु बड़ी मां कहती है कि वह सुन्दर है, सुघर है।"

"तो तुमने स्वीकार कर ली है?"

"और कर ही क्या सकता हूं? मैं सोमा के साथ आने वाले शोच्चे की भांति साहसी तो हूं नहीं।"

रूप हंस पड़ा। हंसते हुए कहने लगा, "अच्छा भापा! जल्दी विवाह हो जाना चाहिए। मैं यह कोठी ट्रस्ट को दे रहा हूं।"

"तब तो ठीक है। हम भी गोवर्धनलाल के साथ उसके आश्रम में जा रहेंगे। क्यों रोहिणी? क्या कहती हो?"

"मैं बहुत प्रसन्न हूं इससे।"

इसके दो सप्ताह के भीतर ही प्रबोध और दिति का विवाह हो गया और

दोनों को पृथक्-पृथक् रहने के लिए मकान मिल गया। कमल प्रबोध के साथ रहने लगा। इसी काल में रूपकृष्ण ने कनाट प्लेस में चार मकान ले लिए और इनके स्थान पर एक भवन बनवाने का मानचित्र बनवा लिया। नीचे की मंजिल पर पढ़ने का कमरा था। ऊपर की मंजिल पर एक हाल, जिसमें एक सहस्र से ऊपर कुर्सियां लगी थीं, और पुस्तकालय के कमरे तीसरी मंजिल और चौथी मंजिल पर बनाने की योजना थी। सब मिलाकर एक बड़ा हाल, रीडिंग रूम और छोटी-मोटी सभाओं के लिए कमरे तथा पुस्तकालय के लिए बीस कमरे। यह था इमारत का नक्शा। चार मकान गिरा दिए गए और इनके स्थान पर इमारत का काम आरम्भ हो गया। रूप का यह स्वभाव था, जब कोई बात उसके मस्तिष्क में बैठ जाती, तब वह उसको पूरा किए बिना दम नहीं लेता था।

एक वर्ष में सब कुछ तैयार हो गया। लिखत-पढ़त हो गई। राजकुमार उस पुस्तकालय का अकेला ट्रस्टी बना दिया गया। उसके जीवन-काल के लिए उसको पांच सौ रुपया प्रतिमास कार्य के लिए भत्ते के रूप में दे दिया गया। लिखत में यह भी अधिकार राजकुमार को दिया गया कि वह अपने पीछे एक अथवा एक से अधिक अपने स्थानापन्न नियुक्त कर सके।

५

राजकुमार विचार करता था कि क्या कारण है जो समान परिस्थितियों में उत्पन्न और समान रूप में कार्य करते हुए भी व्यक्ति समान घटनाओं में भिन्न-भिन्न प्रतिक्रिया देते हैं। भूषण पर मुकदमा हुआ और वह जेलमुक्त हो गया। सुन्दरी जेल जाती-जाती बच गई। दोनों समान कर्म कर रहे थे। इस पर भी भूषण तो पतनोन्मुख हो गया और सुन्दरी न केवल स्वयं वैसे कार्य से बाहर हो गई, अपितु वह अपने साथी में भी विरक्तता उत्पन्न कर सकी। वह राम, रोहिणी, प्रबोध और सुभद्रा इत्यादि से मिलता रहता था।

भूषण को आश्रय मिला सुभद्रा के घर और सुन्दरी को राम के घर। दोनों अवस्थाओं में यौन-सम्बन्ध बना, परन्तु एक में सम्बन्ध वैमनस्य का कारण हुआ। मां-पुत्र में, भाई-बहिन में और श्वसुर-पतोहू में झगड़ा हुआ। और सब पृथक्-पृथक् होकर रहने लगे। दूसरी अवस्था में सुन्दरी ने राम को अपने माता-पिता तथा अन्य

सम्बन्धियों से मेल-मुलाकात की प्रेरणा दी।

'यह क्यों?' उसके विस्मय का ठिकाना न रहा, जब उसने एक दिन सुभद्रा और भूषण में भी जूत-पजार होती देखी। यह रूप तथा राम इत्यादि के हरिद्वार चले जाने के पीछे की बात है। एक दिन राजकुमार सुभद्रा की कोठी के बाहर से गुज़र रहा था कि वहां एक ट्रक खड़ा था और उसमें सामान लादा जा रहा था। राजकुमार को समझ आया कि ये लोग मकान बदल रहे हैं। उसने ट्रक वाले से पूछा, "यह सामान कहां जा रहा है?"

ड्राइवर ने उत्तर दिया, "मथुरा रोड पर ओखले के पास।"

"तो ये लोग वहां जा रहे हैं?"

"हां! साहब जा रहा है।"

"और उनकी पत्नी नहीं?"

"जी! वे यहां ही रहेंगी।"

राजकुमार इसका अर्थ समझने के लिए कोठी में चला गया। भूषण बरामदे में खड़ा था और सामान निकाला जा रहा था। भूषण ने राजकुमार को देखा तो प्रश्नभरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा। राजकुमार ने उसके इस प्रकार देखने का आशय समझ पूछ लिया, "चाची जी कहां हैं?"

"कुछ काम है उनसे?"

"कुछ काम है, जो चाचा जी से नहीं है।"

भूषण हंस पड़ा। उसकी हंसी में स्वाभाविक ध्वनि नहीं थी। इससे राजकुमार को विस्मय हुआ। भूषण को अपनी हंसी भी विलक्षण लगी तो वह एकदम गम्भीर हो कहने लगा, "बाज़ार गई हुई है।"

"और चाचा जी कहां जा रहे हैं?"

"मैंने अपना निवास उनसे पृथक् कर लिया है। वे यहां रहेंगी और मैं नये मकान में रहूंगा।"

"तो झगड़ा हो गया है?"

"यह मनुष्य का स्वभाव है। सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, ये मन के धर्म हैं।"

राजकुमार ने बात बदल दी, "चाची कब आने वाली है?"

"मैं क्या जानूं! मुझको बताकर नहीं गई।"

"कोठी के नौकर-चाकर किधर है?"

"तुम पूछने वाले कौन हो ?"

"चाचा जी महाराज ! नाराज़ होने की बात नहीं। मुझको चाची जी से काम है और मैं उनकी प्रतीक्षा करना चाहता हूं।"

"तो करो। मैं तो जा रहा हूं।"

सबसे अन्त में 'टेलीविजन सैट' नौकर लाया। उसको लेकर भूषण अपनी मोटर में बैठ गया और ट्रक वालों को आने के लिए कह मोटर चलाकर ले गया।

राजकुमार अभी भी बरामदे में खड़ा था। कोठी में कोई नहीं था। एक चौकीदार और एक चपरासी तो वहां सदा ही रहा करते थे। वे भी नहीं थे। राजकुमार विस्मय करता हुआ सुभद्रा के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसको आश्चर्य था कि भूषण कोठी को खुली और बिना किसी की देख-रेख में छोड़ गया था। उसको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि वह वहां से कुछ चोरी कर भागा है। उसके मन में आया कि पुलिस में सूचना भेज दे। बरामदे में रखे टेलीफोन का चोगा उठा, वह पुलिस का नम्बर घुमाने ही लगा था कि उसके मन में विचार आया कि ज़रा भीतर नज़र डालकर देख ले। उसने चोगा फिर रख दिया और कोठी में चला गया। सब कमरे खुले थे। केवल एक कमरा, जो प्रायः शयनागार के रूप में प्रयोग होता था, बन्द था।

उसने धक्का देकर किवाड़ खोलना चाहा तो वह खुल गया। कमरे में अंधेरा था। उसने बिजली जलाई। पलंग पर सुभद्रा हाथ-पांव बांधे हुए और मुख में कपड़ा ठूंसे हुए पड़ी थी।

राजकुमार ने देखा—सुभद्रा के कई स्थान पर चोटें आई हुई थीं। वह राजकुमार की ओर दया-याचना के भाव से देख रही थी। राजकुमार ने उसके मुख से कपड़ा निकाला और उसके हाथ-पांव खोल दिए। सुभद्रा रोने लगी थी।

"क्या हुआ है चाची ?"

"भूषण गया ?"

"हां।"

"सब कुछ लूटकर ले गया है।"

"चाची ! ईश्वर का धन्यवाद करो कि तुम्हारी हत्या नहीं कर गया और फिर मैं समय पर आ गया हूं। यदि मैं न आता तो तुम अभी भी यहां पड़ी रहतीं।"

"राज ! एक गिलास जल ले आओ।" सुभद्रा इस समय उठकर पलंग पर

बैठ गई।

राजकुमार गया और रसोईघर में से गिलास ले भर लाया। सुभद्रा ने जल पिया और बोली, "तुम ठीक कहते हो, मुझको तुम्हारा धन्यवाद करना चाहिए। कदाचित् रात-भर इसी प्रकार पड़ी रहती तो मर जाती।"

"परन्तु मेरा यहां आना तो अनायास ही हो गया है न ?"

"कुछ भी हो। तुमने जान बचा ली है।"

"कोठी के नौकर कहां हैं ?"

"वह उनको भी साथ ले गया है। उनको पहले ही मोटर में भेज दिया था। जब वे चले गए तो उसने मुझको पीटना आरम्भ कर दिया। मैंने बचने का यत्न किया तो मेरे मुख में रूमाल ठूंस मेरी आवाज़ बन्द कर, मेरे हाथ-पांव बांध दिए। पीछे मुख पर कपड़ा बांध कमरे का द्वार बन्द कर चला गया। फिर उसने साथ के कमरे में, जो हमारा स्टोर रूम था, जाकर चावियां लगा सेफ खोला और जो कुछ भी वहां था, ले गया है। कुछ फर्नीचर भी यहां से ले गया मालूम होता है। सामान जाने का शब्द सुनती रही हूं।"

"चाची ! पुलिस में रिपोर्ट लिखवाओगी ?"

वह गम्भीर हो गई। फिर राजकुमार का मुख देखती रह गई। राज ने पुनः कहा, "पुलिस को टेलीफोन कर दूं ?"

"नहीं।" उसने कहा।

राजकुमार विस्मय में उसका मुख देखने लगा, तो उसने कह दिया, "मैं जांच-पड़ताल में बयान नहीं देना चाहती। बहुत बदनामी होगी। प्रबोध को टेलीफोन कर दो।"

राजकुमार उठा और बाहर टेलीफोन के पास जाकर प्रबोध का नम्बर घुमाने लगा। सुभद्रा उठ रसोईघर में चली गई और चाय के लिए इलैक्ट्रिक जग में पानी गरम करने के लिए स्विच खोल आई।

प्रबोध बोल रहा था। राजकुमार ने वहां की अवस्था का वर्णन किया और बताया कि वह कैसे यहां आया है और यहां क्या देखा है। अन्त में कहा, "चाची चाहती हैं कि तुम जरा यहां आ जाओ।"

"क्या करूंगा आकर ?"

"मां अकेली है। भयभीत है। घायल भी है और मरती-मरती बची है।"

"उसको कह दो कि पुलिस में रिपोर्ट कर दे और हस्पताल में चली जाए।"

राजकुमार ने सुभद्रा को प्रबोध का उत्तर सुनाया तो वह डबडबाई आंखों से कहने लगी, "राज! मुझको आज रात तो अपने घर ले चलो।"

"और यह कोठी?"

"ऐसा करो, टैक्सी मंगवा लो। मैं तब तक सब कमरों को ताले लगा तैयार हो जाती हूं।"

राजकुमार टैक्सी-स्टैंड पर टेलीफोन करने लगा तो सुभद्रा चाय बनाने चली गई। जब तक टैक्सी आई, वह चाय बनाकर ले आई। दोनों ने चाय पी और ताले लगा वह राजकुमार के घर जा पहुंची।

अगले दिन कोठी के नौकर वापस कोठी में आए वहां बैठ प्रतीक्षा करने लगे। ग्यारह बजे के लगभग सुभद्रा वहां पहुंची तो उनको बैठे देख पूछने लगी, "कहां गए थे तुम सब?"

"साहब ने कहा था कि आप ओखला वाली कोठी में जाने वाली हैं। हम मोटर में सवार हो, वहां चले गए। पीछे साहब आए तो कहने लगे कि आप नहीं आई। प्रातःकाल उन्होंने हमको वापस भेज दिया है। कहा है कि हम आपके साथ ही जा सकते हैं।"

सुभद्रा अब अकेली उस कोठी में रहने लगी थी। अब उस सैकड़ों सदस्यों के परिवार में केवल राजकुमार और राजेश्वरी ही उससे बोलते थे। वे कभी उसका सुख-समाचार लेने आ जाते थे। शेष कोई भी उससे सम्बन्ध नहीं रखता था।

एक दिन पुस्तकालय में प्रबोध राजकुमार से मिलने आया। राज उसको अपने कमरे में लेकर चला गया। वहां बैठा राजकुमार ने पूछ लिया, "कैसे आए हो?"

"मैं भूषण ताया से मिलने गया था।"

"किसलिए?"

"यह जानने के लिए कि उसने मां को क्यों छोड़ दिया है।"

"तो क्या कहता था?"

"कहता था कि वह बदकार औरत है।"

"तो फिर?"

"मैं तुमसे पूछने आया था, क्या विचार है तुम्हारा?"

"भला मुझसे क्यों ?"

"तुम वहां जाते रहते हो, इसलिए ?"

"मैंने उसमें ऐसी कोई खराबी नहीं देखी जो भूषण में नहीं है।"

"मैं उसका भूषण से मुकाबिला नहीं करना चाहता। मैं तो साधारण रूप में जानना चाहता हूं।"

"जानते हो, तुम्हारा बाप कौन है ?"

"जानता हूं।"

"वह भूषण नहीं है न ?"

"नहीं।"

"तो फिर मुझसे क्या पूछते हो ?"

प्रबोध उठकर चला गया। उसने जाते हुए नमस्कार भी नहीं किया। राजकुमार के मन में आया, 'यह कैसा मूर्ख है !' फिर मन में सोचता रहा, 'जैसी मां है, वैसा ही पुत्र है।'

इस घटना के एक सप्ताह के अन्दर ही कोठी में रात को सोए हुए सुभद्रा की हत्या हो गई। राजकुमार को सन्देह था कि हत्या प्रबोध ने की है अथवा कराई है। परन्तु पुलिस जांच कर रही थी और किसी परिणाम पर नहीं पहुंच रही थी। इससे वह चुप था।

सुभद्रा के संस्कार के समय केवल राजेश्वरी और राजकुमार ही वहां थे। अन्य कोई नहीं आया था।

भूषण से वेंगर पर एक दिन भेंट हो गई। राजकुमार के पास वह स्वयं ही आकर बैठ गया। राजकुमार ने उसकी ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा तो वह पूछने लगा, "सुभद्रा की हत्या की जांच में क्या हुआ है ?"

"मुझको विदित नहीं।"

"तो तुम इसमें रुचि नहीं ले रहे ?"

"नहीं ?"

"क्यों ?"

"दिल्ली में रोज़ तीन-चार हत्याएं हो जाती हैं। मेरे लिए यह हत्या उनसे किसी प्रकार भी विलक्षण नहीं है।"

"वह तुम्हारी चाची थी।"

"हां ! परन्तु मैं उसका न तो उत्तराधिकारी हूं न ही उसका संरक्षक था।"

"मैं जानता हूं कि हत्या किसने की है।"

'सन्देह तो मुझको भी है।"

"भला किसपर सन्देह है ?"

"भूषण ताया पर।"

"बहुत बदतमीज़ हो।"

"मन में तो आया था कि पुलिस में रिपोर्ट लिखा दूं, परन्तु यह विचार कर चुप हूं कि घर की गन्दगी सबके सामने खोलने में क्या लाभ ?"

"परन्तु मैंने तो अपनी बात पुलिस में लिख भेजी थी, मगर ऐसा प्रतीत होता है कि प्रबोध ने कुछ ले-देकर बात ठण्डी कर दी है।"

"तो आपका सन्देह प्रबोध पर है ?"

"हां।"

राजकुमार चुप रहा। भूषण ने कहा, "मैं विचार कर रहा हूं कि चीफ कमिश्नर को लिखूं और उसको धमकी दूं कि यदि वह जांच नहीं कराएगा तो मैं पंडित नेहरू जी को लिखूंगा।"

राजकुमार चुप रहा। इसपर भूषण ने बैरा को चाय लाने के लिए कह दिया। राजकुमार पी चुका था। बैरा उसका 'बिल' लाया तो उसने दाम दे दिया और जाने के लिए उठने लगा तो भूषण ने कहा, "मैं समझता हूं कि इससे तुम्हारे मन का संशय दूर हो गया होगा।"

"इससे तो सन्देह विश्वास में बदल गया है।"

"मालूम होता है कि तुम भी प्रबोध के साथ इस अपराध के भागीदार हो।"

राजकुमार मुस्कराया और चला गया। बात यहां ही समाप्त नहीं हुई। सुभद्रा की हत्या को एक मास भी नहीं हुआ था कि भूषण की कोठी में डाका पड़ा और डाकू सब कुछ लूटकर ले गए और साथ ही भूषण की हत्या कर गए।

राजकुमार विचार करता था कि क्या यह भी प्रबोध का काम है ?

६

सुभद्रा और भूषण की हत्या का समाचार हरिद्वार राम इत्यादि को भी मिला।

वहां से राम ने राजकुमार को लिखा, "बेटा राज ! दिल्ली के एक परिचित ने कल परिवार में हुई दो हत्याओं का समाचार सुनाया है। सुनकर भारी शोक हुआ है। रूप का यह अनुमान है कि सुभद्रा की हत्या भूषण ने की है और भूषण की हत्या प्रबोध ने।

"ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी चतुराई के कारण अथवा अपने धन के प्रभाव से प्रबोध पर आंच नहीं आई। कुछ भी हो तुम प्रबोध से मिलना और कहना कि उसकी मां के मर जाने का मुझको और रोहिणी को भारी शोक है।

"सुभद्रा रोहिणी से अकारण सदा द्वेष करती रही थी। इसपर भी उसकी इस छोटी अवस्था में हत्या की बात सुन उसको भारी शोक हुआ है। उसने उसकी इस दुर्दशा पर दो आंसू भी बहाए हैं।

"रूप के विषय में प्रबोध को मत बताना। रूप सुभद्रा इत्यादि सबको भूल जाने का यत्न कर रहा है। उसने कह रखा है कि हम उसके सामने सुभद्रा अथवा उसकी सन्तान का कभी नाम न लें।

"तुम अपने कार्य की प्रगति लिखो। क्या संख्या हो गई है पुस्तकों की ? कितनी पत्र-पत्रिकाएं वाचनालय में आती हैं ? कितने लोग वाचनालय और पुस्तकालय का प्रयोग करने आते हैं ? रूप और सुन्दरी को इस विषय में जानने की रुचि बनी रहती है।"

पत्र मिलने के कुछ दिन पीछे राजकुमार ने भापा को उत्तर लिख दिया। उसने लिखा :

"भापा जी के चरण-कमलों में राजकुमार, राजेश्वरी और संतोष की श्रद्धा-युक्त चरण वन्दना हो। चाचा तथा चाची सुन्दरी को भी। हमारा सबका प्रणाम मिले।

"जहां तक पुस्तकालय का सम्बन्ध है, इस समय वाचनालय में दो सौ पत्र-पत्रिकाएं सदा पढ़ने के लिए पड़ी रहती हैं। तीन चपरासी और चौकीदार उनकी देखभाल और रक्षा के लिए दिन में आठ घण्टे वहां खड़े रहते हैं। दिल्ली, विशेष रूप में नई दिल्ली, में पत्रिकाओं एवं तस्वीरों वाली पत्रिकाओं की चोरी करने वाले बहुत घूमते हैं। पढ़े-लिखे और तीन-तीन, चार-चार सौ का सूट पहनने वाले ऐसी चोरी अधिक करते हैं।

"इस समय पुस्तकालय में चालीस हजार से ऊपर पुस्तकें हैं। नियम से मैं दो सहस्र प्रति मास की पुस्तकें मंगवा रहा हूं। मुझको कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि

पुस्तकालय को किसी दूसरी इमारत में खोलना पड़ेगा।"

"वाचनालय में सब आने वालों के हस्ताक्षर लिए जाते हैं। दिन में पांच सौ से ऊपर लोग वहां आते हैं स्थानीय तथा देशीय दैनिक पत्रों की चार-चार प्रतियां आती हैं और लोग पढ़ते हैं।

"पुस्तकालय में नियम से आने वालों के लिए हमने मेज़-कुर्सी पृथक् में देने का प्रबन्ध किया हुआ है। उसके लिए उनको पुस्तकालय-अध्यक्ष से पहले से प्रबन्ध करना होता है। दस रुपये प्रतिमास मेज़-कुर्सी का भाड़ा देना पड़ता है। ऐसे पढ़ने वालों की संख्या आठ-नौ बनी रहती है। नियम यह है कि भाड़ा अग्रिम देना पड़ता है। और महीने में कम से कम पंद्रह दिन उसका प्रयोग करना पड़ता है। नहीं तो भाड़ा देकर भी मेज़-कुर्सी नहीं दी जाती।

"पुस्तकें हम घर के लिए नहीं देते। वहां बैठकर पढ़ने वालों के लिए ही हैं। ऐसे पढ़ने वालों की संख्या नित्य की डेढ़-दो सौ तक बनी रहती है।

"पुस्तकालय का भवन कदाचित् ही, कोई दिन हो, जब खाली रहता हो। कभी-कभी तो दो-दो सभाएं तथा गोष्ठियां नित्य होती हैं। हमने दिल्ली के विचार से भाड़ा बहुत कम रखा हुआ है। बड़े हाल का बीस रुपया प्रति घण्टा के हिसाब से और छोटी सभाओं के लिए प्रति कमरे का पांच रुपये प्रति घण्टा के हिसाब से। नई दिल्ली में कुछ अन्य भवन भी हैं जो भाड़े पर मिलते हैं। उनके भाड़े बहुत अधिक हैं और लोग हमारे हाल को पसन्द करते हैं।"

"प्रबोध को मैं आपका शोक प्रकट करने गया था। आपके अनुमान का प्रमाण मैं वहां देख आया हूं। एक टेलीविजन सैट जो भूषण सुभद्रा के घर से जाते समय उठाकर ले गया था, वह उस दिन प्रबोध के घर में लगा देख आया हूं। मैंने प्रबोध से पूछ लिया, 'यह सैट नया खरीदा है?' तो कहने लगा, 'नहीं। यह मां के फरनीचर में से मिला है?'

"मैं चुप रहा। परन्तु मुझको विश्वास है कि भूषण के घर की लूट में से प्रबोध को मिला है। खैर, मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं था।

"प्रबोध ने यहां घटी पूर्ण दुर्घटना का दोष आप पर लगाया है। उसने कहा है कि आपने दया कर, भूषण ताया को कोठी में रहने का स्थान दिया था और उसी से यह सब दुर्भाग्य एक शृंखला में घटा है।

"परन्तु भापा! ये विकृत मन के उद्गार हैं और इसका परिणाम भी अच्छा

होने वाला नहीं ।"

राजकुमार के घर एक लड़का और हुआ । बड़े का नाम मणिन्द्र और छोटे का नाम देवेन्द्र रखा था । राजेश्वरी इस प्रकार अपने परिवार की वृद्धि पर बहुत प्रसन्न थी । राजकुमार की छोटी बहिन प्रज्ञा ने विवाह नहीं किया । और वह अपना पूर्ण समय साहित्य-अध्ययन और कला के अभ्यास में लगा रही थी । उसके लिए तो रूप का पुस्तकालय एक सौभाग्य की बात हुई थी । वह आठ घण्टे वहां बैठ, अपना पढ़ने और लिखने का काम करती थी ।

दो वर्ष में उसने एक पुस्तक लिखी 'राम आर्य संस्कृति के प्रतीक' । वह पुस्तक राजकुमार ने संशोधन कर छपवा दी थी । और उसके बेचने का भी प्रबन्ध कर दिया था । प्रज्ञा संस्कृत और हिन्दी की एक पडिता थी और उसकी इस पुस्तक ने उसको साहित्यकारों की श्रेणी में बैठा दिया था ।

राजकुमार स्वयं भी लेखन-कार्य करने लगा था । वह नित्य चार घण्टे अपने पठन-पाठन पर व्यय करने लगा था । उसने कई वर्ष के प्रयत्न से 'युद्ध और शान्ति' एक पुस्तक लिखी थी । इस पुस्तक में अनेक युद्धों की विवेचनात्मक व्याख्या लिखी और पुस्तक के अन्त में उसका निष्कर्ष था कि युद्ध होते हैं आसुरी प्रवृत्ति वाले मनुष्यों के करने से । युद्धों से उपराम होते हैं, देवता लोग और शान्ति की इच्छा में वे अपने को दुर्बल कर लेते हैं । इस दुर्बलता को देख आसुरी प्रवृत्ति के लोग साहस पकड़ लेते हैं और पुनः युद्ध आरम्भ कर देते हैं ।

इस स्वराज्य-काल में भारत अपने को शान्ति का दूत प्रकट कर रहा था । इस काल में भारत की जीवन-मीमांसा थी—युद्ध से युद्ध उत्पन्न होते हैं अतः युद्ध शान्ति को ला नहीं सकता । शान्ति से ही युद्धों को शान्त किया जा सकता है । इस जीवन-मीमांसा पर भारत आचरण कर रहा था ।

अतः राजकुमार की 'युद्ध और शान्ति' पुस्तक पर सरकारी वर्ग ने नाक ही चढ़ाई थी।

इस प्रकार रूपकृष्ण द्वारा स्थापित पुस्तकालय धीरे-धीरे देश-व्यापी ख्याति प्राप्त कर रहा था । एक पुस्तकालय था, वाचनालय था । यह अन्वेषण-केन्द्र बन रहा था । यह साहित्य और कला का केन्द्र हो रहा था और प्रकाशन-संस्था के रूप में पढ़ी-लिखी जनता के समक्ष आ रहा था ।

एक दिन राजकुमार और प्रज्ञा सायंकाल पुस्तकालय बंद होने पर पुस्तकालय

की इमारत के बाहर फुटपाथ पर खड़े थे और टैक्सी स्टैंड की ओर जा रहे थे कि उनके देखते-देखते एक दुर्घटना हो गई। एक भीख मांगने वाली स्त्री दो मोटर गाड़ियों की लपेट में आ गई और बुरी भांति कुचली गई। एक मोटर ड्राइवर, जो कदाचित् अधिक दोषी था, भाग गया और दूसरे गाड़ी वाले ने गाड़ी खड़ी की और उस अचेत औरत को मोटर में ले जाने लगा तो राजकुमार देखने के लिए आगे बढ़ा कि वह कौन औरत है।

उसने देखा कि वह औरत सोमारानी है। साधारण वस्त्रों में वह पैदल खड़ी वहां क्या कर रही थी? राजकुमार समझ नहीं सका। उसके साथ कोई आदमी नहीं था। इस कारण राजकुमार ने स्वयं साथ जाना ठीक समझा, प्रज्ञा को कहा, "तुम घर चलो। मैं इसको हस्पताल ले जा रहा हूं।" वह भी उसी मोटर में बैठ गया और इरविन हस्पताल के 'कैजुअल्टी' वार्ड में ले गया। वहां पुलिस वाले आ गए और रिपोर्ट लिख ली गई।

सोमारानी की चिकित्सा आरम्भ हो गई। रात के बारह बजे उसकी चेतना लौटी। तब उसको हस्पताल में प्रवेश दिलवा राजकुमार घर लौटा।

राजेश्वरी विस्मय कर रही थी कि वह दिल्ली में आई और किसीसे मिली भी नहीं। उसको सन्देह था कि उसके घर वाले ने उसको घर से निकाल दिया है और वह दिल्ली में एक धनी-मानी स्त्री की भांति सुख-चैन का जीवन व्यतीत कर रही है।

"परन्तु मां!" राजकुमार का कहना था, "उसके कपड़े बहुत ही साधारण थे। साधारण सूती धोती और चोली तथा बहुत ही घिसे हुए जूते पहने थी। शृंगार इत्यादि भी किया हुआ नहीं था।"

अगले दिन राजकुमार हस्पताल में पता करने गया तो सोमा सचेत और सतर्क वहां बैठी-बैठी प्रातः की चाय ले रही थी। चाय उसने नर्स से कहकर दो आने की सड़क पर से मंगवा ली थी।

राजकुमार को देख, सोमारानी ने पूछ लिया, "भापा! रात तुम ही यहां थे?"

"हां!"

"मैं उस समय अर्धचेतनावस्था में थी। मेरा विचार था कि तुम ही थे। अभी-अभी पुलिस वाले आए थे। वे मेरा पता पूछ गए हैं। मैंने अपने पिता का नाम

और पता बताया था। भैया प्रबोध का नाम भी बताया है, परन्तु पता नहीं जानती थी। अब पिता जी के मकान पर तो एक बहुत बड़ा मकान बना है और वहां पुस्तकालय खुला है।

"हां। वह तुम्हारे पिता ने दान-दक्षिणा में दिए धन से बनाया है।"

"सत्य ? और वे आप कहां हैं ?"

"आजकल हरिद्वार में रहते हैं।"

सोमा खिल-खिलाकर हंस पड़ी।

"किस.. लए हंसी हो सोमरानी ?"

"वे भी नित्य गंगा-स्नान किया करते थे। ठाकुर जी को भोग लगाते थे और आधा घण्टा भर शिव-स्तोत्र पढ़ा करते थे।"

"तो क्या अब······?"

"अब भी करते होंगे। मैं जानती नहीं।"

"तुम दिल्ली में क्या कर रही थीं ?"

"अंकिचन हो, पिता जी के आश्रय में रहने आई थी। उनके कनाट प्लेट में निवास-स्थान पर पहुंची और यहां पर नया मकान और उसमें चहल-पहल देख, विस्मय कर रही थी कि दो मोटरों के बीच में आ गई। अभी कुछ अन्न-अनाज और गन्दा करना है, जो बच गई हूं।"

"अब तो तुमको यहां से छुट्टी मिल जानी चाहिए।"

"अभी डाक्टर आने वाला है। उसके आने पर छुट्टी मिल जाएगी।"

७

सोमारानी विश्वम्भरनाथ से अस्वीकार होने पर जीवन से निराश सुख में अपने-आपको भूल जाना चाहती थी। जब प्रबोध के कहने पर सम्पत्ति का बंटवारा हुआ तो उसको साढ़े सात लाख रुपया मिल गया और लगभग पैंतीस सौ रुपया मासिक की आय होने लगी और वह सिनेमा, नाटकों, रेस्टरां इत्यादि में सुख की उपलब्धि में घूमने लगी। रुद्रमणी ने उसको कब और कहां देखा था, उसे पता नहीं चला। उसने बताया भी नहीं; परन्तु उसका इससे प्रथम परिचय प्लाज़ा सिनेमा में हुआ। दोनों साथ-साथ बैठे थे। और दोनों में ही बातचीत होने लगी, "यह

...क बर्ड का अभिनय बहुत सुन्दर बन रहा है।" रुद्रमणी का कहना था।

"मुझको तो फ्लोरा का अभिनय अधिक प्राकृतिक और श्रेष्ठ प्रतीत हुआ है।" सोमा का उत्तर था।

इसपर दोनों अभी अपने-अपने कथन की विवेचना ही कर रहे थे कि चित्र चलने लगा, अतः शेष विवेचना खेल के पश्चात् आरम्भ हुई। दोनों हाल से बाहर निकल रहे थे। रुद्रमणी ने साथ चलते हुए कहा, "आपकी फ्लोरा के अभिनय पर विवेचना अभी समाप्त नहीं हुई। हां, तो क्या कह रही थीं आप?"

"यहां चलते-चलते में बात नहीं हो सकती। आइए, कहीं चाय पान लेंगे और बात भी कर लेंगे।"

"परन्तु..." रुद्रमणी जेब पर हाथ रख चुप कर गया।

"जेब में दाम नहीं है? यही न?"

"हां, आज तो कुछ ऐसी ही बात है।"

"निमंत्रण तो मैं आपको दे रही हूं। आइए।"

दोनों वेंगर पर जा पहुंचे। चाय पीते हुए बहुत बातें हुईं। परिचय हो गया। रुद्रमणी ने बातों ही बातों में बता दिया, "मैं श्री गोपालशंकर पांडे का लड़का हूं। पिता जी का देहान्त हो गया है और मैं गम गलत करने के लिए भ्रमण कर रहा हूं। एकाएक आज मेरा पर्स चोरी हो गया है। जेब में पांच रुपये थे। इससे मां को रुपये के लिए टेलीग्राम दे दिया है और अढ़ाई रुपये का सिनेमा देख लिया था। बस से वापस जाने का भाड़ा अभी जेब में है।"

"कहां ठहरे हैं?"

"मेडन होटल में।"

इस होटल के नाम-भर से दिमाग पर सुखद प्रभाव हुआ था। चाय के पश्चात् वह उसको टैक्सी में चढ़ा होटल में छोड़ने गई तो वह उसके कमरे तक पहुंच गई। वहां बैठ, बातें होती रहीं। रुद्रमणी ने सोमारानी को भोजन का निमंत्रण दे दिया। वह मान गई और खाने का बिल देने लगी तो रुद्रमणी ने न कर दी। कह दिया, "कल तक रुपया अवश्य आ जाएगा। मैं सब बिल चुका दूंगा।"

"फिर भी आप कुछ तो जेब में रख सकते हैं। रुपया आने पर चुका दीजिएगा।" इतना कह सोमा ने एक सौ रुपये का नोट उसके सामने मेज़ पर रख दिया।

अगले दिन सम्बन्ध घनिष्ठ होने लगे और विवाह की बातें होने लगीं। इस वार्तालाप में रुद्रमणी ने अपने को क्वारा प्रकट किया और सोमारानी से विवाह का प्रस्ताव कर दिया। सोमा उसको भापा के पास ले गई और सोमा भापा से रूठ कोठी के बाहर निकल आई। कोठी के बाहर आ रुद्रमणी ने पूछा, "अब किधर जाओगी?"

"आपके साथ।"

"मैं होटल में तो तुमको ले जा नहीं सकता और मां के रुपये अभी तक आए नहीं।"

सोमा ने कहा, "आपके होटल में एक पृथक् कमरा मिल जाए तो रात वहां काट लूंगी। कल प्रातः होटल का बिल देकर बनारस चल देंगे। वहां विवाह कर रहेंगे।"

"ठीक है। मगर मुझको तुमसे रुपया लेते हुए लज्जा आती है।"

"जब हमारा विवाह होना है तो फिर मेरा और तेरा का भेदभाव क्यों?"

बस बात बन गई। मेडन होटल में कमरा मिल गया। सोमा वहां रही। अगले दिन उसने अपने बैंक में से दस सहस्र रुपया निकलवाया और होटल का दोनों का बिल चुकता कर बनारस चले गए।

बनारस में एक होटल में सोमारानी को ठहरा, रुद्रमणी अपनी मां से मिलने चला गया और दो घण्टे में एक प्रौढ़ावस्था के व्यक्ति और एक स्त्री के साथ वहां आ गया। उसने स्त्री को मां कहकर परिचय दिया और पुरुष को चाचा कहकर।

उसी सायंकाल एक मन्दिर में विवाह हुआ। विवाह में बीस स्त्री-पुरुष उपस्थित थे और एक बहुत बड़े मकान में दम्पति चले गए। मकान नया था। चार-पांच नौकर थे और एक कमरे में रुद्रमणी की मां थी।

कई दिन के पश्चात् उस स्त्री ने बताया कि वह रुद्रमणी की रिश्ते में मौसी है। उसने उसका पालन-पोषण किया है, इससे वह उसको मां मानता है। वैसे इसके माता-पिता का देहान्त, जब यह अभी शिशु ही था, हो गया था। वे एक गांव के रहने वाले थे।

रुद्रमणी का काम जुआ खेलना था। अतः जब जीत जाता था तो सैर-सपाटे लगाता था और जब हार जाता था तो ढाबे से चार आने की रोटी खाकर पेट भर लेता था।